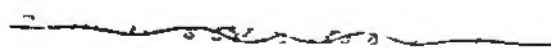
अनुक्रमणिका.



॥ श्री महावीरस्वामीने नमः ।

॥ प्रकरणमाला ॥

॥ जीवविचार प्रकरण पहेलुं. ॥

ग्रंथकर्त्ता मंगळाचरणपूर्वक प्रयोजन सूचवे छे.

भुवणपईवं वीरं, नमिऊण भणामि अबुह बोहत्थं ॥
जीवसरुवं किंचिवि, जह भणियं पुव्वसूरीहिं ॥ १ ॥

शब्दार्थ—त्रणभुवनमां दीवा समान श्री वीरप्रभुने नमस्कार करीने जेम पूर्वना आचार्योए कह्युं छे तेम अज्ञानि जीवोने बोध थवाने अर्थे कांइक पण जीवनुं स्वरूप हुं कहुं छुं. ॥ १ ॥

हवे जीवना भेदो कहे छे.

जीवा मुत्ता संसा-रिणो य तस थावरा य संसारी ॥
पुढवि जल जलण वाऊ वणस्सई थावरा नेआ ॥२॥

शब्दार्थ—जीवो बे प्रकारना छे एक मुक्तिना अने बीजा संसारी, संसारी जीवो बे प्रकारनां एक त्रस अने बीजा स्थावर. पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वाउवाय अने वनस्पतिकाय ए पांच स्थावर जाणवा. ॥ २ ॥

हवे पृथ्वीकायना भेदो कहे छे

फलिहमणिरयणविद्दुम ॥ हिंगुलहरियालमणसिलरसिंदा
कणगाइधाउ सेढी, वन्नि अरणेट्टय पलेवा ॥ ३ ॥

अब्भय तूरी ऊसं, मट्टी पाहाणजाइउ णेगा ॥
सोवीरंजण लूणा–इ पुढविभेआइ इच्चाई ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–स्फटिक, मणि, रत्न, प्रवालां, हिंगलो, हरताल, मणसिल, पारो, सोनादि सात धातुओ, खडी, रमजी, पाषाणनी साथे मलेली धोली माटी, पारेवो पाषाण, पांच वर्णनो अबरख, तेजंतुरी, खारीमाटी, माटी, अनेक पाषाणनी जातियो, सुरमो अने सिंधव आदि, इत्यादि पृथ्वीकायना भेदो जाणवा. ४

हवे अप्कायना भेदो कहे छे.

भोमंतरिक्खमुदगं, उसा हिम करग हरितणू महिआ॥
हुंति घणोदहिमाई, भेया णेगा य आउस्स ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–पृथ्वीनुं पाणि, आकाशनुं पाणि, उसनुं पाणि, हिमनुं पाणि, करानुं पाणि, लीला घास उपरनुं पाणि, धुवरनुं पाणि अने घनोदधिनुं पाणि, इत्यादि अप्कायना अनेक भेदो होय छे. ५

हवे अग्निकाय जीवोना भेदो कहे छे.

इंगालजालमुम्मुर–उक्कासणिकणगविज्जुमाईआ ॥
अगणिजिआणं भेआ, नायव्वा निउणवुद्धीए ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–अंगारनो अग्नि, जालनो अग्नि, भरसाडनो अग्नि, उल्कापातनो अग्नि, वज्रनो अग्नि, कणियानो अग्नि अने विजलीनो अग्नि, इत्यादि अग्निकाय (तेउकाय) जीवोना भेदो सूक्ष्म बुद्धिथी जाणवा. ॥ ६ ॥

हवे वायुकायना भेदो कहे छे

उब्भामगउक्कलिया, मंडलिमहसुद्धगुंजवाया य ॥
घणतणुवायाईया, भेया खलु वाउकायस्स ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–उद्भ्रामकवायु, उत्कलिकवायु, मंडलिवायु, महावायु, शुद्धवायु, गुंजारव करतो वायु अने घनवायु तथा तनवायु

विगेरे वायुकायना भेदो निश्चे जाणवा. ॥ ७ ॥

हवे वनस्पति कायना भेदो कहे छे.

साहारणपत्तेया, वणस्सइजीवा दुहा सुए नणिआ ॥
जेसिमणंताणं तणु, एगा साहारणा तेऊ ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—साधारण अने प्रत्येक एवा वनस्पतिकाय जीवोना बे भेदो सूत्रमां कह्या छे. तेमां जे अनंत जीवोनुं एक शरीर होय ते साधारण जाणवा. ॥ ८ ॥

हवे साधारण वनस्पतिकायना भेदो कहे छे.

कंदा अंकुरकिसलय पणगा सेवाल जूमिफोडा य ॥
अल्लतियगज्जमो—त्थ वत्थुला थेगपल्लंका ॥ ९ ॥

शब्दार्थ—सूरण विगेरे सर्व जातिनां कंद, अंकुरा, कुंपलो, पांचवर्णनी लीलफुल, सेवाल, बीलाडीना टोप अने त्रण जातनुं आडु, गाजर, मोथ, वथुलो, थेक, पल्लंकानी भाजी. ॥ ९ ॥

कोमलफलं च सवं, गूढसिराइ सिणाइपत्ताइं ॥
थोहरिकुंआरिगुग्गुलि—गलोयपमुहा य छिन्नरुहा १०

शब्दार्थ—वली सर्व जातिनां कोमल फल, जेनो गलमलो, नसो, सांधो प्रगट न देखातां होय ते, शण विगेरेनां पांदडां, सर्व जातनो थोर, गुगल, गलो ए विगेरे जे छेद्यां छतां फरी उगे ते. १०

इच्चाइणो अणेगे, हवंति भेया अणंतकायाणं ॥
तेसिं परिजाणणत्थं, लरकणमेयं सुए नणियं ॥११॥

शब्दार्थ—इत्यादि अनंतकाय जीवोना अनेक भेदो होय छे. तेमने जाणवा माटे आ नीचे लखेलुं लक्षण सूत्रमां कह्युं छे. ११

हवे अनंतकाय वनस्पति जीवोनुं लक्षण कहे छे.

गूढसिरसंधिपवं, समभंगमहीरुगं च छिन्नरुहं ॥
साहारणं सरीरं, तविवरीयं च पत्तेयं ॥ १२ ॥

शब्दार्थ–जेनां कणसला, सांधा के गांठ्यो न देखाती होय, भागी नाखवाथी जेना सरखा बे भाग थता होय, जे रेसा विनाना होय, तथा जे छेदीने वावीएतो पण फरीने उगे ते साधारण वनस्पति कायनां शरीर कहेवाय अने तेनाथी विपरीत लक्षणवाली वनस्पति होय ते प्रत्येक जाणवी. ॥ १२ ॥

हवे प्रत्येक वनस्पतिकायनुं लक्षण कहे छे.

एगशरीरे एगो, जीवो जेसिं तु ते य पत्तेया ॥
फलफूलछल्लिकठ्ठा, मूलगपत्ताणि बीयाणि ॥ १३ ॥

शब्दार्थ–वली जेमनां एक शरीरने विषे एक जीव होय ते प्रत्येक जाणवा. ते प्रत्येक वनस्पति कायना सात भेद छे. सर्व जातिनां फल, फुल, छाल, लाकडां, मूल, पांदडां अने बीज ए सर्व प्रत्येक वनस्पतिकाय जाणवा. ॥ १३ ॥

हवे पांच स्थावर सूक्ष्मनुं वर्णन करे छे.

पत्तेयतरु मुत्तं, पंचवि पुढवाइणो सयललोए ॥
सुहुमा हवंति नियमा, अंतमुहुत्ताउ अद्दिस्सा ॥१४॥

शब्दार्थ–प्रत्येक वनस्पतिकायने मूकीने चौद राजलोकने विषे सूक्ष्म एवा पांचे पृथ्वीकायादि निश्चे अंतर्मुहूर्त्तनां आयुष्यवाला अने अदृश्य (चर्मचक्षुथी न देखी शकाय तेवा) होयछे.

हवे बे इंद्रिय जीवोना भेद कहे छे.

संखकवड्डय गंडुल–जलोयचंदणगअलसलहगाई ॥
मेहरिकिमिपूअरगा, बेइंदिय माइवाहाई ॥ १५ ॥

शब्दार्थ–शंख, कोडा, गंडोला, जलो, चंदनक (अरिया) अलसिया, सालीया, मेर, (लाकडाना कीडा) करमीया, पोरा अने चूडेल विगेरे बेंद्रिय जीवो जाणवा. ॥ १५ ॥

हवे तेंद्रिय जीवोना भेद कहे छे.

गोमीमंकणजूआ, पिपीलि उद्देहिया य मक्कोमा ॥
इल्लियघयमिल्लीउ, सावय गोगोमजाईउ ॥ १६ ॥
गद्दहय चोरकीमा, गोमयकीमा य धन्नकीमा य,
कुंथुगुवालिपइल्लिया. तेइंदिय इंदगोवाई ॥ १७ ॥

शब्दार्थ–कानखजूरा, मांकड, जू, कीमीयो, उधइ, वली मंकोमा, एलो, घीमेलो, सवा, गीगोमानी जातियो. गधैया, चोरकीडा, छाणनाकीडा, धान्यनाकीडा, कुंथुआ, गोपालिका, एलो अने इंद्रगोप ए सर्वे तेरिंद्रिय जीवो जाणवा. ॥ १६–१७ ॥

हवे चउरिंद्रिय जीवोना भेद कहे छे.

चउरिंदिया य विच्छू, ढिंकुणभमरा य भमरिया तिमा
मच्छियमंसा मसगा, कंसारी कविलमोलाई ॥ १८ ॥

शब्दार्थ–वली विंछी, बगाई, भमरा तेमज भमरी, तीम, मांखी, डांस, मच्छर, कंसारी, कपिल अने खमसाकमी ए चउरिंद्रिय जीवो जाणवा. ॥ १८ ॥

हवे पंचेंद्रिय जीवोना भेद कहे छे.

पंचिंदिया य चउहा, नारयतिरिया मनुस्सदेवा य ॥
नेरइया सत्तविहा, नायव्वा पुढविभेएणं ॥ १९ ॥

शब्दार्थ–वली पंचेंद्रिय जीवो चार प्रकारना छे. तेमा १ नारकी, २ तिर्यंच, ३ मनुष्य अने ४ देवता. तेमां नारकी जीवो रत्नप्रभादि पृथ्वीना भेदथी सात प्रकारना जाणवा. ॥ १९ ॥

हवे पंचेंद्रिय तिर्यचना भेद कहे छे.

जलयरथलयरखयरा, तिविहा पंचेंदिया तिरिक्खा य ॥
सुसुमारमच्छकच्छव–गाहा मगराइ जलचारी ॥ २० ॥

• शब्दार्थ–वली तिर्यंच पंचेंद्रिय जीवो त्रण प्रकारना छे ते

शब्दार्थ—सातमी तमस्तमःप्रभा पृथ्वी आदिकमां रहेनारा नारकी जीवो पाचसो धनुष्यनां शरीर प्रमाणवाला छे. त्यार पछी अर्ध अर्ध उंचा शरीर प्रमाणवाला जीवो रत्नप्रभा नामनी पहेलो नरक सुधी जाणवा. ॥ २९ ॥

जोयणसहस्समाणा, मच्छा उरगा य गब्भया हुंति ॥
धणुअपुहुत्तं पक्खिसु, भुयचारी गाउअपुहुत्तं ॥३०॥

शब्दार्थ—गर्भज एवा मत्स्य अने सर्पादि उरपरि सर्प एक हजार जोजन शरीर प्रमाणवाला होय छे. पक्षीयोनां शरीरनुं प्रमाण बे धनुष्यथी मांडीने नव धनुष्य सुधीनुं होय छे अने नोलीया विगेरे भुजपरि सर्पनुं शरीर प्रमाण बे गाउथी नव गाउ सुधीनुं होयछे.

खयरा धणुअपुहुत्तं, भुयगा उरगा य जोयणपुहुत्तं ॥
गाउयपुहुत्तमित्ता, समुच्छिमा चउपया भणिया ॥३१॥

शब्दार्थ—समूर्छिम एवा खेचर (पक्षीयो) नां शरीरनुं प्रमाण बे धनुष्यथी मांडीने नव धनुष्य सुधीनुं होय छे अने सर्पादि उरपरि सर्पनां शरीरनुं प्रमाण बे जोजनथी मांडीने नव जोजन सुधीनुं होय छे. समुर्छिम हाथी विगेरे चार पगवाला जीवोनां शरीरनुं प्रमाण बे गाउथी नवगाउ सुधीनुं कह्युं छे. ३१

छच्चेव गाउआइं, चउप्पया गब्भया मुणेयव्वा ॥
कोसतिगं च मणुसा, उक्कोससरीरमाणेणं ॥३२॥

शब्दार्थ—गर्भज चार पगवाला हाथी विगेरे जीवो छ गाउनां शरीर प्रमाणवाला मनाय छे अने मनुष्यो उत्कृष्ट शरीरना प्रमाणे करीने त्रण गाउ होय छे. ॥ ३२ ॥

ईसाणंतसुराणं, रयणीउ सत्त हुंति उच्चत्तं ॥

अणुत्तर इक्किकपरिहाणी ॥३३॥

शब्दार्थ–बीजा ईशान देवलोकनां अंत सुधीना भवनपति, यंतर, ज्योतिषी देवोनां शरीरनी ऊंचाइ सात हाथनी छे. त्यार गी बे, बे, बे, चार, नव ग्रैवेयक अने पांच अनुत्तर ए देवलोमां अनुक्रमे एक एक हाथ शरीर प्रमाण ओछुं जाणवुं.॥३३॥

हवे छ गाथावडे सर्व जीवोनुं आयुष्य कहे छे.

बावीसा पुढवीए, सत्तय आउस्स तिन्नि वाउस्स ॥
वाससहस्सा दस तरु–गणाण तेउ तिरित्ताउ ॥३४॥

शब्दार्थ–पृथ्वीकायनुं बावीस हजार वर्षनुं, अप्कायनुं सात र वर्षनुं, वायुकायनुं त्रण हजार वर्षनुं, प्रत्येक वनस्पतिकायनुं हजार वर्षनुं अने तेउकायनुं त्रण अहोरात्रनुं उत्कृष्ट आयुष्य छे ए सर्व जीवोनुं जघन्यथी अंतर्मुहूर्त्तनुं आयुष्य होय छे.

वासाणि बारसाऊ, बेइंदियाणं तेइंदियाणं तु ॥
अउणापन्नदिणाइं, चउरिंदीणं तु छम्मासं ॥३५॥

शब्दार्थ–बेंद्रिय जीवोनुं आयुष्य बार वर्षनुं, तेरिंद्रिय जीओगणपचास दिवसनुं अने चतुरिंद्रिय जीवोनुं छ मासनुं आ सर्व उत्कृष्ट आयुष्य जाणवुं अने ए सर्व जीवोनुं जअंतर्मुहूर्त्तनुं आयुष्य जाणवुं. ॥ ३५ ॥

सुरनेरइयाण ठिई, उक्कोसा सागराणि तित्तीसं ॥
चउपयतिरियमणुस्सा, तिन्निपपलिओवमा हुंति ॥३६॥

शब्दार्थ–देवता अने नारकीयोनी उत्कृष्ट आयुष्यस्थिति सागरोपमनी होय छे अने चार पगवाला तिर्यंच तथा मउत्कृष्ट आयुष्यस्थिति त्रण पल्योपमनी होय छे.॥३६॥

जलयर उरभुयगाणं, परमाऊ होइ पुव्वकोडीउ ॥
पक्खीणं पुण भणिउ, असंखभागो अ पलियस्स

शब्दार्थ—सुसुमार विगेरे जलचर, सर्प विगेरे उरपरिसर्प अने नोलीया विगेरे भुजपरिसर्प ए सर्वेनुं उत्कृष्ट आयुष्य एक पुर्वकोडीनुं होयछे. तेमज पक्षीयोनुं उत्कृष्ट आयुष्य पल्योपमनो असंख्यातमां भाग जेटलुं कह्युं छे. ॥ ३७ ॥

सद्वे सुहुमा साहा—रणा य संमुछिमा मनुस्सा य ॥
उक्कोसजहन्नेणां, अंतमुहुत्तं चिय जियंति ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ—पृथ्वीकायादि पांचे सूक्ष्म तथा साधारण जीवो तेमज समूर्छिम मनुष्यो उत्कृष्ट अने जघन्यथी एक अंतर्मुहूर्त निश्चे जीवे छे. ॥ ३८ ॥

उगाहणाउमाणां, एवं संखेवउ समक्खायं ॥
जे पुण इह विसेसा, विसेससुत्ताउ ते नेया ॥ ३९ ॥

शब्दार्थ—एवी रीते अवगाहणा अने आयुष्यनुं मान संक्षेपथी कह्युं. वली एमां जे कांइ विशेष जाणवानुं होय ते विशेष सूत्रथी जाणी लेवुं. ॥ ३९ ॥

हवे बे गाथाथी त्रीजुं स्वकायस्थितिद्वार कहे छे.

एगिंदिया य सद्वे, असंखउस्सप्पिणी सकायंमि ॥
उववज्जंति चयंति अ, अणंतकाया अणंताउ ॥४०॥

शब्दार्थ—वली सर्व एकेंद्रिय जीवो पोतानी कायामां असंख्य उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल सुधी उत्पन्न थाय छे अने चवे छे तेमज अनंतकाय जीवो पण अनंतीवार पोतानी कायामां उत्पन्न थाय छे अने चवे छे. ॥ ४० ॥

संखिज्जसमा विगला, सत्तट्ठभवा पणिंदितिरिमणुया ॥
उववज्जंति सकाये, नारयदेवा अ नो चेव ॥४१॥

शब्दार्थ—विगलेंद्रिय[1] जीवो संख्याता वर्ष सुधी लागट पो-

१ बेइंद्रिय, तेइंद्रिय, चउरिंद्रिय.

नी कायामां उत्पन्न थाय. पंचेंद्रिय, तिर्यंच अने मनुष्यो सात
ठ नव तेज गतिमां लागट उत्पन्न थाय अने नारकी तथा
ता तेज नवमां लागट वे वखत पण उत्पन्न थता नथी.॥४१॥

दशहा जियाण पाणा, इंदि उसासाउ जोग वलरूवा ॥
एगिंदिएसु चउरो, विगलेसु उसत्तअठेव ॥४२॥

शब्दार्थ–जीवोने इंद्रिय, श्वासोच्छ्वास, आयुष्य, मन, वचन
ने काया ए त्रण जोगनां त्रण बल मली दश प्राणो होय छे.
मां एकेंद्रियने चार, तथा विगलेंद्रियने छ, सात अने आठ प्राण
नुक्रमे होय छे. ॥ ४२ ॥

असन्निसन्निपंचिं–दिएसु नवदश कमेण बोधवा ॥
तेहिं सह विप्पउगो, जीवाणं जणए मरणं ॥४३॥

शब्दार्थ–असंज्ञी पंचेंद्रिय अने संज्ञी पंचेंद्रिय जीवोने विषे
नुक्रमे नव अने दश प्राणो होय छे. ते प्राणोनी साथे जे वियोग
वो ते जीवोनुं मरण केहवाय छे. ॥ ४३ ॥

एवं अणोरपारे, संसारे सायरंमि जीमंमि ॥
पत्तो अणंतखुत्तो, जीवेहिं अपत्तधम्मेहिं ॥४४॥

शब्दार्थ–धर्मने नहि पामेला जीवोए ए प्रमाणे अपार अने
भयंकर एवा संसार समुद्रमां अनंतीवार जन्ममरण प्राप्त कर्युं.

तह चउरासी लक्खा, संखा जोणीण होइ जीवाणं ॥
पुढवाईण चउएहं, पत्तेयं सत्तसत्तेव ॥४५॥

शब्दार्थ–तेवीज रीते जीवोनी योनीनी संख्या चोराशी
लाख छे. तेमां पृथ्वी आदि चार निकायना दरेक जीवोनी योनी-
नी संख्या सात सात लाखनी छे. ॥ ४५ ॥

दस पत्तेयतरूणं, चउदसलक्खा हवंति इयरेसु ॥
विगलिंदिएसु दोदो, चउरो पंचिंदितिरियाणं ॥४६॥

कालास्तिकाय जाणवो. पुद्गलो चार प्रकारना छे. ते स्कंध, दे[illegible]
प्रदेश तथा परमाणुं निश्चयथी जाणवा. १०

पुद्गलनुं लक्षण कहे छे.

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

सद्दंधयार उज्जोअ, पभा छाया तवेहि आ ॥
वण्णगंधरसा फासा, पुग्गलाणं तु लक्खणं ॥ ११ ॥

शब्दार्थ–शब्द, अंधकार रत्नादिकनो प्रकाश, चंद्र विगेरे[illegible] कांति, छाया तडको अथवा गर्मी, गंध, रस अने स्पर्श ए वली[illegible] पुद्गलनुं लक्षण छे. ॥ ११ ॥

हवे एक मुहूर्तनुं स्वरूप कहे छे

एगा कोडि सतसट्ठि–लक्खा सत्तहुत्तरी सहस्सा य ॥
दोयसया सोलहिया, आवलिया इगमुहुत्तम्मि ॥१२॥

शब्दार्थ–एक क्रोड, सडसठ लाख, सत्योतेर हजार अने [illegible] [illegible] एटली आवलीओ एक मुहूर्तने विषे थाय छे[illegible]

तेज वातने बीजी रीते कहे छे

तिन्नि सहस्सा सत्त य, सयाणि तेहुत्तरं च उस्सासा ॥
एस मुहुत्तो भणिओ, सव्वेहिं अणंतनाणीहिं ॥१३॥

शब्दार्थ–सर्व अनंत ज्ञानियोए त्रण हजार, सातसो अने [illegible] एटला श्वासोश्वास थाय. एटलो काल मुहूर्त कह्यो छे. ॥१३॥

हवे कालनुं स्वरूप कहे छे

समयावली मुहुत्ता, दीहा पक्खा य मास वरिसा य ॥
भणिओ पलिया सागर, उस्सप्पिणी सप्पिणी कालो ॥[illegible]

शब्दार्थ–समय, आवली, मुहूर्त, दिवस, पक्ष, मास, [illegible] पल्योपम, सागरोपम, उत्सर्पिणी अवसर्पिणी ए प्रमाणे काल [illegible] छे. ॥ १४ ॥ इति अजीवतत्त्व.

हवे पुण्यतत्त्वना बेंतालीश भेद कहे छे.

सा उच्चगोअ मणुदुग, सुरदुग पंचेंदिजाइ पणदेहा ॥
आइतितणूणुवंगा, आइमसंघयणसंठाणा ॥१५॥

शब्दार्थ–सातावेदनी कर्म, उंचगोत्र, मनुष्यद्विक, सुरद्विक, पंचेंद्रि जाति अने पांच देह. तेमां पहेला त्रण शरीरना अंग अने उपांग, अने पहेलुं [वजूऋषभनाराच] संघयण तथा पहेलुं [समचतुरस्त्र] संस्थान. ॥ १५ ॥

वण चउक्कागुरुलहु, परघा ऊसास आय वुज्जोअं ॥
सुभखगइ निमिण तसदस, सुरनरतिरिआउ तित्थयरं ॥

शब्दार्थ–वर्णचतुष्क नामकर्म, अगुरु लघु, परघात, श्वासोश्वास, आताप, उद्योत, हंस वृषभनो पेठे सारी चाल ते शुभ विहायोगति, सुघाट रुप निर्माण, त्रसदसक, देव, मनुष्य अने तिर्यचनुं आयुष्य अने तीर्थंकर नामकर्म. ॥ १६ ॥

हवे त्रस दशकनुं स्वरुप कहे छे.

तस बायर पज्जत्तं, पत्तेय थिरं सुभं च सुभगं च ॥
सुस्सर आइज्ज जसं, तसाइदसगं इमं होइ ॥ १७ ॥

शब्दार्थ–त्रस, बादर, पर्याप्ती प्रत्येक, स्थिरता, शुभ, सौभाग्य, सुस्वर, आदेय अने जस. पुण्यना भेदमां आ त्रस विगेरे दश नाम कर्म होय छे. ॥ १७ ॥ इति पुण्यतत्त्व.

हवे पापकर्मना बासी भेद कहे छे.

नाणंतरायदशगं, नव बीए नीअसायमिच्छत्तं ॥
थावरदस नरयतिगं, कसायपणवीस तिरियदुगं ॥१८॥

१ औदारिक, वैक्रिय, आहारक. २ बे हाथ, बे पग, पीठ, मस्तक, उदर अने हृदय. ३ आंगलां विगेरे. ॥ आ त्रस दशनुं स्वरुप आगली गाथामां कहेशे.

शब्दार्थ—ज्ञानावरणीनां पांच अने अंतरायनां पांच एम बन्ने मलीने दश पापकर्मना भेद, बीजा दर्शनावरणी कर्मना नवभेद, नीच गोत्र पापकर्म, अशातावेदनी पापकर्म, मिथ्यात्व पापकर्म, [1]स्थावर दशक पापकर्म, [2]नरकत्रिक पापकर्म, पच्चीश कषाय रूप पापकर्म, तिर्यंचद्विक पापकर्म. ॥ १८ ॥

इगबितिचउजाईओ, कुखगइ उवघाय हुंति पावस्स ॥
अपसत्थं वण्णचउ, अपढम संघयणसंठाणा ॥१९॥

शब्दार्थ—एकेंद्रिय, बेंद्रिय, तेरिंद्रिय अने चोरिंद्रिय जातिरूप पापकर्म, उंट विगेरेनी पेठे अशुभ विहायोगति पापकर्म, उपघात नाम पापकर्म, माठा एवा रूप, रस, गंध अने स्पर्श रूप पापकर्म, तेमज पहेला संघयण अने पहेला संस्थान विनाना बीजा संघयण अने संस्थान रूप पापकर्म. ॥ १९ ॥

हवे स्थावर दशकनुं स्वरूप कहे छे.

थावर सुहुम अपज्जं—साहारणमथिरमसुभदुभगाणि ॥
दुस्सरणाइज्जजसं, थावरदशगं विवज्जत्थं ॥२०॥

शब्दार्थ—स्थावर नामकर्म, सूक्ष्म नामकर्म, अपर्याप्त नामकर्म, साधारण नामकर्म, अस्थिर नामकर्म, अशुभ नामकर्म, दौर्भाग्य नामकर्म, दुःस्वर नामकर्म, अनादेय नामकर्म, अजश नामकर्म. आ स्थावर दशक त्रसथी देवाना अर्थरूप छे. ॥२०॥

हवे बीजा दर्शनावरणी कर्मना नव भेद कहे छे

चक्खुदिट्ठि अचक्खु, सेसिंदिअओहि केवलेहिं च ॥
दंसणमिह सामन्नं, तस्सावरणं तयं चउहा ॥२१॥

शब्दार्थ—चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन अने केवल

[1] आ स्थावर दशकनुं स्वरूप आगली गाथामां कहेले
[2] नरकगति, नरकानुपूर्वी अने नरकायु

दर्शन. आ ठेकाणे दर्शन ते सामान्यज्ञान. ते ज्ञाननुं जे आवर्ण, ते आवर्ण चार प्रकारनुं छे. ॥ २१ ॥

सुहपडिबोहा निद्दा, निद्दानिद्दा य दुक्खपडिबोहा ॥
पयला ठि उवविठस्स, पयलपयलाउ चंकमउ ॥२३॥

शब्दार्थ–सुखे जगाय ते निद्रा, दुःखे जगाय ते निद्रा निद्रा, उन्ना उन्ना तथा बेठा बेठा उंघे ते प्रचला अने चालता चालता उंघे ते प्रचला प्रचला कहेवाय. ॥ २३ ॥

दिणचिंतिअत्थकरणी. थीणद्धी अद्धचक्किअद्धबला ॥
एवं जिणेहिं जणियं, वित्तिसमं दंसणावरणं ॥२४॥

शब्दार्थ–दिवसे चिंतवेला कार्यने [रात्रीये उंघमां] करनारी थीणंद्धी नामनी निद्रा अर्द्धचक्री वासुदेवथी अर्धा बलवाली छे. आ प्रमाणे जिनेश्वरेए छडीदार समान दर्शनावरण कह्युं छे.॥२४॥

हवे कषायनी स्थिति तथा फल कहे छे.

जावजीववरिसचउमा–स पक्खगानिरयतिरियनरअमरा॥
समाणुं सव विरइ–अहक्खायचरित्त घायकरा ॥२५॥

शब्दार्थ–अनंतानुबंधी कषायनी स्थिति जीवीत सुधी, अप्रत्याख्यान कषायनी स्थिति एकवर्ष सुधी, प्रत्याख्यान कषाय नी स्थिति चारमास सुधी, संजलना कषायनी स्थिति एक पखवाडीया सुधी होय छे. तेमां अनंतानु बंधी कषाय नरक गतिरूप फल आपे छे. अप्रत्याख्यानी कषाय तिर्यंच गतिरूप फल आपे छे, प्रत्याख्यानी कषाय मनुष्य गतिरूप फल अने संजलनी कषाय देवगतिरूप फल आपे छे. वली ते चारे कषायो अनुक्रमे समकीतने. अणुव्रतने. सर्व विरतिने अने यथाख्यात चारित्रने रनारा छे. ॥ २५ ॥

जलरेणु पुढवि पव्वय—राईसरिसो चउविहो कोहो ॥
तिणसलयाकठ्ठीअ—सेलत्थंभोवमो माणो ॥१६॥

शब्दार्थ—जलमां, रजमां, पृथ्वी उपर अने पर्वत उपर थ
रेली रेखा सरखो क्रोध चार प्रकारनो छे अने तृणना, सलीन
काष्टना, हाडकाना अने पथ्थरना स्थंभ सरखो मान छे. १६

माया वलेहिगोमुत्ति—मिंढसिंगघणवंसिमूलसमा ॥
लोहो हलिद्दखंजण—कद्दमकिमिरागसारिछो ॥१७॥

शब्दार्थ—माया वांसनी छाल, वृषभनुं मूत्र, बोकडानुं शि
गडुं अने नीबिड एवा वांसना मूल सरखी छे. वली लोभ हल
गाडानी मली, कादव अने करमजी रंग सरखो छे. ॥१७॥

जस्सुदया होइ जिए, हासरइअरईसोगभयकुच्छा ॥
सनिमित्तमन्नहा वा, तं इह हासाईमोहणियं ॥१८॥

शब्दार्थ—जीवने जेना उदयथी निमित्त सहित अथवा नि
मित्त विना हास्य, रति, अरति, शोक, भय अने दुगंछा होय
तेने अहिं हास्यादिक मोहनीय जाणवुं. ॥ १८ ॥

पुरिसित्थितदुभयंपइ, अहिलासो जव्वसा हवइ सोउ
थीनरनपुवेउदओ, फुंफुमतणनगरदाहसमो ॥१९॥

शब्दार्थ—जे कर्मना वशथी पुरुषनो, स्त्रीनो अने ते बन्ने
नो अभिलाष होय छे. ते अनुक्रमे स्त्रीवेद, पुरुषवेद अने नपुंसकवे
बकरानी लींडी, घास अने नगरना दाह सरखो जाणवो. ॥१९

हवे संघयणनां नाम तथा स्वरूप कहे छे

संघयणमट्ठिनिचओ, तं छद्धा वज्जरिसहनारायं ॥
तह रिसहनारायं, नारायं अद्धनारायं ॥२०॥

शब्दार्थ—संघयण ते हाडकानो समूह. ते छ प्रकारनो छे
वज्रऋषभनाराच तेमज २ ऋषभनाराच, ३ नाराच, ४ अर्धनाराच

इंदिअकसायअव्वय–जोगा पंच चउपंचतिन्नि कमा ॥
किरिआउ पणवीसं, इमा उ ताउ अणुक्कमसो ॥२४॥

शब्दार्थ–इंद्रिय, कषाय, अव्रत अने जोग ते अनुक्रमे पांच, चार, पांच अने त्रण छे अने क्रियाउ पच्चीश छे. ए सर्व मलीने आश्रवना बेतालीश भेद थया. वली क्रीयाउ अनुक्रमे आ हवे पछी कहेवाशे ते जाणवी. ॥ २४ ॥

हवे पचीस क्रियाओ कहे छे.

काइअ अहिगरणीया,पाउसिया पारितावणी किरिया ॥
पाणाइवाया रंभिय–परिग्गहिया मायवत्तीया ॥२५॥

शब्दार्थ–कायिकी, अधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी, पारितापनिकी,प्राणातिपातिकी,आरंभिकी,पारिग्रहिकी अने माया प्रत्ययिकी.

मिच्छादंसणवत्ती, अप्पच्चक्खाण दिठि पुठिअ ॥
पाडुच्चिअ सामंतो–वणीअ नेसत्थिसाहत्थी ॥२६॥

शब्दार्थ–मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी, अप्रत्याख्यानिकी, दृष्टिकी, स्पृष्टिकी, प्रातित्यकी, सामंतोपनिपातिकी, नैशस्त्रिकी अने स्वहस्तिकी. ॥ २६ ॥

आणवणि विआरणिआ,अणाभोगा-अणवकंखपच्चइआ
अन्ना पओगसमुदा–णपिज्जदोसेरिआवहिआ ॥ २७ ॥

शब्दार्थ–आनयनिकी, विदारणिका, अनाभोगिकी, अनवकांक्षप्रत्ययिकी, ए सिवा बीजी ते प्रायोगिकी, समुदानकी, प्रेमिकी, द्वेषिकी अने ईर्यापथिकी ॥ २७ ॥

हवे संवरतत्वना सत्तावन भेद कहे छे.

समिई गुत्ति परीसह, जइधम्मो भावणा चरित्ताणि ॥
पण [illegible] –पंच भेएहिं सगवन्ना ॥२८॥

शब्दार्थ–समिति, गुप्ति, परीसह, यतिधर्म, ज्ञावना अने चारित्र ते अनुक्रमे पांच, त्रण, बावीश, दश, बार अने पांच एवा ने दोए करीने संवरना सत्तावन ज्ञेदो छे. ॥ ३८ ॥

हवे पांच समिति अने त्रण गुप्ति कहे छे.

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

इरिया ज्ञासेसणादाणे–उच्चारे समिइसु अ ॥
मणगुत्ति वयगुत्ति, कायगुत्ति तहेव य ॥३८॥

शब्दार्थ–इर्यासमिति, ज्ञाषासमिति, एषणासमिति, आदाननसमिति, उच्चारसमिति ए पांच समिति. वळी मनगुप्ति, वचनगुप्ति तेमज कायगुप्ति ए त्रण गुप्ति जाणवी. ॥ ३९ ॥

हवे बावीस परीसह कहे छे.

खुहा पिवासा सी उण्हं, दंसा चेला रइत्थिउ ॥
चरिआ निसिहिया सिज्जा, अक्कोस वह जायणा ४०

शब्दार्थ–क्षुधा, पासा, शीत, उष्ण, दंस, अचेल, अरति, स्त्री, चर्या, निषद्या, सय्या, आक्रोश, वध अने याचना. ॥ ४० ॥

अलान्नरोगतणफासा, मलसक्कार परीसहा ॥
पन्नान्नाणसम्मत्तं, इअ बावीस परीसहा ॥४१॥

शब्दार्थ–अलान्न, रोग, तृणस्पर्श, मल, सत्कार, प्रज्ञा, अज्ञान अने सम्यक्त्व ए प्रकारे बावीस परिसह जाणवा.॥४१॥

हवे दश प्रकारे यतिधर्म कहे छे.

खंती मदव अज्जव, मुत्ती तवसंजमे अ बोधव्वे ॥
सच्चं सोअं आकिं–चणं च बंभं च जइधम्मो ॥४२॥

शब्दार्थ–क्षमा, मार्दव, आर्जव, मुक्ति, तप, संयम, सत्य, शौच अकिंचन अने ब्रह्मचर्य ए दश प्रकारे यतिधर्म जाणवो.

हवे बार भावनानुं स्वरूप कहे छे

पढममणिच्चं मसरणं, संसारो एगया य अ
असुइत्तं आसव सं–वरो अ तह णिज्जरा

शब्दार्थ–पहेली अनित्य, बीजी असरण,
चोथो एकत्व, पांचमी अन्यत्व, छठो असुचित्व, सा
आठमी संवर, तेमज नवमो निर्ज्जरा भावना जाण

लोगसहावो बोही, दुल्लहा धम्मस्स साहग
एआउ भावणाउ, भावेअव्वा पयत्तेणं ।

शब्दार्थ–दशमी लोक स्वभाव, अग्यारमो बे
धर्मनी साधक अरिहंत भावना दुर्लभ छे. ए भाव
रीने भाववी. ॥ ४४ ॥

हवे पांच प्रकारनां चारित्रनुं वर्णन करे छे.

सामाइ अत्थ पढमं, छेउवठावणं भवे बीअ
परिहारविसुद्धीअं, सुहुमं तह संपरायं च

शब्दार्थ–अहिं पेहलुं सामायक, बीजुं छेदोपस्थ
परिहार विशुद्धि, अने तेमज चोथुं सुक्ष्मसंपराय च

तत्तो अ अहक्खायं, खायं सव्वंमि जीवलोग
जं चरिऊण सुविहिया, वच्चंति अयरामरं ठ

शब्दार्थ–वली त्यारपछी सर्व लोकमां प्रसि
यथाख्यात चारित्र छे के, जे चारित्रने पाली सुविहि
स्थानने पामे छे. ॥ ४६ ॥

हवे निर्ज्जराना बार भेद छे.

अणसणमुणोअरिया, वित्तीसंखेवणं रसच्च
कायकिलेसो संलो–णया य बज्झो तवो हो

शब्दार्थ–अनशन, उनोदरिका, वृत्तिसंक्षेप, र

क्लेश, अने संलीनता ए ७ प्रकारे बाह्य तप होय छे. ॥ ४७ ॥

पायच्छित्तं विणओ, वेयावच्चं तहेव सज्झाओ ॥
झाणं उस्सग्गोवि अ, अब्भिंतरओ तवो होइ ॥४८॥

शब्दार्थ—प्रायश्चित, विनय, वैयावृत्य, तेमज स्वाध्याय, ध्यान अने कायोत्सर्ग ए आभ्यंतर तप होय छे. ॥४८॥

हवे आभ्यंतर तपमांना प्रायश्चित तपनुं स्वरूप कहे छे.

(अनुष्टुप्वृत्तम्)

आलोयण पडिक्कमणो—भयविवेगमुस्सग्गो ॥
तवछेयमूलअणव—ठ्ठाय पारंचिय चेव ॥४९॥

शब्दार्थ—आलोयण लेवी, पडिकमण करवुं, आलोयण अने पडिकमण ए बन्ने करवां, विवेक राखवो, कायोत्सर्ग करवो, वली तप, व्रत पर्यायछेद, सर्व व्रत पर्यायछेद अने गच्छबहार, क्षेत्रबहार, तथा लींगबहार रहेवुं. ॥ ४९ ॥

हवे विनयनुं स्वरूप कहे छे.

(आर्यावृत्तम्)

भत्ती बहुमाणो व—ण्णजणणं नासणमवन्नवायस्स ॥
आसायणपरिहाणो, विणओ संखेवओ एसो ॥५०॥

शब्दार्थ—भक्ती करवी, हृदयमां प्रेम राखवो, गुण गावा, अवर्णवादनुं गोपववुं, आशातनानो त्याग करवो. ए प्रमाणे संक्षेपथी विनय कह्यो छे. ॥ ५० ॥

हवे दश प्रकारे वैयावच कहे छे.

आयरियउवज्झाय—तवस्सिसेहे गिलाणसाहुसु ॥
समणुन्नसंघकुलगण—वेयावच्चं हवइ दसहा ॥५१॥

शब्दार्थ—आचार्यनी, उपाध्यायनी, तपस्वीनी, शिष्यनी, रोगीनी, साधुनी, साधर्मीनी, संघनी, एक साधुनी अने गणनी

एम वैयावच्च दश प्रकारे थाय छे. ॥ ५१ ॥

हवे ध्यानना भेद कहे छे.

झाणं चउविहं खलु, अत्तं रूद्दं तहेव धम्मं च ॥
सुक्कं पुण पत्तेयं, चउविहं चेव नायव्वं ॥ ५२ ॥

शब्दार्थ–ध्यान निश्चय चार प्रकारनुं छे. आर्तध्यान, रौद्रध्यान तेमज धर्मध्यान अने शुक्लध्यान. वली ते प्रत्येक चार प्रकारनुं निश्चय जाणवुं. ॥ ५२ ॥

हवे निर्जरा तत्त्वनो विचार कहे छे.

बारसविहं तवो नि-ज्जराय बंधो य चउविगप्पोय ॥
पयइठीइअणुभागो–पयेसभेएहिं नायव्वो॥५३॥

शब्दार्थ–आ उपर कहेलुं बार प्रकारनुं तप ते निर्जरा जाणवी. अने बंध ते चार प्रकारनो छे, ते प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध अने प्रदेशबंध एवा भेदोये करीने जाणवो. ॥५३॥

पूर्वे कहेला बंधतत्त्वना चार भेदनुं वर्णन करे छे.

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

पयइ सहावो वुत्तो, ठिइ कालावहारणं ॥
अणु भागो रसो होउ, पएसो दलसंचउ ॥५४॥

शब्दार्थ–प्रकृतिबंध ते स्वभाव, स्थितिबंध ते कालनो निश्चय, अनुभागबंध ते रस जाणवो अने प्रदेशबंध ते दलसमूह जाणवो. ॥ ५४ ॥

हवे आठ कर्मनी प्रत्येके उत्तर प्रकृतीओनी संख्या कहे छे.

(आर्यावृत्तम्)

इह नाणदंसणावर–णावेयमोहाउनामगोआणि ॥
विग्धं च पणनवदुअठ–वीसचउ तीसयदुपणविहं ५५

शब्दार्थ–अहिं ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनी, मोहनी,

ायु, नाम अने गोत्र वली अंतराय ए आठ कर्मनी पांच, नव, बे, ठ्ठावीश, चार, एकसो त्रण, बे अने पांच. एम अनुक्रमे प्रकृति ाणवी. सर्व मली १५८ थाय. ॥ ५५ ॥

हवे आठ कर्मोनो उत्कृष्ट स्थितिबंध कहे छे.

नाणे अ दंसणावरणे वेअणिए चेव अंतराए अ ॥
तीसं कोमाकोमी, अयराणं ठिइ अ उक्कोसा ॥५६॥

शब्दार्थ–ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, वेदनी, अंतराय, ए वारे घाती कर्मनी उत्कृष्ट स्थिति त्रीश कोडी कोडी सागरोपम नी जाणवी. ॥ ५६ ॥

सत्तरी कोमाकोमी, मोहणीए वीस नामगोएसु ॥
तित्तीसं अयराइं, आउठिइबंध उक्कोसा ॥५७॥

शब्दार्थ–मोहनी कर्मनी सीत्तेर कोडी कोडी सागरोपम-नी स्थिति जाणवी. नामकर्म तथा गोत्रकर्मनी वीश कोडा कोडी सागरोपमनी स्थिति जाणवी. वली आयुःकर्मनी स्थितिनो उ-त्कृष्ट बंध तेत्रीश सागरोपमनो जाणवो. ॥ ५७ ॥

हवे आठ कर्मोनो जघन्य स्थितिबंध कहे छे.

वारस मुहुत्त जहन्ना, वेयणिए अठ नामगोएसु ॥
सेसाणंतमुहुत्तं, एयं बंधठिई माणं॥५८॥

शब्दार्थ–वेदनीय कर्मनी स्थिति जघन्य बार मुहूर्तनी छे अने नामकर्म तथा गोत्रकर्मनी स्थिति आठ मुहूर्तनी जाणवी. बाकीना कर्मनी अंतमुहूर्तनी जाणवी. ए प्रमाणे बंध स्थितिनुं मान छे. ॥ ५८ ॥ इति बंधतत्व. ॥

हवे मोक्षतत्त्वना नव भेद कहे छे.

संतपयपरूवणाया. दव्वपमाणं च खित्त फुसणा य ॥
कालो अ अंतरजाग–जावे अप्पाबहु चेव ॥५९॥

एम वैयावच्च दश प्रकारे थाय छे. ॥ ५१ ॥

हवे ध्यानना भेद कहे छे.

झाणं चउविहं खलु, अत्तं रुद्दं तहेव धम्मं च ॥
सुक्कं पुण पत्तेयं, चउविहं चेव नायव्वं ॥ ५२ ॥

शब्दार्थ–ध्यान निश्चय चार प्रकारनुं छे, आर्तध्यान, रौद्रध्यान तेमज धर्मध्यान अने शुक्लध्यान, वली ते प्रत्येक चार प्रकारनुं निश्चय जाणवुं. ॥ ५२ ॥

हवे निर्जरा तत्त्वनो विचार कहे छे.

बारसविहं तवो नि-ज्जराय बंधो य चउविगप्पोय ॥
पयइठीइअणुजागो–पयेसभेएहिं नायव्वो॥५३॥

शब्दार्थ–आ उपर कहेलुं बार प्रकारनुं तप ते निर्जरा जाणवी. अने बंध ते चार प्रकारनो छे, ते प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध अने प्रदेशबंध एवा भेदोये करीने जाणवो. ॥५३॥

पूर्वे कहेला बंधतत्त्वना चार भेदनुं वर्णन करे छे.

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

पयइ सहावो वुत्तो, ठिइ कालावहारणं ॥
अणु भागो रसो होउ, पएसो दलसंचउ ॥५४॥

शब्दार्थ–प्रकृतिबंध ते स्वभाव, स्थितिबंध ते कालनो निश्चय, अनुभागबंध ते रस जाणवो अने प्रदेशबंध ते दलसमूह जाणवो. ॥ ५४ ॥

हवे आठे कर्मनी प्रत्येके उत्तर प्रकृतीनी संख्या कहे छे.

(आर्यावृत्तम्)

इह नाणदंसणावर–णवेयमोहाउनामगोआणि ॥
विग्धं च पणनवडुअ–ठवीसचउ तीसयडुपणविहं ५५

शब्दार्थ–अहिं ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनी, मोहनी,

दवपमाणे सिद्धाणं जीवदवाणि हुंति णंताणि ॥
लोगस्स असंखिज्जे, जागे एक्को य सवेवि ॥६३॥

शब्दार्थ–द्रव्य प्रमाण द्वार विचारे छते सिद्धना जीवद्रव्य अनंतां छे. वली लोकाकाशना असंख्यातमे जागे एक सिद्ध छे. अथवा सर्व सिद्ध पण होय छे. ॥ ६३ ॥

हवे स्पर्शनादि त्रण द्वार कहे छे.

फुसणा अहिया कालो, इग सिद्ध पडुच्च साइणंतो ॥
पडिवाया जावाउ. सिद्धाणं अंतरं नत्थि ॥६४॥

शब्दार्थ–सिद्धना जीवोनी स्पर्शना अधिक छे. एक सिद्धने आश्रीने काल सादि अनंत छे अने सर्वने आश्री अनादि अनंत छे. वली सिद्धोने चववानो अजाव छे, माटे सिद्धोने अंतर नथी.॥

हवे भागद्वार अने जावद्वार कहे छे.

सवजियाणमणंते, जागे ते तेसिं दंसणं नाणं ॥
खइए जावे परिणा-मिए अ पुण होइ जीवत्तं ॥६५॥

शब्दार्थ–सर्व संसारी जीवोना अनंतमे जागे ते सिद्धना जीवो छे. वली ते सिद्ध जीवोने क्षायिक जावने विषे केवलदर्शन अने केवलज्ञान होय छे. वली परिणामिक जावने विषे ए सिद्धना जीवोने जीवितपणुं पण होय छे. ॥ ६५ ॥

हवे सिद्धना पंदर भेद कहे छे.

जिणअजिणतित्थतित्था, गिहिअन्नसलिंगथीनरनपुंसा॥
पत्तेयसयंबुद्धा, बुद्धबोहियसिद्धणिकाय ॥६६॥

शब्दार्थ–जिनसिद्ध, अजिनसिद्ध, तीर्थसिद्ध, अतीर्थसिद्ध, गृहस्थलिंगसिद्ध, अन्यलिंगसिद्ध, स्वलिंगसिद्ध, स्त्रीसिद्ध, पुरुषसिद्ध, नपुंसकसिद्ध, प्रत्येकबुद्ध सिद्ध, स्वयंबुद्ध सिद्ध, बुद्धबोधित सिद्ध, एकसिद्ध अने अनेक सिद्ध. ए सिद्धना पंदर जेद जाणवा. ॥६६॥

हवे ए पंदर भेदना उदाहरण कहे छे.

जिणसिद्धा अरिहंता, अजिणसिद्धाय पुंमरिअपमुहा॥
गणहारि तित्थसिद्धा, अतित्थसिद्धा य मरुदेवी ॥६७॥

शब्दार्थ-जिनसिद्ध ते अरिहंतो, अजिनसिद्ध ते पुंडरिक विगेरे गणधर जाणवा. तीर्थसिद्ध ते गणधर अने अतीर्थसिद्ध ते मरुदेवी जाणवा. ॥ ६७ ॥

गिहिलिंगसिद्ध जरहो, वक्कलचीरीय अन्नलिंगम्मि॥
साहु सलिंगसिद्धा, थीसिद्धा चंदणापमुहा ॥६८॥

शब्दार्थ-गृहस्थलिंग सिद्ध जरत, अन्यलिंग सिद्ध वल्कल चीरी, स्वलिंग सिद्ध साधु अने स्त्री सिद्ध चंदनबाला विगेरे जाणवा. ॥ ६८ ॥

पुंसिद्धा गोयमाई, गांगेयपमुह नपुंसया सिद्धा ॥
पत्तेय सयंबुद्धा, जणिया करकंडुकविलाई ॥६९॥

शब्दार्थ-पुरुष सिद्ध ते गौतम विगेरे, नपुंसक सिद्ध ते गांगेय विगेरे, प्रत्येकसिद्ध ते करकंडु अने स्वयंबुद्धसिद्धते कपील जाणवा.

तह बुद्धबोहि गुरुबो-हिय इगसमय इगसिद्धा य ॥
इगसमयेवि अणेगा, सिद्धा ते णेगसिद्धा य ॥७०॥

शब्दार्थ-तेमज बुद्धबोधित सिद्ध ते गुरुथी बोध पामेला, एक समयमां सिद्ध थनाराना एक सिद्ध अने एक समयमां अनेक सिद्ध थाय ते अनेकसिद्ध कहेवाय. ॥ ७० ॥

हवे नवमुं अल्पबहुत्वद्वार कहे छे.

थोवा नपुंससिद्धा, थीनरसिद्धा कमेण संखगुणा ॥
इअ मुक्खतत्तमेयं, नवतत्ता लेसओ जणिया ॥७१॥

शब्दार्थ-नपुंसक सिद्धो थोडा छे. स्त्री पुरुष सिद्धो अनुक्रमे

उरलाइसत्तगेणं, एग जिउ मुअइ फुसिय सव्वअणु ॥
जित्तिअकालि स थूलो, दव्वे सुहुमो सगनयरा ॥७६॥

शब्दार्थ–एक जीव उदारादिक सातेनी वर्गणाने स्पर्श क-रीने सर्व प्रमाणु प्रत्ये जेटलो काल मूके, ते थूल द्रव्य पुद्गल प-रावर्त काल थाय. द्रव्यथी सूक्ष्म सात बीजी वर्गणा जाणवी.

लोगपएसोसप्पिणि–समया अणुभागबंधठाणे य ॥
तहतह कममरणेणं, पुठा खित्ताइ थुलियरा ॥७७॥

शब्दार्थ–लोकाकाशना प्रदेश, उत्सर्पिणीना समय अने अणुभाग बंधना सर्व स्थानक. तेम तेम अनुक्रम मरणे करीने ते क्षेत्रादि स्पर्शेला होय ते क्षेत्रादि स्थूल सूक्ष्म पल्योपम थाय.

हवे पुद्गल परावर्त्तनुं मान कहे छे.

उस्सप्पिणी अणंता, पुग्गलपरिअट्टउ मुणेअव्वो ॥
ते णंतातीअध्धा, अणागयध्धा अणंतगुणा ॥७८॥

शब्दार्थ–अनंती उत्सर्पिणी अने अवसर्पिणी जाय ए पुद्गल परावर्त काल जाणवो. अनंत एवा ते पुद्गलपरावर्त काल गया अने अनंतगुणा जाशे. ॥ ७८ ॥

हवे छ द्रव्य दश द्वारे कहे छे.

परिणामि जीव मुत्तं, सपएसा एक खित्त किरिआय ॥
णिच्चं कारण कत्ता, सव्वग इयरंमि अपवेसे ॥७९॥

शब्दार्थ–परिणामि, जीव, मूर्त्ति, सप्रदेश, एक, क्षेत्र, क्रिया, नित्यपणुं, कारण, कर्ता. ए सर्वमां रहेला विचारथी अप्रवेशपणे रह्या छे. ॥ ७९ ॥

॥ इति नवतत्त्व. ॥

अथ चोवीश दंडक.

मंगलाचरण पूर्वक कर्त्तव्य कहे छे.

नमिउं चउवीसजिणे, तस्सुत्तवियारलेसदेसणउ ॥
दंमगपएहिं ते चिय, थोसामि सुणेह जोजवा ॥ १ ॥

शब्दार्थ–चोवीश जिनेश्वरोने नमस्कार करीने तेमनां सूत्रना विचारना लेश मात्रने कहेवाथी दंडकना पदे करीने ते जिनेश्वरोने निश्चे हुं स्तवन करुं छुं, माटे हे जव्यजनो! तमे सांजलो.१

हवे चोवीश दंडक गणावे छे.

नेरइया असुराइ, पुढवाई वेंदियादउ चेव ॥
गप्रयतिरियमणुसा, वंतरजोइसियवेमाणी ॥ २ ॥

शब्दार्थ–१ सात नारकीनुं, १० असुरकुमारादिनां, ५ पृथ्वीकायादिकनां, ३ विगलेंद्रिनां, २ गर्जजतिर्यंच अने मनुष्यनां, ३ व्यंतर, ज्योतसि अने वैमानीकनां. ॥ २ ॥

हवे द्वार कहे छे.

संखित्तपरीउ इमा. सरीर मोगाहणा य संघयणा ॥
सन्ना संठाण कसा–य लेस इंदिय दुसमुग्घाया ॥ ३ ॥

शब्दार्थ–आ संघयणी संक्षेप मात्र छे. शरीर ५, अवगाहना ३, संघयण ६, संज्ञा ४-१०, संस्थान ६, कषाय ४,लेस्या ६, इंद्रिय ५, बे जेदे समुद्घात ७. ॥ ३ ॥

दिठीदंसणनाणे, जोगुवउगोववायचवणठिइ ॥
पज्जत्तिकिमाहारे, सन्नी गइ आगइ वेय ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–दृष्टि ३, दर्शन ४, ज्ञान ५, योग १५, उपयोग१२, उपपात १, चवन १, स्थिति२, पर्याप्ति ६, किमाहार १, संज्ञा ३, गति१, आगति १, वेद ३. ॥ ४ ॥

हवे छ गाथाथी शरीरद्वार तथा अवगाहनाद्वार कहे छे.

चउ गप्नतिरियवाउसु, मणुआणं पंच सेस तिसरीरा ॥
थावरचउगे दुहउ, अंगुल असंखभागतणू ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–गर्भजतिर्यंच अने वाउकायने विषे चार शरीर, मनुष्यने पांच शरीर, बाकीना त्रण शरीरवाला होय. (इति शरीर द्वार) थावर चतुष्कने विषे उत्कृष्ट तथा जघन्यथी अंगुलना असंख्य भागवालुं शरीर जाणवुं. ॥ ५ ॥

सबेसिंपि जहन्ना, साहाविय अंगुलस्ससंखंसो ॥
उक्कोस पणसयधणू, नेरइया सत्तहउ सुरा ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–बाकीना वीश दंडकने स्वाभाविक जघन्यथी अंगुलनो असंख्यातमो भाग शरीर होयछे. नारकी जीवो उत्कृष्टा पांचसो धनुष्य उंचा होयछे. देवता उत्कृष्टे सात हाथ होयछे.६

गप्नतिरि सहसजोयण, वणस्सई अहियजोयणसहस्सं ॥
नर तेइंदि तिगाउ, बेइंदिय जोयणा बार ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–गर्भज तिर्यंच एक हजार जोजन, वनस्पति एक हजार जोजनथी कांइक अधिक, मनुष्य अने तेरिंद्रि त्रण गाउ अने बेइंद्रिय बार योजनना उत्कृष्ट शरीर प्रमाणवाला होयछे.

जोयणमेगं चउरिं–दिदेहमुच्चत्तणे सुए भणियं ॥
वेउवियदेहं पुण, अंगुलसंखं सयारंभे ॥ ८ ॥

शब्दार्थ–चउरिंद्रिनुं शरीर उंचपणे एक जोजन सूत्रने विषे कह्युं छे. वली वनर वैक्रिय देह हमेशां आरंभे अंगुलनो असंख्यातमो भाग होयछे. ॥ ८ ॥

देवनरअहियलक्खं, तिरियाणं नवयजोयणसयाइं ॥
दुगुणं तु नारयाणं, भणियं वेउवियसरिरं तु ॥ ९ ॥

शब्दार्थ—देव अने मनुष्योनुं वैक्रिय शरीर एक लाख जोजनथी कांइक अधिक होय छे. तिर्यंचोनुं नवसो योजननुं होयछे. वली नारकीनुं पोताना शरीर प्रमाणथी बमणुं कह्युं छे. ॥ ए ॥

अंतमुहुत्तं निरये. मुहुत्तचत्तारि मणुअतिरिएसु ॥
देवेसु अद्धमासो. उक्कोसविउव्वणा कालो ॥१०॥

शब्दार्थ—नरकमां एक अंतर मुहूर्त, मनुष्य अने तिर्यंचमां चार मुहूर्त अने देवताने विषे अर्द्ध मास. ए उत्कृष्ट उत्तर वैक्रिय शरीरनो काल जाणवो. (इति अवगाहनाद्वार) ॥१० ॥

हवे एक गाथाथी संघयण द्वार कहे छे.

थावरसुरनेरइया. असंघयणा य विगलछेवठा ॥
संघयणछगं गब्भय—नरतिरिएसु मुणेअव्वं ॥११॥

शब्दार्थ—पांच थावर, देवता अने नारकी ए सर्व संघयण रहित छे. विगलेंद्रियने छेवार्त संघयण होय छे. गर्भज मनुष्य अने तिर्यंचने विषे छ संघयण जाणवुं. (इति संघयणद्वार) ॥११॥

हवे बे गाथायो संज्ञा तथा संस्थानद्वार कहे छे.

सव्वेसिं चउ दह वा—सणा सव्वे सुरा य चउरंसा ॥
नरतिरिछसंठाणा. हुंमा विगलिंदिनेरइया ॥१२॥

शब्दार्थ—सर्व दंडकोने चार अथवा दश संज्ञा छे (इति संज्ञाद्वार) अने सर्व देवतानुं समचतुरस्र छे. मनुष्य अने तिर्यंच छ संस्थानवाला होय छे तथा विगलेंद्रि अने नारकी हुंड संस्थानवाला होय छे.

नाणाविहधयसूई—बुब्बुयवणवाउतेउअपकाया ॥
पुढवी मसूरचंदा—कारा संठाणउ भणिया ॥१३॥

शब्दार्थ—वनस्पतिकाय जीवो नाना प्रकारना संस्थानवाला छे. वाउकाय जीवो ध्वजा सरखा संस्थानवाला छे, अग्निकाय जीवो सुइयाना समूह [illegible]वा संस्थानवाला अने अप्काय जीवो

परपोटाना सरखा संस्थानवाला होयछे. पृथ्वीकाय जीवो मसूरनी दाल अने चंडना सरखा संस्थानवाला कह्या छे. (इति संस्थानद्वार)

हवे चार गाथाथी कषाय, लेश्या, इंद्रिय अने समुद्घात द्वार कहे छे.

सव्वेवि चउकसाया. लेसछगं गब्भतिरियमणुएसु ॥
नारयतेउवाउ–विगलाविमाणियतिपलेसा ॥१४॥

शब्दार्थ–सर्वे एवा जीवो पण चार कषायवाला होय छे. (इति कषायद्वार) गर्भज तिर्यंच अने मनुष्य छ लेश्यावाला होय छे. वली नारकी, अग्निकाय, वाउकाय, विगलेंद्री अने वैमानिक देवता ए सर्वे त्रण लेश्यावाला होय छे. ॥ १४ ॥

जोइसियतेउलेसा. सेसा सव्वेवि हुंति चउलेसा ॥
इंदियदारं सुगमं. मणुआणं सत्त समुग्घाया ॥१५॥

शब्दार्थ–ज्योतिष तेजो लेश्यावाला छे. बाकीना सघला पण चार लेश्यावाला होयछे. (इति लेश्याद्वार) इंद्रियद्वार सुगम छे. (इति इंद्रिद्वार) मनुष्यने सात समुद्घात होयछे. ॥ १५ ॥

वेयणकसायमरणे, वेउव्वियतेयएय आहारे ॥
केवलियसमुग्घाए, सत्त इमे हुंति सन्नीणं ॥१६॥

शब्दार्थ–वेदना, कषाय, मरण, वैक्रीय, तेजस, आहारक, अने केवली ए सात समुग्घात संज्ञी मनुष्यने होय छे. ॥ १६ ॥

एगिंदियाण केवलि–तेऊआहारगविणु चत्तारि ॥
तेवेउव्वियवज्जा, विगला सन्नीण ते चेव ॥१७॥

शब्दार्थ–एकेंद्रियने, केवली तेजस अने आहारक वर्जिने चार समुद्घात होय छे. ते पूर्वे कहेला त्रण अने वैक्रिय ए चार विना बाकीना त्रण समुद्घात विकलेंद्रिने जाणवा अने असंज्ञीने पण ते त्रणज समुद्घात निश्चे होय छे. ॥ १७ ॥

हवे बे गाथाथी दृष्टि अने दर्शनद्वार कहे छे.

पण गप्रतिरिसुरेसु, नारयवाऊसु चउर तिय सेसे ॥
विगलडुदिठी थावर-मिछत्ति सेस तियदिठी ॥१८॥

शब्दार्थ—गर्भज तिर्यंच अने देवताने विषे पांच, नारकी अने वाउकायने विषे चार अने बाकीनाने विषे त्रण समुद्घात होयछे. (इति समुद्घातद्वार) विकलेंद्रि बे दृष्टिवाला छे. थावर मिथ्यात्वी छे अने बाकीना त्रण दृष्टिवाला छे. ॥ १८ ॥ (इति दृष्टिद्वार)

थावरबितिसु अचक्खु, चउरिंदिसु तदुगं सुए भणियं ॥
मणुआ चउदंसणिणो, सेसेसु तिगं तिगं भणियं॥१९॥

शब्दार्थ—स्थावर, बेइंद्रिय अने तेरिंद्रियने विषे एक अचक्षु दर्शन होयछे. चौरिंद्रिने विषे चक्षुदर्शन अने अचक्षुदर्शन सूत्रमां कह्युं छे. मनुष्यो चार दर्शनवाला होयछे अने बाकीनाने विषे त्रण त्रण दर्शन होयछे. ॥ १९ ॥ (इति दर्शनद्वार)

हवे एक गाथाथी ज्ञानद्वार कहे छे.

अन्नाणनाणतियतिय, सुरतिरिनिरये थिरे अन्नाणदुगं
नाणानाण दुविगले, मणुए पणनाणतिअन्नाण ॥२०॥

शब्दार्थ—देवता, तिर्यंच अने नारकोने विषे त्रण अज्ञान अने त्रण ज्ञान होय छे. थावरमां बे अज्ञान होयछे. विकलेंद्रियने विषे बे ज्ञान अने बे अज्ञान होयछे. मनुष्यने विषे पांच ज्ञान अने त्रण अज्ञान होयछे. ॥ २० ॥ (इति ज्ञानद्वार)

हवे एक गाथाथी योगद्वार कहे छे.

इक्कारस सुरनिरये, तिरिएसु तेर पन्नर मणुएसु ॥
विगले चउ पण वाए, जोगतिगं थावरे होइ ॥२१॥

शब्दार्थ—देवता अने नारकीने विषे अगीयार, तिर्यंचने विषे तेर, मनुष्यने विषे पंदर, विकलेंद्रियने विषे चार, वाउकायने विषे पांच अने स्थावरने विषे त्रण योग होय छे. ॥२१॥ (इति योगद्वार)

हवे एक गाथाथी योगनां नाम कहे छे.

सच्चेअरमीसअसच्च–मोस मणुवयवेउव्विआहारे ॥
उरलंमिसा कम्मण, इय जोगा देसिया समए ॥२२॥

शब्दार्थ–सत्य मनोयोग, असत्य मनोयोग, सत्यामृषा मनो योग, असत्यामृषा मनोयोग, ए प्रमाणे मन अने वचनना योग जाणवा. वैक्रिय योग, आहारक योग तेमज औदारिक योग ए त्रण मिश्र सहित. अने वली कार्मण योग, ते साते, कायाना योग आगमने विषे कह्या छे. ॥ २२ ॥ (इति योगद्वार)

हवे बे गाथाथी उपयोग द्वार कहे छे.

तिअन्नाण नाणपण, चउदंसण वार जिअलक्खणुवओगा॥
इअ वारस उवओगा, भणिआ तिलुक्कदंसीहिं ॥ २३ ॥

शब्दार्थ–त्रण अज्ञान, पांच ज्ञान, चार दर्शन, ए वार जी· वना लक्षणरूप उपयोग छे. ए वार उपयोग त्रीलोक दर्शी एवा श्री जिनेश्वरोए कह्या छे. ॥ २३ ॥

उवओगा मणुएसु, वारस नव निरय तिरय देवेसु ॥
विगलदुगे पण छक्कं, चउरिंदिसु थावरे तिअगं ॥२४॥

शब्दार्थ–मनुष्यने विषे वार, नारकी, तिर्यंच अने देवताने विषे नव, बेइंद्रिय अने तेरिंद्रिने विषे पांच, चोरिंद्रिने विषे छ अने थावरने विषे त्रण उपयोग होय छे.॥२४॥ (इति उपयोगद्वार)

हवे दोढ गाथाथी उत्पत्ति अने चवनद्वार कहे छे.

संखमसंखा समए, गब्भयतिरिविगलनारय सुरा य ॥
मणुआ नियमा संखा, वणणंता थावर असंखा॥२५॥

शब्दार्थ–एक समयने विषे गर्भजतिर्यंच, विकलेंद्रि, नारकी अने देवता संख्याता अने असंख्याता उत्पन्न थाय छे.

नियमथी मनुष्यो संख्याता उत्पन्न थाय छे. वनस्पतिकाय अनंता उत्पन्न थाय छे अने थावर असंख्याता उत्पन्न थाय छे ॥१५॥

असन्नीनर असंखा. जह उववाउ तहेव चवणेवि ॥

हवे चार गाथाथी स्थितिद्वार कहे छे.

बावीससगतिदसवा—ससहस्स उक्किठ पुढवाइ ॥१६॥

शब्दार्थ—असंज्ञी मनुष्यो असंख्याता उत्पन्न थाय छे. जेवी रीते उत्पन्न थवानी वात कही तेवीज रीते चवनपणुं जाणवुं. (इति उत्पत्ति चवनद्वार) पृथ्वीकाय, अप्काय, वाउकाय अने वनस्पतिकायनुं आयुष्य अनुक्रमे बावीस हजार, सात हजार, त्रण हजार अने दस हजार वर्षनुं उत्कृष्टुं होय छे. ॥ १६ ॥

तिदिणग्गि तिपल्लाउ. नरतिरि सुरनिरय सागरतित्तीसा॥
वंतर पल्लं जोइस. वरिसलक्खाहियं पलियं ॥१७॥

शब्दार्थ—त्रण दिवस अग्निकायनुं आयुष्य होय छे. मनुष्य अने तिर्यंच त्रण पल्योपम आयुष्यवाला होय छे. देवता अने नारकी तेत्रीस सागरोपमनां आयुष्यवाला होय छे. व्यंतर देवता एक पल्योपमनां आयुष्यवाला अने ज्योतसी देवता एक लाख वर्ष अधिक एवी एक पल्योपमना आयुष्यवाला होयछे.

असुराण अहियअयरं. देसूणउपल्लयं नवनिकाए ॥
बारसवासुणपणदिण—छमास उक्किठ विगलाउ ॥१८॥

शब्दार्थ—असुर कुमारोनुं एक सागरोपमथी कांइक अधिक आयुष्य होयछे. नव निकायनुं देसे उण बे पल्योपमनुं, विकलेंद्रिय[बेइंद्रि, तेरिंद्रि अने चौरिंद्रिनुं]अनुक्रमे बारवर्ष, उगणपचास दिवस अने छ मासनुं ए सर्व उत्कृष्ट आयुष्य जाणवुं. १८

पुढवाइदसपयाणं. अंतमुहुत्तं जहन्नआउठिइ ॥
दससहसवरसठिइआ, भवणाहिवनिरयवंतरिया १९

शब्दार्थ–पृथ्वी कायादि [पांच स्थावर, त्रण विकलेंद्रि तिर्यंच अने मनुष्य] ए दशनी जघन्यथी आयुष्यनी स्थिति ए अंतमुहूर्त्तनी छे, नवनपति, नारकी अने व्यंतर देवताउं दश ह जार वर्षनी जघन्य स्थीतिवाला छे. ॥ २ए ॥

वैमाणिय जोइसिया, पल्लतयठंसआउआ हुंति ॥

हवे त्रण गाथाथी पर्याप्ति, किमाहार अने संज्ञा ए त्रण द्वार कहे छे.

सुरनरतिरिनिरएसुं, उपज्जत्ती थावरे चउगं ॥३०॥

शब्दार्थ–वैमानीक अने ज्योतसी देवताउं एक पल्योम अं तेनो आठमो नाग एम अनुक्रमे आयुष्यवाला होयछे. (इति स्थी द्वार) देवता, मनुष्य, तिर्यंच अने नारकीने विषे छ पर्याप्ती होयछे तथा थावरने विषे चार पर्याप्ती होयछे. ॥ ३० ॥

विगले पंच पज्जत्ती, उद्दिसि आहार होइ सवेसिं ॥

पणगाइपए नयणा, अह सन्नीतिय नणिस्सामि ३१

शब्दार्थ–विकलेंद्रियने विषे पांच पर्याप्ती होयछे. (इति पर्याप्ति द्वार) सर्वे जीवोने छ दिशाने विषे आहार होयछे. पांच दिशा आदि पदने विषे नजना छे. (इति किमाहारद्वार) हवे त्रण संज्ञा नणीश.॥

चउविहसुरतिरिएसु, निरएसु य दीहकालगी सण्णा ॥

विगले हेउवएसा, सन्नारहिआ थिरा सवे ॥३२॥

शब्दार्थ–चार प्रकारना देवता, तिर्यंच अने नारकीने विषे दीर्घकालिकी संज्ञा होयछे. विगलेंद्रियने विषे हेतुपदेशिकीसंज्ञा होयछे अने सर्वे थावरो संज्ञा रहित होयछे. ॥३२॥

मणुआण दीहकालिअ, दिठिवाउवएसिआ केवि ॥

हवे साडा छ गाथाथी गति संज्ञा कहे छे.

पज्जपणतिरि मणुअ चिय, चउविहदेवेसु गच्छंति ॥३३॥

शब्दार्थ–मनुष्यने दीर्घकालिकी संज्ञा होयछे अने केटलाक

मनुष्यने दृष्टिवादोपदेशिकी संज्ञा पण होयछे. (इति संज्ञाद्वार)
पर्याप्ता पंचेंद्रिय एवा तिर्यंच अने मनुष्य निश्चे चार प्रकारना
देवताने विषे जायछे. ॥ ३३ ॥

संखाउपज्जत्तप–णिंदितिरियनरेसु तहेव पज्जत्ते ॥
भूदगपत्तेयवणे. एएसु च्चिय सुरागमणं ॥३४॥

शब्दार्थ–संख्याता आयुष्यवाला पर्याप्ता पंचेंद्रि तिर्यंच
अने मनुष्यने विषे, तेमज पर्याप्ता पृथ्वीकाय, अप्काय अने प्रत्ये
क वनस्पति काय ए पांचने विषे निश्चे देवतानुं उत्पन्न थवुं थायछे.

पज्जत्तसंखगब्भय–तिरीयनरा निरयसत्तगे जंति ॥
निरउवट्टा एए–सु उप्पज्जंति न सेसेसु ॥३५॥

शब्दार्थ–पर्याप्ता अने संख्याता आयुष्यवाला गर्भज तिर्यं
च अने मनुष्यो, सात नरकने विषे उत्पन्न थायछे अने नरकमांथी
निकलेला जीवो ए बेने विषे उत्पन्न थाय छे. बाकीना दंडकने
विषे उत्पन्न न थाय. ॥ ३५ ॥

पुढवीआउवणस्सइ–मज्झे नारयविवज्जिया जीवा ॥
सव्वे उववज्जंति. नियनियकम्माणुमाणेणं ॥३६॥

शब्दार्थ–पृथ्वीकाय, अप्काय अने वनस्पतिकायनी मध्ये
नारकीने वर्जीने सर्व जीवो पोतपोतानां कर्मना अनुमानथी उ
त्पन्न थाय छे. ॥ ३६ ॥

पुढवाइदसपएसुं. पुढवीआउवणस्सइं जंति ॥
पुढवाइदसपएहिय. तेऊवाऊसु उववाउ ॥३७॥

शब्दार्थ–पृथ्वीआयादि दश पदनां पृथ्वीकाय, अप्काय अने
वनस्पतिकायना जीवो उत्पन्न थायछे अने पृथ्वीआयादि दश पदथी
निकलेला जीवो तेउकाय अने वायुकायने विषे उत्पन्न थायछे

तेऊवाऊगमणं, पुढवीपमुहंमि होइ पयनवगे ॥
पुढवाइठाणदसगा, विगलाइं तिअ्र तहिं जंति ॥३८॥

शब्दार्थ-तेउकाय अने वाउकायनुं जवुं पृथ्वी कायादि नव पदने विषे होयछे. पृथ्वीकायादि दश स्थानकना जीवो त्रण विकलेंद्रिय थाय छे अने ते त्रण विकलेंद्रिय ते पृथ्वीकायादि दश पदमां जाय छे. ॥ ३८ ॥

गमणागमणं गप्रय, तिरियाणं सयलजीवठाणेसु ॥
सवत्र जंति मणुआ, तेऊवाऊसु नो जंति ॥३९॥

शब्दार्थ-गर्भज तिर्यंचोनुं सर्वे दंडकोने विषे जवुं आववुं थायछे. मनुष्यो सर्वे दंडकोने विषे जायछे. पण तेउकाय अने वाउकायने विषेथी मनुष्यो न थाय. (इति गतिद्वार) ॥ ३९ ॥

हवे त्रण गाथाथी आगति द्वार कहे छे.

अंतरदीवा जुअला, तेसिं गईउ हवंति इक्कारा ॥
दसभवणा इक्कवणे, आगईउ मणुअतिरिएसु ॥४०॥

शब्दार्थ-अंतरद्वीपना युगलीयानुं आववुं दश भवनपति अने एक व्यंतर एम अग्यारमां होय छे, अने ए अंतरद्वीपना जुगलीयामां उत्पन्न थवुं मनुष्य अने तिर्यंचथी होय छे. ॥४०॥

असन्नितिरिए गईउ, बावीसा जोइसविमाणविणा ॥
आगइउ थावरपंच, विगलपंचिंदितिरियनरा ॥४१॥

शब्दार्थ-असन्नि तिर्यंचनी गति ज्योतसी अने वैमानीक विना बावीश दंडकमां होयछे अने असन्नि तिर्यंचमां उत्पन्न थवुं ते पांच थावर, त्रण विकलेंद्रिय, पंचेंद्रियतिर्यंच अने मनुष्यो मांथी होय छे. ॥ ४१ ॥

संमुछिम माणुआणं, दह गईउ पंचथावरा विगला ॥
पंचिंदिय तिरियनरा, आगइउ तेउवाउविणा ॥४२॥

शब्दार्थ-समुर्छिम मनुष्योनी गति पांच थावर, त्रण विकलेंद्रिय, पंचेंद्रिय तिर्यंच अने मनुष्य ए दशमां थायछे अने समुर्छिम मनुष्यमां उत्पन्न थवुं ते तेउकाय अने वाउकाय विना ते आठ मांथी थाय छे. ॥ ४२ ॥ (इति आगतिद्वार)

हवे एक गाथाथी वेदद्वार कहे छे.

वेयतिय तिरियनरेसु, इत्थीपुरिसो चउविहसुरेसु ॥
थिरविगलनारएसु, नपुंसवेउ हवइ एगो ॥४३॥

शब्दार्थ–तिर्यंच अने मनुष्यने विषे त्रण वेद होय. चार प्रकारना देवताने विषे स्त्रीवेद अने पुरुषवेद होय. पांच थावर, त्रण विकलेंद्रिय अने नारकीने विषे एक एक नपुंसकवेद होय छे. ४३

हवे बे गाथाथी अल्प बहुत्वद्वार कहे छे

पज्जमणुबायरग्गी, वेमाणीअभवणनिरयवंतरिया ॥
जोइसचउपणतिरिआ, बेइंदितेइंदिभूआऊ ॥४४॥

शब्दार्थ–पर्याप्ता मनुष्य सर्व दंडकथी थोडा, तेथी असंख्यात गुणा बादर अग्निकाय, तेथी असंख्यात गुणा वैमानीक, तेथी असंख्यात गुणा भवनपति, तेथी असंख्यात गुणा नारकी, तेथी असंख्यात गुणा व्यंतर, तेथी असंख्यात गुणा ज्योतषी, तेथी संख्यात गुणा चउरिंद्रिय. तेथी अधिक पंचेंद्रिय तिर्यंच, तेथी अधिक बेइंद्रिय, तेथी अधिक तेइंद्रिय, तेथी असंख्यात गुणा पृथ्वीकाय, तेथी असंख्यात गुणा अप्काय छे. ॥ ४४ ॥

वाऊवणस्सइ चिय, अहिया अहिया कमेणिमे हुंति ॥
सव्वेवि इमे भावा, जिणा मये णंतसो पत्ता ॥४५॥

शब्दार्थ–तेथी असंख्यात गुणा वाउकाय अने तेथी अनंत गुणा वनस्पतिकाय छे. निश्चे ए सर्व अनुक्रमे अधिक अधिक होय छे. हे जिनेश्वर! आ सर्व एवा भावो में अनंतीवार प्राप्त कर्या छे.

शब्दार्थ—चार, सात, आठ, नव अने अगीयार एटला शिखरोनी संख्यायें करीने अनुक्रमे सोल बे, बे, उंगणचालीस अने बे ए पर्वतोने गुणतां सर्व मली चारसो सम्सठ शिखरो थायछे.

चउतीसं विजयेसु, उसुकुडा अठ मेरूजंबूम्मि ॥
अठय देवकुराइं, हरीकुम्हरिस्सहे सठी ॥१७॥

शब्दार्थ—चोत्रीस विजयने विषे ऋषभशिखर चोत्रीस छे. मेरू अने जंबूवृक्ष उपर आठ आठ शिखर छे. देवकुरुने विषे आठ शिखर, हरिशिखर अने हरिसहशिखर ए सहित साठ भूमीशिखर छे.

हवे एक गाथायी तीर्थद्वार कहे छे.

मागहवरदामपभा—सं तिह्न विजयेसु ऐरवयभरहे ॥
चउतीसा तिहिंगुणिया, डुरुत्तरसयं तु तिछाणं ॥१८॥

शब्दार्थ—चत्रीस विजय, ऐरवत अने भरत ए चोत्रीसमां मागध, वरदाम अने प्रभास एवा एक नामनां चोत्रीस तीर्थ छे. तेथी ते चोत्रीसने त्रण गुणा करतां सर्व मलीने एकसोने बे तीर्थ थाय छे.

हवे एक गाथायी श्रेणीद्वार कहे छे.

विज्जाहर अभिउगी—य सेढीउ डुन्नि डुन्नि वेअड्ढे ॥
इय चउगुणा चउतीसा, छत्तीससयं तु सेढीणो ॥१९॥

शब्दार्थ—दरेक वैताढ्य पर्वत उपर विद्याधर अने अभियोगीदेव तेमनी दरेकनी बबे बबे श्रेणीओ छे; तेथी ते चार श्रेणीओने चोत्रीसे गुणी करतां एकसो छत्रीस श्रेणीओ थायछे. ॥१९॥

हवे एक गाथायी विजयद्वार अने द्रहद्वार कहे छे.

चक्कीजियवाइं, विजयाइं इह हुंति चउतीसा ॥
महदह छ पउमाइं, कुरुसु दसगं ति सोलसगं ॥२०॥

शब्दार्थ—अहिं चक्रवर्तीए जीतवा विजया चोत्रीस छे. तेम ज अहिं पद्मादि म्होटा द्रहो छ छे अने कुरुक्षेत्रमां दश द्रह छे.

सर्व मली सोल हद्द थाय छे. ॥ २० ॥

हवे छ गाथाथी नदीद्वार कहे छे.

गंगा सिंधु रत्ता, रत्तवई चउ नइउ पत्तेयं ॥
चउदसहिं सहस्सेहिं, समगं वच्चंति जलहिमिं ॥२१॥

शब्दार्थ–गंगा, सिंधु, रक्ता अने रक्तवती ए चार नदीयो छे. ते दरेक नदी चौदहजार परिवार सहित समुद्रमां जाय छे. चारे नदीयोनो परिवार छपन्न हजार छे. ॥ २१ ॥

एवं अभिंतरिया, चउरो पुण अठविस सहस्सेहिं ॥
पुणरवि छप्पन्नेहिं, सहस्सेहिं जंति चउसलिला ॥२२॥

शब्दार्थ–वली एवीज रीत हिमवंतादिकनी अभ्यंतर चार नदीयो प्रत्येक अठावीस हजार नदीयोनो परिवार सहित जाय छे. [चार नदीयोनो परिवार ११२०००] अने हरिवर्ष क्षेत्रनी अने रम्यक क्षेत्रनी चार नदीयो प्रत्येक छप्पन्न हजार नदीयोना परिवार सहित जाय छे [चार नदीयोनो परिवार–२२४०००]

कुरुमझे चउरासी, सहस्सा तहय विजय सोलसेसु ॥
बत्तीसाण नईणं, चउदस सहस्साइं पत्तेयं ॥२३॥

शब्दार्थ–देवकुरु उत्तरकुरुमां छ नदीयोनो सर्व परिवार चोरासी हजारनो छे अने सोल विजयमां बत्रीस नदीयो छे, तेमां दरेकने चौदहजार नदीयोनो परिवार छे. ॥ २३ ॥

चउदस सहस्स गुणिया, अमतीस नइउ विजयमझिल्ला॥
सीउयाए निवमंति, तहय सीयाइएमेव ॥२४॥

शब्दार्थ–ए बत्रीस नदीयोने चौद हजारे गुणतां चारलाख आमत्रीस हजार थाय छे. तेमज विजयमांदेली आमत्रीस नदीयोने पण चौदहजारे गुणतां सर्व मली पांचलाख बत्रीस हजार थाय. एटली नदीयो सीतोदामां तेमज सीतामां मले छे. २४

सीया सीउयाविय, बत्तीस सहस्स पंचलरकेहिं ॥
सव्वे चउदस लरका, छप्पन्न सहस्स मेलविया ॥२५॥

शब्दार्थ–सीता अने सीतोदा ए बे नदीयो प्रत्येक पांचला ख बत्रीस हजारना परिवारवाली छे. ते सर्वे एकठी करतां चौद लाख छप्पन्नहजार थाय. [१४५६०००] ॥ २५ ॥

छ जोयण सकोसे, गंगासिंधूण विछरो मूले ॥
दसगुणिउ पद्यंते, इय डुडुगुणणेणं सेसाणं ॥२६॥

शब्दार्थ–गंगा अने सिंधु नदीनो मूलमां विस्तार सवा छ जोजन छे. तथा छेडे तेथी दश गुणो [६२॥ जोजन] विस्तार छे ए प्रमाणे बीजी नदीयोनो तेथी बमणो विस्तार जाणवो. २६

जोयणसयमुच्चिठ्ठा, कणयमया सिहरिचुल्लहिमवंता ॥
रूप्पिमहाहिमवंता, डुसु उच्चा रूप्पकणयमया ॥२७॥

शब्दार्थ–सुवर्णमय शिखरी अने लघुहिमवंत ए बे पर्वतो एक सो योजन उंचा छे. रूपानो रूपीपर्वत अने सुवर्णनो महाहि मवंत पर्वत ए बे बसो जोजन उंचा छे. ॥ २७ ॥

चत्तारि जोयण सए, उच्चिठ्ठो निसढनीलवंतो य ॥
निसढो तवणिद्यमउ, वेरुलिउ नीलवंतो य ॥२८॥

शब्दार्थ–नैषध अने नीलवंत ए बे पर्वतो चारसो जोजन उंचा छे. तेमां नैषध तपावेला सुवर्ण सरखो अने नीलवंत लीला रत्नना वर्ण सरखो छे. ॥ २८ ॥

सव्वेवि पव्वयरा, समयखीतंमि मंदरविहुणा ॥
धरणीतले मुवगाढा, उस्सेय चउछ जायंमि ॥२९॥

शब्दार्थ–फक्त अढीद्वीपना मेरु विना काल अथवा क्षेत्र ए वेयने विषे सर्वे साश्वतापर्वतो उंचपणाना चोथाजागेपृथ्वीमां उंडाहोयछे.

खंभाई गाहाहिं, दसहिं दारेहिं जंबूदीवस्स ॥
संघयणी सम्मत्ता, रइया हरिभद्दसूरिहिं ॥३०॥

शब्दार्थ–खांभवादिकनी गाथाए करीने दश द्वारथी हरिभद्रसूरिये रचेली जंबूद्वीपनी संग्रहणी समाप्त थइ. ॥३०॥

चैत्यवंदन भाष्य.

वंदित्तु वंदणिज्जे, सव्वे चिइवंदणाइसुविचारं ॥
बहुवित्तिभासचुणी–सुयाणुसारेण वुच्छामि ॥ १ ॥

शब्दार्थ–वंदन करवा योग्य एवा सर्व (पांच) परमेष्ठीने वांदीने चैत्यवंदन, गुरुवंदन अने पच्चखाणना उत्तम विचारने बहु वृत्ति, भाष्य अने चूर्णिरूप सूत्रना अनुसारे हुं कहीश. ॥१॥

चार गाथाथी २४ द्वार कहेछे.

दहतिगअहिगम पणगं, दुदिसितिहुग्गहतिहाउवंदणया
पणिवायनमुक्कारा, वण्णा सोलसयसीयाला ॥ २ ॥

शब्दार्थ–१ नैषधिक आदि दशत्रिक, २ पांच अभिगम, ३ स्त्री पुरुषने उभा रहेवानी बे दिशा, ४ जघन्य मध्यम, उत्कृष्ट त्रण अवग्रह, ५ त्रण प्रकारनुं चैत्यवंदन, ६ पांच अंगे प्रणिपात, ७ नमस्कार, ८ नवकार प्रमुख नव सूत्रना सोलसोने सुडतालीश अक्षर–॥ २ ॥

इगसीइसयं तु पया, सगनउइसंपयाउ पणदंडा ॥
बारअहिगार चउवं–दणिज्जसरणिज्जचउहजिणा ॥३॥

शब्दार्थ–वली ए नवकार प्रमुख नव सूत्रना एकसोने एकासी पद, १० ए नवसूत्रनी सत्ताणु संपदा, ११ नमुत्थुणादि पांच दंड, १२ बार अधिकार, १३ वांदवायोग्य, १४ शरण करवा योग्य, १५ नामस्थापनादिक चार प्रकारना जिन–॥३॥

चउरो थुइ निमित्तठ–बारहहेऊअ सोलआगारा ॥
गुणवीसदोसउस्स–ग्गमाणथुत्तं च सगवेला ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–१६ चार प्रकारनी स्तुति, १७ पापक्षपणादिक आठ निमित्त, १८ फल सावबाना बार हेतु अने १९ अपवादथी सोल आगार, २० काउस्सग्गमां उगणीश दोष, २१ काउस्सग्गनुं प्रमाण, २२ वीतरागनीस्तुति अने२३दररोज सात वखत चैत्यवंदन

दसआसायणचाउ, सव्वे चिइवंदणाइं ठाणाइं ॥
चउवीसदुवारेहिं, दुसहस्सा हुंति चउसयरा ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–२४ देरामां चैत्यवंदन वखते तांबुल प्रमुख दश आशातनानो त्याग. आ उपर चारे गाथामां कहेला चोवीश द्वारे करीने सर्व मली चैत्यवंदननां स्थानको बे हजार अने चुमोतेर थाय छे. ॥ ५ ॥

हवे दश त्रिकनां नाम कहेछे.

तिन्नि निसिहि तिन्निउ, पयाहिणा तिन्नि चेव य पणामा
तिविहा पूया य तहा, अवत्थतियभावणं चेव ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–१ त्रण निसिही, २ त्रण प्रदक्षिणा अने ३ त्रण प्रणाम, ४ त्रण प्रकारी पूजा, वली तेमज ५ त्रण अवस्थानुं भाववुं

तिदिसिनिरिक्खणविरई, पयभूमिपमज्जणं च तिक्खुत्तो ॥
वन्नाइतियं मुद्दा–तियं च तिविहं च पणिहाणं ॥७॥

शब्दार्थ–६ त्रण दिशामां जोवानुं विरमण अने ७ त्रणवार पग मूकवानी भूमिनुं प्रमार्जन, ८ वर्णादिकनुं आलंबन, ९ वली त्रण मुद्रा अने १० त्रण प्रकारनुं प्रणिधान. ए दशत्रिकनां नाम जाणवां. ॥

त्रण निसिही क्यां क्यां ठेकाणे कहेवी ते कहेछे.

घरजिणहरजिणपूआ–वावारच्चायउ निसिहितिगं ॥
अग्गदारे मज्झे, तइया चिइवंदणासमये ॥ ८ ॥

शब्दार्थ-घर, जिनमंदिर अने जिनपूजाना व्यापारना त्यागथी त्रण निसिहि थायछे. तेमां प्रथम जिनमंदिरना आगला बारणामां, गभारामां अने चैत्यवंदनने अवसरे एम त्रण निसिहि साचववी. ॥ ८ ॥

हवे प्रणाम त्रिक कहेछे.

अंजलिबद्धो अद्धो-णओ अ पंचंगओ अ तिपणामा ॥
सव्वत्थ वा तिवारं, सिराइनमणे पणामतियं ॥ ९ ॥

शब्दार्थ-१अंजलीबद्ध प्रणाम, २अर्धावनत प्रणाम, ३ पंचांग प्रणाम ए त्रण प्रणाम जाणवा. अथवा सर्व प्रणाम स्थाने वखते त्रणवार मस्तक नमाववुं ए पण त्रण प्रणाम जाणवा. ९

हवे पूजा त्रिक कहेछे.

अंगग्गभावभेया, पुप्फाहारथुईहिं पूयतिगं ॥
पंचोवयारा अट्ठो-वयारसव्वोवयारा वा ॥१०॥

शब्दार्थ-पुष्प केशरादिके करीने अंगपूजा, फलादि मूकवा थी अग्रपूजा अने स्तुतिथी भावपूजा एम त्रण जातनी पूजा थायछे. अथवा पंचोपचार पूजा, अष्टोपचार पूजा अने सर्वोपचार पूजा ए पूजात्रिक थायछे. ॥ १० ॥

हवे अवस्था त्रिक कहेछे

भाविज्ज अवत्थतियं, पिंडत्थपयत्थरूवरहियत्तं ॥
छउमत्थकेवलित्तं, सिद्धत्तं चेव तस्सत्थो ॥ ११ ॥

शब्दार्थ-हे भव्यजीव! तुं भगवंतनी पिंडस्थादि त्रण अवस्था भाव. तेमां पिंडस्थावस्थाने छद्मस्थावस्थाये, पदस्थावस्थाने केवलीज्ञानावस्थाये अने रूपरहितावस्थाने सिद्धावस्थाये भाववी, एज विधे ते त्रिअवस्थानो अर्थ छे. ॥ ११ ॥

ए त्रण अवस्था [illegible] हवे [illegible] कहेछे.

एहवणच्चगेहिं छउम-त्थवत्थ पमिहारगेहिं केवलियं ॥
पलियं कुस्सग्गेहि य, जिणस्स जाविज्ज सिद्धत्तं ॥१२॥

शब्दार्थ—जिनराजनी न्हवण, पखाल अने पूजाये करीने छद्मस्थावस्था जाववी; आठ प्रातिहार्ये करीने केवली अवस्था जाववी अने पर्लोंठीवालीने काउस्सग्गने आकारे करीने सिद्धावस्था जाववी. ॥ १२ ॥

हवे छ दिशामां जोवाथी निवर्त्तवानुं त्रिक कहेछे.

उड्ढाहोतिरियाणं, तिदिसाणनिरक्खणं चइज्जहवा ॥
पच्छिमदाहिणवामाण, जिणमुहन्नत्थदिठिजुत्त ॥१३॥

शब्दार्थ—उंचे, नीचे अने आडुं अवलुं ए त्रण दिशाए जोवुं त्यजी देवुं. अथवा पोतानी पाछल, जमणीबाजु अने डाबीबाजुं जोवुं त्यजी दइ फक्त जिनेश्वरनां मुखने विषे दृष्टि राखवी. १३

हवे आलंबन अने मुद्रा त्रिक कहेछे.

वन्नतियं वन्नत्था-लंबणमालंबणं तु पडिमाई ॥
जोगजिणमुत्तिसुत्ती-मुद्दाभेएणं मुद्दतियं ॥ १४ ॥

शब्दार्थ—वर्णालंबन, अर्थालंबन, अने प्रतिमालंबन ए त्रण वर्णत्रिक जाणवा. तेमां प्रतिमात्रिक शब्दथी भाव अरिहंतादिकनुं तथा स्थापनादिकनुं ग्रहण करवुं. वली योगमुद्रा, जिनमुद्रा अने मुक्तासुक्तिमुद्रा एवा मुद्राना भेदथी मुद्रात्रिक जाणवुं. १४

प्रथम योगमुद्रानुं स्वरूप कहे छे.

अन्नुन्नंतरिअंगुलि-कोसागारेहिं दोहिं हत्थेहिं ॥
पिट्टोवरि कुप्परसं-ठिएहिं तह जोगमुद्दत्ति ॥१५॥

शब्दार्थ—परस्पर बंने हाथनी दसे आंगुली अंतरित करेला कमलना डोडाना आकारवाला तेमज पेटनी उपर बंने कोणीओ मूकेला एवा बे हाथ करीने रहेवुं. ते जोगमुद्रा कहेवाय छे. १५

हवे जिनमुद्रानुं लक्षण कहे छे.

चत्तारि अंगुलाइं, पुरउ ऊणाइं जछ पछिमउ ॥
पायाणं उस्सग्गो, एसा पुण होइ जिणमुद्दा ॥१६॥

शब्दार्थ–चली जेमां पगना आगला पहोंचाने परस्पर चार आंगलनो आंतरो राखीने अने पाछली पानीनी बाजुनो कांइ हंगे आंतरो राखीने जे काउस्सग्ग करवो ए जिनमुद्रा होयछे.

हवे मुक्ता शुक्ति मुद्रा कहेछे.

मुत्तासुत्तीमुद्दा, जछ समा दोवि गब्भिआ हत्था ॥
ते पुण निलाडदेसे, लग्गा अन्ने अलग्गति ॥१७॥

शब्दार्थ–जेमां बन्ने पण हाथ सरखी रीते गर्भित राखी अने ते बन्ने हाथ ललाटना मध्ये लगाड्या होय (अहिं कोइ आचार्यने मते) न लगाड्या होय तोपण मुक्ताशुक्तिमुद्रा कहेवाय छे.

हवे कइ मुद्राये कइ क्रिया करवी ते कहे छे.

पंचंगो पणिवाउ. थयपाठो होइ जोगमुद्दाए ॥
वंदण जिणमुद्दाए. पणिहाणं मुत्तिमुद्दाए ॥१८॥

शब्दार्थ–जोगमुद्राये करीने पंचांग प्रणिपात अने स्तवपाठ थायछे; जिनमुद्राये वंदन अने मुक्ताशुक्ति मुद्राये प्रणिधान थायछे.

हवे प्रणिधानत्रिकनुं स्वरूप कहे छे.

पणिहाणतिगं चेइय–मुणिवंदणपछणासरूवं वा॥
मणवयकाएगत्तं, सेसतियछो उ पयडुत्ति ॥ १९ ॥

शब्दार्थ–चैत्यवंदन, मुनिवंदन अने प्रार्थनास्वरूप ए त्रण प्रणिधानत्रिक जाणवुं. अथवा मन, वचन अने
पणुं करवुं ते [illegible] प्रणिधानत्रिक कहेवाय.
तमा त्रिकनो [illegible] प्रगटज छे. ॥[illegible]

हवे त्रीजुं पांच प्रकारनुं अभिगमद्वार कहे छे.

सचित्तदव्वमुज्झण–मचित्त मणुज्झणं मणेगत्तं ॥
एगसाडिउत्तरासं–ग अंजलि सिरसि जिणदिठे २०

शब्दार्थ–१ सचित्त द्रव्यनो त्याग, २ अचित्त वस्तुने न तजवानी अनुज्ञा, ३ मननुं एकाग्रपणुं, ४ एकसाडी उत्तरासंग अने ५ जिनेश्वरनां दर्शन थये माथा उपर अंजलि जोडवी. ए पांच अभिगम जाणवा. ॥ २० ॥

इय पंचविहाभिगमो, अहवा मुच्चंति रायचिन्हाइं ॥
खग्गं छत्तोवाणह, मउडं चमरे अ पंचमए ॥२१॥

शब्दार्थ–ए पूर्वे कहेला पांच प्रकारना अभिगम देवगुरु पासे आवता साचववा, अथवा राजचिन्ह त्यजी देवां. ते राजचिन्ह आ प्रमाणे. १खड्ग, २छत्र, ३मोजडी, ४मुकुट, अने ५चामर.

हवे बे दिशिनुं चोथुं अने त्रण अवग्रहनुं चोथुं द्वार कहे छे.

वंदंति जिणे दाहिण–दिसि ठिआ पुरिस वामदिसि नारी
नवकरजहन्नु सठि–करजिठ मज्झुग्गहो सेसो ॥२२॥

शब्दार्थ–जिनेश्वरनी दक्षिण दिशा एटले जमणी बाजुए उभा रहीने पुरुषो वंदना करे अने वामदिशा एटले डाबी बाजुए उभा रहीने स्त्रीयो वंदना करे. प्रभुथी नवहाथ दूर रहेवाथी जघन्य, साठ हाथ रहेवाथी उत्कृष्ट अने नव तथा साठनी अंदर उभा रहेवाथी मध्यम अवग्रह थाय छे. ॥ २२ ॥

हवे चैत्यवंदन करवानुं पांचमुं द्वार कहे छे.

नमुक्कारेण जहन्ना, चिइवंदण मझ दंडथुइजुअला ॥
पणदंड थुइचउक्कग–थयपणिहाणेहिं उक्कोसा ॥२३॥

शब्दार्थ–नवकार बोली नमस्कार करवाथी जघन्य, अरिहंत चेइयाणानुं युगल तथा चार स्तुति बोली नमस्कार करवाथी

मध्यम अने पाच नमुत्थुणरूप दंडक तथा आठ स्तुतिनां स्तवन अने त्रण प्रणिधाने करीने उत्कृष्ट चैत्यवंदना जाणवी. २३

अन्ने बिंति गेणं, सक्कत्थएणं जहन्नवंदणया ॥
तदुगतिगेण मझा, उक्कोसा चउहिं पंचहिं वा ॥२४॥

शब्दार्थ—केटलाक आचार्यो एम कहे छे के, एकवार नमुत्थुण बोलवाथी जघन्य, बे अथवा त्रणवार नमुत्थुण बोलवाथी मध्यम अने चार अथवा पांचवार नमुत्थुण बोलवाथी उत्कृष्ट चैत्यवंदन थाय छे.

हवे छठुं प्रणिपात तथा सातमुं नमस्कार द्वार कहे छे.

पंचंगो पणिवाओ, दोजाणू करदुगुत्तमंगं च ॥
सुमहत्थनमुक्कारा, इग दुग तिग जाव अठसयं॥२५॥

शब्दार्थ—बे ढींचण बे हाथ अने मस्तक ए पांच अंग पृथ्वीने अडाडी नमस्कार करवा ते पंचांग प्रणिपात कहेवाय. तेमज एक, बे, त्रणथी मांडी एकसो आठ नवकार कहेवा ते नमस्कार कहेवाय. ॥ २५ ॥

हवे अक्षर, पद अने संपदानी संख्याना आठमा द्वारनुं वर्णन करे छे.

अडसठि अठवीसा, नवनउयसयं च दुसयसगनउया॥
दोगुणतिस दुसठा, दुसोलअडनउयसयदुवन्नसयं ॥२६॥

शब्दार्थ—१ नवकारनां अडसठ, २ इच्छामि खमासमणनां अठावीश, ३ इरिया वहियानां एकसोने नवाणुं, ४ नमुत्थुणनां बसोने सत्ताणुं, ५ अरिहंत चेइयाणंनां बसो उगणत्रीस, ६ लोगस्सनां बसोने साठ, ७ पुक्खरवरदीनां बसोने सोल, ८ सिद्धाणं बुद्धाणंनां एकसो अठाणुं, ९ जावंति चेइयाइं, जावंति केविसाहु अने जयवि यराय ए त्रणनां एकसो बावन अक्षर छे. सर्व मली १६४७ थाय छे.

इअ नवकारखमासमण–इरियसक्कत्थआइदंडेसु ॥
पणिहाणेसु अ अदुरु–त्तवन्नसोलसयसीयाला॥२७॥

शब्दार्थ—ए प्रमाणे नवकार, खमासमण, इरियावहि, शक्र स्तवादि दंडकमां अने प्रणिधानमां एम सर्व मली फक्त एकवार उच्चार करेला अक्षरो सोलसोने सुडतालीं थाय छे. ॥२७॥

नववत्तीसतित्तीसा, तिचत्तअडवीससोलवीसपया ॥
मंगलइरियासक्क—थयाइसु इगसीइसयं तु पदा ॥२८॥

शब्दार्थ—नवकार, इरियावहि अने नमुत्थुणादि सात पदमां नव, बत्रीश, तेत्रीश, तेंतालीश, अठावीश, सोल अने वीश एट ला पदो होय छे. सर्व मलीने एकसो एकाशी पद थाय छे. २८

अट्ठ ट्ठ नव ट्ठ य अ—ट्ठवीस सोलस य वीस वीसामा ॥
कमसो मंगलइरिया—सक्कत्थयाईसु सगनउई ॥२९॥

शब्दार्थ—नवकार, इरियावहि अने नमुत्थुणादिक सात सूत्र मां अनुक्रमे आठ, आठ, नव, आठ, अठावीस, सोल अने वीश एटला विसामा एटले संपदा होय छे. सर्व मलीने सत्ताणुं थाय.

तेज वातने फरीथी कहे छे.

वण्णट्ठसट्ठि नवपय, नवकारे अट्ठसंपया तत्थ ॥
सगसंपय पयतुल्ला, सत्तरक्खरअट्ठमी दुपया ॥३०॥

शब्दार्थ—नवकारमां अडसठ अक्षर, नव पद तथा आठ संपदा होय छे. तेमां सात संपदा तो सात पदनी छे अने सत्तर अक्षरनी आठमी संपदा छेल्ला बे पदनी छे. ॥ ३० ॥

पणिवायअक्खराइं, अट्ठावीसं तहा य इरियाए ॥
नवनउयमक्खरसयं, दुतीसपय संपया अट्ठ ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ—खमासमणनां अक्षर अठावीश तेमज इ रियावहिनां एकसो नवाणुं अक्षर, बत्रीश पद अने आठ संपदा छे

दुगदुगइगचउइगपण—इगारछगइरियसंपयादिपया ॥
इच्छाइरिगमपाणा—जेमेएगिंदिअभितस्स ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ-इरियावहिनी आठ संपदाना अनुक्रमे बे, बे, एक चार, एक, पांच, अगीयार अने छ एटला पदो जाणवां अने आदि पद तो इच्छामि, इरियावहियाए, गमणागमणे, पाणक्कमणे, जे मे जीवा, एगिंदिया, अभिहया अने तस्सउत्तरी ए आठ जाणवा.

हवे इरियावहिनी आठ संपदानां नाम कहे छे.

अप्पुवगमो, निमित्तं, उहेअरहेतुसंगहे पंच ॥
जीवविराहणपमि-क्कमणभेयउ तिन्नि चूलाए ३३

शब्दार्थ-अभ्युपगम, निमित्त, ओघ, इतरहेतु अने पांचमी संग्रह वली जीव, विराधना अने प्रतिक्रमणएवा भेदथी इरियावहिनी आठ संपदा छे. तेमां प्रथमनो पांच मूलसंपदा अने पाछलनी त्रण चूलिका संपदा जाणवी. ॥ ३३ ॥

हवे नमुत्थुणना प्रत्येक संपदानां पदनी संख्या तथा आदिपद कहे छे.

दुतिचउपणपणपणदुच-उतिपदसक्कत्थयसंपयाइपया॥
नमुआइगपुरिसोलो-गअभयधम्मप्पजिणसव्वं ॥३४॥

शब्दार्थ-नमुत्थुणनी नवसंपदामां अनुक्रमे बे, त्रण, चार, पांच, पांच पांच, बे, चार अने त्रण एटला पदनी संख्या होयछे. तेमां दरेकनुं आदि पद, नमुत्थुणं, आइगराणं, पुरिसुत्तमाणं, लोगुत्तमाणं, अभयदयाणं, धम्मदयाणं, अप्पडिहयवरनाण, जिणाणं, सव्वनूणं, सव्वदरिसिणं ए जाणवां. ॥ ३४ ॥

हवे नमुत्थुणनी नव संपदाना नाम कहे छे.

थोअव्वसंपया उह-इयरहेऊवओगतद्धेऊ ॥
सविसेसुवओगसरूव-हेऊ नियसमफल मुक्खे॥३५॥

शब्दार्थ-स्तोतव्य संपदा, सामान्य हेतु संपदा, विशेष हेतु संपदा, उपयोग संपदा, तद्धेतु संपदा, सविशेषउपयोगहेतु संपदा, स्वरूपहेतुसंपदा, निजसमफलदसंपदा अने मोक्षसंपदा,

ए नमुत्थुणनी नवसंपदानां नाम कह्यां. ॥ ३५ ॥

हवे नमुत्थुणनां अक्षर, संपदा अने पदनी सर्व संख्या कहे छे.

दोसगनकआ वणा, नवसंपय पयतित्तीस सक्कथए ॥
चेइयथयठसंपय, तिचत्तपय वणडुसयगुणतीसा ॥३६॥

शब्दार्थ–नमुत्थुणमां सर्व मली बसोने सत्ताणुं अक्षर, नव संपदाअने तेत्रीश पद जाणवा. वली अरिहंत चेइयाणंमां सर्व मली आठ संपदा, तेंतालीश पद अने बसोने उगणत्रीश अक्षर जाणवा.

चैत्यस्तव (अरिहंत चेइयाणंनी) संपदाना पदनी संख्या तथा आदि पद कहेछे.

डुछसगनवतियछचउ–छप्पयचिइसंपयापया पढमा ॥
अरिहंवंदणसिद्धा–अन्नसुहुमएवजाताव ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ–आठ संपदामां अनुक्रमे पहेलेथी बे, छ, सात, नव, त्रण, छ, चार अने छ एटलां पदो होय छे. तेमज तेनां अरिहंत चेइयाणं, वंदण वत्तियाए, सद्धाए, अन्नछ ऊससिएणं, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, एवमाइएहिं, जाव अरिहंताणं अने तावकायं. ए नव आदि पदो जाणवां. ॥ ३७ ॥

हवे चैत्यस्तवनी संपदानां नाम कहे छे.

अप्भुवगमो निमित्तं, हेउइगवहुवयंतआगारा ॥
आगंतुगआगारा, उस्सग्गावहिसरूवठ ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ–अभ्युपगम संपदा, निमित्त संपदा, हेतु संपदा, एक वचनांत आगार संपदा, बहु वचनांत आगार संपदा, आगंतुक आगार संपदा, कायोत्सर्गावधि संपदा अने रूप संपदा ए अरिहंत चेइयाणंनी आठ संपदाओ जाणवी. ॥ ३८ ॥

हवे नामस्तवादिकनां पद विगेरेनी संख्या कहे छे.

नामथयाइसु संपय–पयसम अडवीस सोलवीस कमा॥
अडुरुत्तवण दोसठ–डुसय सोलठ नउअसयं ॥३९॥

शब्दार्थ–नामस्तवादिकने विषे पद समान अगवीस, सोल अने वीस अनुक्रमे संपदा जाणवी. तेमज बीजोवार नहि उचरेला अक्षरो बसो सात, बसो सोल अने एकसो अगणुं अनुक्रमे जाणवा. ॥ ३९ ॥

पणिहाणि दुवन्नसयं. कमेण सगति चउवीस तित्तीसा॥
गुणतीस अठवीसा, चउतीसिगतीस वार गुरुवण्णा ४०

शब्दार्थ–प्रणिधान सूत्रमां एकसो बावन अक्षरो जाणवा. हवे नवकारमां सात, खमासमणमां त्रण, इरियावहिमां चोवीस, नमुत्थुणमां तेत्रीस, अरिहंत चेइयाणंमां ओगणत्रीस, लोगस्समां अठावीश, पुक्खरवरमां चोत्रीस, सिद्धाणंमां एकत्रीस अने प्रणिधान त्रणमां बार गुरु अक्षर जाणवा. ॥ ४० ॥

हवे पांच दंडकनुं अने तेने विषे देववांदवाना बार अधिकारनुं १३–१४ मुं द्वार कहे छे.

पणदंडा सक्कथय, चेइअ नामसुअ सिद्धथयइत्थ ॥
दो इग दोदो पंचे य. अहिगारा बारस कमेण ॥४१॥

शब्दार्थ–शक्रस्तव, चैत्यस्तव, नामस्तव, श्रुतस्तव अने सिद्धस्तव ए पांच दंडक छे. तेमां बे, एक, बे, बे अने पांच एम अनुक्रमे सर्व मलीने बार अधिकार छे. ॥ ४१ ॥

हवे ए बार अधिकारना प्रथम पद कहे छे.

नमु जेइअ अरिहं. लोग सब पुक्ख तम सिद्ध जोदेवा ॥
उर्जि चत्ता वेआ. वच्चग अहिगार पढमपया ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ–नमुत्थुणं, जे अइआ, अरिहंत चेइयाणं, लोगस्स, सव्वलोए, पुक्खरवर, तमतिमिर, सिद्धाणं बुद्धाणं, जो देवा, उर्जिंत,

१ लोगस्स, पुक्खरवरदी अने सिद्धाणं बुद्धाणं.
२ वावंति चेइआई. जावंत केविसाहू अने आ [illegible] वीयराय.

चत्तारि अठ,वैयावच्च गराणं, ए बार अधिकारनां प्रथम पद जाणवा.

हवे कया अधिकारे कोने वांदवा ते कहे छे.

पढम अहिगारे वंदे, जावजिणे बीयएउ दवजिणे ॥
इगचेइय ठवणजिणे, तइय चउथंमि नामजिणे ॥४३॥

शब्दार्थ—प्रथम पदना अधिकारमां भावजिनने, बीजा अधिकारमां द्रव्यजिनने, त्रीजा अधिकारमां एक चैत्य स्थापना जिनने अने चोथा अधिकारमां नामजिनने वांदु छुं. ॥ ४३ ॥

तिहुअणठवणजिणे पुण, पंचमए विहरमाण जिणछठे॥
सत्तमए सुयनाणं, अठमए सव्व सिद्ध थुई ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ—वली पांचमा अधिकारमां त्रण भुवनना स्थापना जिनने, छठा अधिकारमां विचरता जिनने, सातमा अधिकारमां श्रुतज्ञानने अने आठमा अधिकारमां सर्व सिद्धनी स्तुति जाणवी.

तित्थाहिव वीरथुइ, नवमे दसमे य उज्जयंतथुई ॥
अठवयाइ इगदिसि, सुदिठि सुरसमरणा चरिमे ॥४५॥

शब्दार्थ—नवमा अधिकारमां तीर्थपति श्री वीरप्रभुनी स्तुति अने दशमा अधिकारमां रेवताचलनी स्तुति जाणवी. तथा अगीयारमा अधिकारमां अष्टापदादिकनी अने बेला अधिकारमां सुदृष्टि देवताना स्मरणरूप स्तुति जाणवी. ॥ ४५ ॥

नव अहिगारा इह ललि-अविछरा वित्तिआइ अणुसारा
तिणि सुयपरंपरया, बीयउ दसमो इगारसमो ॥ ४६ ॥

शब्दार्थ—ए बार अधिकारमां १-३-४-५-६-७-८-९-१२-ए नव अधिकार ललित विस्तार नामना आप्यनी वृत्ति आदिना अनुसारे जाणवा अने २-१०-११, ए त्रण श्रुतनी परंपराथी जाणवा.

आवस्सय चुणीए, जं जणियं सेसया जहिच्छाए ॥
तेणं उज्जंताइवि, अहिगारा सुयमया चेव ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ—जेम आवश्यक सूत्रनी चूर्णीने विषे कह्युं छे ते उ दिंतादि शेष अधिकार इच्छा प्रमाणे जाणवा. ते कारण माटे उ दिंत सेल इत्यादिक गाथाथी पण ते सर्व अधिकार निश्चे श्रुत मय जाणवा. ॥ ४७ ॥

बीउ सुयत्थयाइ, अत्थउ वन्निउ तहिं चेव ॥
सक्कत्थयंते पढिउ, दवारिहवसरि पयमत्थो ॥४८॥

शब्दार्थ—बीजो श्रुतस्तवादि अधिकार अर्थथी श्रुतस्तवमां ज वर्णव्यो छे. वली शक्रस्तवना अंते जे कहेलो छे ते द्रव्य अरिहंतने वांदवाना अवसरे प्रगट अर्थपणे जाणवो. ॥ ४८ ॥

असढाइन्नणवज्जं, गीअत्थ अवारिअंति मज्झत्था ॥
आयरणावि हु आणा, ति वयणउ सु बहु मन्नंति॥४९॥

शब्दार्थ—"पापरहित अने गीतार्थोए नहि वारेला एवा मध्यस्थ पंमित गीतार्थ पुरुषोए करेली आचरणा पण निश्चे भगवंतनी आज्ञा जाणवी," एवां वचनथी भला पुरुषो ते आचरणने बहु माने छे. ॥ ४९ ॥

हवे चार वांदवा योग्यनुं १३-१४-१५ मुं द्वार कहे छे.

चउ वंदणिज्ज जिणमुणि, सुयसिद्धा इह सुराइ सरणिज्जा
चउह जिणा नाम ठवण, दव्वभावजिण भेएणं ॥५०॥

शब्दार्थ—जिन, मुनि, श्रुत अने सिद्ध ए चार वांदवा योग्य छे अने ए जिनशासनना अधिष्ठायक सम्यक् दृष्टि देवता स्मरण करवा योग्य छे. वली नाम, स्थापना, द्रव्य अने भाव एवा जिनना भेदे करीने जिनेश्वरना चार भेद छे. ॥ ५० ॥

हवे ए चार प्रकारना जिननुं स्वरूप चार निक्षेपाथी कहे छे.

नामजिणा जिणनामा, ठवणजिणा पुण जिणंदपडिमाउ
दव्वजिणा जिणजीवा, भावजिणा समवसरणत्था ॥५१॥

हवे एक दिवसमां चैत्यवंदन करवानुं २३ मुं द्वार कहे छे.

पडिकमणेचेइयजिमण, चरिमपडिक्कमणसुअणपडिबोहे
चिइवंदण इअ जइणो, सत्तउवेला अहोरत्ते ॥५९॥

शब्दार्थ–प्रज्ञातना पडिकमण वखते, देहरे, भोजन वखते, भोजन कर्या पछी, सांजना पडिकमण वखते सूति वखते, पाछली रात्रीये जाग्या पछी. एम रात्री दिवस मली साधुने सात वखते चैत्यवंदन करवुं. ॥ ५९ ॥

पडिक्कमिउ गिहिणोवि हु, सग्गवेला पंचवेल इअरस्स।
पूआसु तिसंझासु अ, होइ तिवेला जहन्नेणं ॥६०॥

शब्दार्थ–पडिक्कमण करता एवा गृहस्थने पण सात वखत अने न करनाराने पांच वखत चैत्यवंदन करवुं. वली जघन्यथी तो त्रणे संध्याये पूजाना अवसरे त्रण वखत चैत्यवंदन करवुं.

हवे आशातनानां नामनुं २४ मुं द्वार कहे छे.

तंबोल पाण भोयण, वाहण मेहुण सुअणनिठ्वणं ॥
मुत्तुच्चारं जुअं, वज्जे जिणनाह जगईए ॥ ६१ ॥

शब्दार्थ–तंबोल खावुं, पाणी पीवुं, भोजन करवुं, जोडा पहेरवा, कामचेष्टा करवी, शयन करवुं, थुंकवुं, लघु नीति करवी, वडीनीति करवी अने जूवटुं रमवुं, ए दश आशातना जिनमंदिरमां त्यजवी. ॥ ६१ ॥

हवे देव वांदवानो विधि कहे छे.

इरि नमुक्कार नमुत्थुण, अरिहंत थुई लोग सव्व थुइ पुक्ख।
थुइ सिद्धा वेआ थुइ, नमुत्थु जावंति थय जयवी ॥६२॥

शब्दार्थ–इरियावहि, नवकार, नमुत्थुणं, अरिहंत चेइयाणं, कही एक स्तुति कहेवी. पछी लोगस्स, सव्वलोए कही स्तुति कहेवी. पछी पुक्खरवर अने स्तुति कहेवी. पछी सिद्धाणं बुद्धाणं,

वेयावच्चगराणं अने स्तुति कहेवी. पछी नमुत्थुणं, जावंति चेइया
इं अने स्तुति कहीने छेवट जयवीयराय पूर्ण कहेवा. ॥ ६२ ॥

हवे समाप्त करता छता फल कहे छे.

सव्वोवाहिविसुद्धं. एवं जो वंदए सया देवे ॥
देविंदविंदमहिअं. परमपयं पावइ लहुसो ॥६३॥

शब्दार्थ—आ प्रमाणे सर्व उपाधियो रहित एवो जे माणस निरंतर अरिहंत देवनी वंदना करे छे ते इंद्रोना समूहे पूजेलां परमपदने तुरत पामे छे. ॥ ६३ ॥

गुरुवंदन भाष्य.

हवे बे गाथाथी त्रण प्रकारना गुरुवंदननां नाम अने तेमां बे प्रकारनां वंदननुं स्वरूप कहे छे.

गुरुवंदण मह तिविहं, तं फिट्टा थोभ वारसावत्तं ॥
सिर नमणाइसु पढमं, पुण्णं खमासमण दुगि बीअं ॥१॥

शब्दार्थ—हवे गुरुवंदन त्रण प्रकारे छे. ते फेटा वंदन, थोभ वंदन अने द्वादशावर्त्त वंदन. तेमां मस्तकने नमाववादिकथी पहेलुं अने बे खमासमण देवाथी बीजुं वंदन थाय छे. ॥ १ ॥

जह दूत्त रायाणं, नमिउं कज्जं निवेइउ पच्छा ॥
वीसज्जिओवि वंदिअ, गच्छइ एमेव इच्छुगं ॥ २ ॥

शब्दार्थ—जेम दूत प्रथम राजाने नमस्कार करीने पछी कार्य निवेदन करे छे अने राजाए रजा आपवाथी ते दूत फरी नमस्कार करी जायछे तेम आ देववंदनमां पण बेवार वंदना जाणवी.

हवे वंदन करवानुं कारण कहे छे.

आयरस्सउ मूलं, विणउ सो गुणवउ अ पडिवत्ती ॥
सा य विहिवंदणाउ, विही इमो वारसावत्ते ॥ ३ ॥

शब्दार्थ-आचारनुं मूल विनय छे अने ते विनय गुणवंतो सेवा रूप जाणवो. वली ते सेवा विधिवंदनाथी थाय छे. ते विधि आ आगल द्वादशावर्त्त वंदनने विषे कहेशे. ॥ ३ ॥

इवे त्रीजुं द्वादशावर्त्त वंदन कहे छे.

तइयं तु छंदण दुगे, तत्थमिहो आइमं सयलसंघे ॥
बीयं तु दंसणीण य. पयट्ठिआणं च तइयं तु ॥ ४ ॥

शब्दार्थ-त्रीजुं द्वादशावर्त्त वंदन तो बे वांदणा देवाथी था यछे. ते पूर्वे कहेला त्रण वंदनमां पहेलुं फेटावंदन चतुर्विध संघे परस्पर तेवा तेवा अवसरे करी शकाय अने बीजुं थोभवंदन गु णवंत मुनिने कराय अने त्रीजुं द्वादशावर्त्त वंदन तो आचार्य प दने विषे रहेला मुनिने कराय. ॥ ४ ॥

इवे ए वंदणानां पांच नाम कहे छे.

वंदन चिइ किइकम्मं, पूआकम्मं च विणयकम्मं च ॥
कायव्वं कस्स व के-णावावि काहेव कइखुत्तो ॥५॥

शब्दार्थ-वंदनकर्म, चित्तिकर्म, कृतिकर्म, पूजाकर्म अने विनयकर्म. ए पांच प्रकारे वंदन करवुं ते कोने? अने कोणे करवुं? वली क्यारे अने केटलीवार? ॥ ५ ॥

कइउणयं कइसिरं, कइहिं व आवस्सएहिं परिसुद्धं ॥
कइदोसविप्पमुक्कं, किइकम्मं कीस कीरईवा ॥६॥

शब्दार्थ-केटलीवार नमवुं? केटलीवार मस्तक नमाववुं? वली केटला आवश्यके करी शुद्ध थवुं? केटला दोषथी मुक्त थवुं? अने कृतिकर्म शा माटे करवुं? ॥ ६ ॥

इवे त्रण गाथाथी वांदणाना बावीस द्वार कहे छे.

पणनाम पणाहरणा, अजुग्गपण जुग्गपण चउअदाया
चउदाय पणनिसेहा, चउअणिसेह ठ कारणया ॥७॥

शब्दार्थ–१ वंदणाना पांच नाम, २ पांच उदाहरण, ३ पास त्थादि पांच अयोग्य, ४ आचार्यादि पांच योग्य, ५ चार वांदणा देवराववाने अयोग्य, ६ चार देवराववाने योग्य, ७ पांच स्थानके वांदणानो निषेध, ८ चार स्थानके वांदणानो अनिषेध, ९ वांद णानां आठ कारण–॥ ७ ॥

आवस्सय मुहणंतय, तणुपेह पणिस दोस बत्तीसा ॥
छ गुण गुरुठवणा डुग्गह, डुछवीसस्कर गुरुपणीसा ॥८॥

शब्दार्थ–१० आवश्यक, ११ मुहपत्तिनी पडिलेहणा, १२ शरीरनी पडिलेहणा, ए बेउ पच्चीश पच्चीश करवा- १३ बत्रीस दोषनो निषेध, १४ छ गुणनुं उपजवुं, १५ गुरु स्थापना, १६ बे अवग्रह अने १७ बसो छवीस अक्षरमां पच्चीस गुरु वर्ण–॥८॥

पय अडवन्न छ ठाणा, छ गुरु वयणा आसायणतित्तीसं
डुविहि डुवीसदोसेहिं, चउसया बाणउइठाणा ॥९॥

शब्दार्थ–१८ अठावन पद, १९ छ स्थानक, २० छ गुरुवचन, २१ तेत्रीस आशातना अने २२ बे प्रकारनो विधि. ए सर्व मळीने चारसो बाणुं स्थानक छे. ॥ ९ ॥

हवे पांच नामनुं १ लुं द्वार कहे छे.

वंदणयं चिइकम्मं, किइकम्मं विणयकम्मपूअकम्मं ॥
गुरुवंदणपणनामा, दवे भावे डुहोहेणं ॥ १० ॥

शब्दार्थ–१ वंदनकर्म, २ चितिकर्म, ३ कृतिकर्म, ४ पूजा कर्म अने ५ विनयकर्म. गुरुवंदनना आ पांच नाम, द्रव्य अने भा व एम बे प्रकारना सामान्यथी जाणवा. ॥१०॥ द्वा. १

हवे पांच दृष्टांतनुं २ जुं द्वार कहे छे.

सीयलय खुडुए वी–र कन्ह सेवगडु पालए संबे–॥
पंचे ए दिट्ठंता, किइकम्मे दव्वभावेहिं ॥

शब्दार्थ-वंदनकर्म उपर शीतलाचार्यनो, चितिकर्म उपर क्षुल्लकाचार्यनो, कृतिकर्म उपर वीरा शालवीनो अने कृष्णनो, पूजाकर्म उपर राजाना बे सेवकनो अने विनयकर्म उपर पालक तथा शांबनो दृष्टांत जाणवो. आ पांच दृष्टांत कृतिकर्म उपर द्रव्य अने भावथी जाणवा. ॥ ११ ॥ द्वा. २

हवे पांच न वांदवा योग्यनुं ३ जुं द्वार कहे छे.

पासत्थो उसन्नो, कुसील संसत्तउ अहाछंदो ॥
दुग दुगति दुगणेगविहा, अवंदणिज्जा जिणमयंमि ॥१२॥

शब्दार्थ-पासत्थो, उसन्नो, कुसीलीयो, संसत्तो अने यथाछंदो ए पांचना अनुक्रमे बे, बे, त्रण, बे अने अनेक भेदो छे. जिन मतमां ए पांच अवंदनीय जाणवा. ॥१२॥ द्वा. ३

हवे पांच वांदवाने योग्यनुं ४ थुं द्वार कहे छे

आयरिय उवज्झाए, पवत्तिथेरे तहेव रायणिए ॥
किइकम्मनिज्जरट्ठा, कायव्व मिमेसि पंचन्हं ॥१३॥

शब्दार्थ-आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक, स्थविर अने तेमज रत्नाधिक, निर्जराने अर्थे ए पांचने कृतिकर्म वंदन करवुं.

हवे चार पासे वंदना न करावीए अने चार पासे करावीए तेनुं ५-६ द्वार कहे छे.

माय पिअ जिठ्ठ भाया, अठमावि तहेव सव्व रायणिए॥
किइकम्म न कारिज्जा, चउसमणाई कुणंति पुणो॥१४॥

शब्दार्थ-माता, पिता, मोटो भाइ तेमज वयथी न्हाना पण ज्ञानादिकथी मोटा, ए चार पासे वांदणां देवरावानुं न करवुं. बाकी चार श्रमण वांदणा आपे. ॥१४॥ द्वा. ५-६

हवे चार अवसरे वांदणा न देवानुं ७ मुं द्वार कहे छे

* [illegible]

विक्खित्त पराहुत्ते, पमत्ते मा कयाइ वंदिज्जा ॥
आहारं नीहारं, कुणमाणे काउ कामे अ ॥१५॥

शब्दार्थ–गुरु व्यग्र चित्तवाला, बीजी बाजु मुख करी बेठे ला, क्रोधवाला अथवा सूतेला, तेमज आहार अने नीहार कर ता होय अथवा करवानी इच्छा करता होय तो न वांदवा. १५

हवे चार स्थानके वांदणा देवानुं ८मुं द्वार कहे छे.

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

पसंते आसणत्थे अ, उवसंते उवट्ठिए ॥
अणुन्नवि तु मेहावी, किइकम्मं पउंजइ ॥१६॥

शब्दार्थ–शांत चित्तवाला, आसन उपर बेठेला, क्रोधादि र हित अने वंदेण इत्यादि कहेवा तैयार होय एवा गुरुने बुद्धिमान पुरुषोए आज्ञा मागवा पूर्वक वंदणा करवी. ॥१६॥ द्वा. ८

हवे आठ कारणे वांदणा देवानुं ए मुं द्वार कहे छे.

पडिक्कमणे सज्झाए, काउस्सग्गे वराह पाहुणए ॥
आलोयण संवरणे, उत्तमट्ठे य वंदणयं ॥ १७ ॥

शब्दार्थ–प्रतिक्रमणमां, स्वाध्यायमां, कायोत्सर्गमां अने अ पराध खमाववामां वांदणा देवा. वली नवा आवेला साधुने, आलोचनामां अने मासखमणादि तपरूप संवरमां तथा अंत संलेखना करता एम आठ कारणे वांदणा देवा. ॥ १७ ॥

हवे पचीस आवश्यकनुं १० मुं द्वार कहे छे,

दोवणयं महाजायं, आवत्ता बार चउसिर ति गुत्तं ॥
दुपवेसिग निक्खमणं, पणवीसावसय किइकम्मे ॥१८॥

शब्दार्थ–बेवार अवनत, एकवार यथाजात, बारवार आव र्त, चारवार शिरनुं अवनत, त्रण गुप्ति, बेवार अवग्रहमां प्रवेश करवो अने एकवार निकलवुं. ए पचीस आवश्यक वांदणामां

होय छे. ॥ १८ ॥ द्वा. ए

किइकम्मंपि कुणंतो, न होइ किइकम्मनिज्जरा नागी।
पणवीसामन्नयरं, साहुठाणं विराहंतो ॥ १ए ॥

शब्दार्थ–ए पचीस आवश्यकमांना एकनी पण विराधन करतो एवो साधु, कृतिकर्म करतो छतो पण ते कृतिकर्मनी नि रानो नागी थतो नथी. ॥ १ए ॥ द्वा. १० ॥

हवे मुहपत्तिनी पचीस पडिलेहणानुं ११ मुं द्वार कहे छे.

दिठिपडिलेहण एगा, छ उड्ढपप्फोड तिगतिगंतरिया
अक्खोड पमज्जणाया, नव नव मुहपत्ति पणवीसा॥२०

शब्दार्थ–एक दृष्टि पडिलेहन, छ ऊंचा पखोडा, त्रण खोडा, त्रण प्रमार्जना. ए छेला बे त्रणने त्रणवार अंतरित करत एक एकना नव नव नेद थाय. सर्व मळी मुहपत्तिनी पचीस डिलेहणा थइ. ॥ २० ॥ द्वा. ११

हवे शरीरनी पचीस पडिलेहणानुं १२ मुं द्वार कहे छे.

पायाहिणेण तिअ तिअ, वामेअर बाहुसीसमुह हियए
अंसुड्ढाहो पिठे, चउ छप्पय देह पणवीसा ॥२१॥

शब्दार्थ–प्रदक्षिणाये करीने डाबी अने जमणी बाहुये, मस्तके, मुखे अने हृदये. ए पांच ठेकाणे त्रण त्रणवार; बे खनाने उपर अने नीचे, तेमज बे पीठ उपर अने छ वखत पग उपर ए सर्व मळी शरीरनी पचीश पडिलेहणा थाय. ॥ २१ ॥

आवस्सएसु जह जह, कुणइ पयत्तं अहीण मइरित्तं ।
तिविहकरणो व उत्तो, तह तह से निज्जरा होइ ॥२२॥

शब्दार्थ–आवश्यक पडिलेहणामां जेम जेम प्रयत्नो ओछे अधिक न थयो छतो मन, वचन अने कायाये उपयोग राखी क

तेम तेम ते करनारने निर्जरा थाय छे. ॥२२॥ द्वा. २२

हवे चार गाथाथी बत्रीस दोष तजवानुं २३ द्वार कहे छे.

दोस अणाढिअ थद्धिअ–पविद्ध परिपिंडिअं च ढोलगइ
अंकुस कच्छव रिंगिअ. मच्छुवत्तं मणपउट्ठं ॥२३॥

शब्दार्थ–१ आदर रहित वांदे, २ मद सहित वांदे, ३ आघो पाछो करतो वांदे, ४ सर्वने भेगा वांदे, ५ कुदतो वांदे, ६ रजो हरणने बे हाथे झालीने वांदे ७ काचबानी पेठे रिंगतो वांदे, ८ एकने वांदतो बीजाने वांदे, ९ मनमां खेद पामतो वांदे. ॥२३॥

वेइयबद्ध भयंतं. भय गारव मित्त कारणा तिन्नं ॥
पडिणीयरुठ तज्जिअ,सढहीलिअ विपलिय चिअतं२४

शब्दार्थ–१० बे पगमां बे हाथ राखीने वांदे, ११ कांइ लालच थी वांदे, १२ भयथी वांदे, १३ गारवथी वांदे, १४ मित्र जाणी वांदे, १५ वस्त्रादि मळवानी इच्छाना कारणथी वांदे, १६ चोरनी पेठे वांदे, १७ आहारादि करतो वांदे, १८ क्रोधथी वांदे, १९ तर्जना क रतो वांदे, २० कपटथी वांदे, २१ अपमान करतो वांदे, २२ विक था करतो वांदे. ॥ २४ ॥

दिठमदिठं सिंगं. कर तंमोअण अणिद्धणालिद्धं ॥
ऊणं उत्तर चूलिअ, मूअं ढढ्ढर चूडलिअं च ॥२५॥

शब्दार्थ–२३ दिठुं अणदिठुं वांदे, २४ मस्तकने एक देशे वां दे, २५ राजवेठनी पेठे वांदे. २६ वांद्या विना छुटशे नहीं एम जाणी वांदे, २७ मस्तके हाथ लगाडतो न लगाडतो वांदे, २८ अक्षरादि ऊणा कहेतो वांदे, २९ पाठना शब्दो बनावटा बोले, ३० मूंगानी पेठे वांदे, ३१ ऊंचास्वरे वांदे, ३२ रजोहरण भमतो वांदे. ॥ २५ ॥

बत्तीस दोसपरिसुद्धं, किइकम्मं जो पउंजइ गुरूणं ॥
सो पावइ निव्वाणं, अचिरेण विमानवासं वा ॥२६॥

शब्दार्थ–जे माणस ए उपर कहेला बत्रीस दोष रहित गुरुने वांदणा करे छे ते थोडा कालमां मोक्षने अथवा तो देवपदने पामे छे. ॥ २६ ॥ द्वा. १३

हवे छ गुण उपजवानुं १४ मुं द्वार कहे छे.

इह छच्च गुणा विणउ–वयारमाणाइभंग गुरुपूआ ॥
तित्थयराण य आणा, सुअधम्माराहणा किरिया २७

शब्दार्थ–ए वांदणामां छ गुणो उपजे छे. तेमां १ विनयनो उपचार, २ मानादिकनो नाश, ३ गुरुपूजा, ४ तीर्थंकरनी आज्ञा, ५ श्रुतधर्मनी आराधना अने ६ मोक्ष. ए छ गुण उपजे. २७

हवे गुरु थापनानुं १५ मुं द्वार कहे छे.

गुरुगुणजुत्तं तु गुरुं, ठाविज्जा अहव तत्थ अक्खाइ ॥
अहवा नाणाइतियं, ठविज्ज सक्खं गुरुअभावे ॥२८॥

शब्दार्थ–म्होटा गुणे करीने युक्त एवा गुरुने स्थापन करवा. अथवा साक्षात् गुरुनो अभाव होय तो तेमने ठेकाणे थापनाचार्य स्थापन करवा. कदापि स्थापनाचार्य पण न होय तो ज्ञान, दर्शन अने चारित्रनां पुस्तकादि उपकरण स्थापवां. २८

अक्खे वराडए वा, कट्ठे पुत्थे अचित्तकम्मे अ ॥
सब्भावमसब्भावं, गुरुठवणा इत्तरावकहा ॥ २९ ॥

शब्दार्थ–अक्ष, (स्थापनाचार्य) कोडा, डांडा, पुस्तक अथवा गुरुमूर्तिनी स्थापना करवी. स्थापना बे प्रकारनी छे एक सद्भाव अने बीजी असद्भाव. गुरुस्थापना पण बे भेदे छे. तेमां एक इत्वर एटले पुस्तक आदि थोडा कालनी अने बीजी यावत्कथिका एटले मूर्ति विगेरे बहुकालनी, ॥ २९ ॥

गुरुविरहंमि ठवणा, गुरुवएसोव दंसणठं च ॥
जिणविरहंमि जिण बिं-व सेवणामंतणं सहलं ॥३०॥

शब्दार्थ–गुरुनो अभाव होय त्यारे गुरुनो उपदेश देखाम वा माटे स्थापना छे. जेम हवणां जिनेश्वरनो विरह छतां जिनबिं बनी सेवना करी आमंत्रण करवुं ते सफल छे. ॥ ३० ॥

हवे बे प्रकारना अवग्रहनुं १६ मुं द्वार कहे छे.

चउदिसि गुरुग्गहो इह, अहुठ तेरस करे सपरपरेक ॥
अणणुन्नायस्स सया, न कप्पए तठ पविसेउ ॥३१॥

शब्दार्थ–आ जिनशासनमां गुरुथी [1]अवग्रह चारे दिशामां पुरुष पुरुषने अने पुरुष स्त्रीने साडा त्रण हाथ अने तेर हाथ जाणवो. ते अवग्रहमां प्रवेश करवाने आज्ञाविना क्यारे पण न कल्पे.

हवे अक्षर संख्यानुं १७ मुं द्वार तथा पद संख्यानुं १८मुं द्वार कहे छे.

पण तिग बारस डुगतिग, चउरो ठठाण पय इगुणतीसं॥
गुणतीससेस आव-स्सयाइ सव्वपय अमवन्ना ॥३२॥

शब्दार्थ–(प्रथम वंदनक सूत्रना अक्षर २२६ छे तेमां लघु अक्षर बसो एक अने गुरु अक्षर पचीस छे.) पांच, त्रण, बार, बे, त्रण अने चार. एम छ स्थानकमां उगणत्रीस पद छे. बाकीना उगणत्रीस पद आवस्सियाएथी जाणवा. सर्व मली अठावन पद थायछे.

हवे वांदणा आपनारना छ स्थाननुं १९मुं द्वार कहे छे.

इछापअणुन्नवणा, अव्वाबाहं च जत्त जवणाय ॥
अवराहखामणाविय, वंदणदायस्स ठठाणा ॥३३॥

शब्दार्थ–इछामि आदिमां पांच, अणुजाणहादिमां त्रण, अव्याबाध पूछवा माटे निसीहियादिमां चार, जत्ताभे एमां बे,

---

[1] साधु साधुने साडा त्रण हाथ, साधु श्रावकने साडा त्रण [illegible] साधु साध्वीने तेर हाथ. साधु श्राविकाने पण तेर हाथ.

जयणिजंचन्ने एमां त्रण, अपराध खमाववा माटे खामेमि एमां चार. ए वांदणा करनारना ७ स्थानक जाणवा. ॥ ३३ ॥

हवे ७ गुरु वचननुं २०मुं द्वार कहे छे

वंदेणाणुजाणामि, तहत्ति तुप्रंपि वट्टए एवं ॥
अहमवि खामेमि तुमं, वयणाइं वंदणारिहस्स ॥३४॥

शब्दार्थ—वंदेण, अणुजाणामि, तहत्ति, तुप्रंपिवट्टए, एवं, अहमवि खामेमि तुमं. ए ७ वचन वांदणा देवा योग्य गुरुनां जाणवां.

हवे तेत्रीश आशातनानुं २१मुं द्वार कहे छे.

पुरउ पक्खासन्ने, गंता चिठ्ठण निसिअ्रणाय मणे ॥
आलोयण पमिसुणणे, पुव्वालवणे अ आलोए ॥३५॥

शब्दार्थ—१ गुरुनी आगल चाले, २ पडखे चाले, ३ पछवाडे अडकतो चाले, वली एवी त्रण आशातना गुरुनी, तेटली भूमि आगे उभा रहेवाथी थाय अने बेसवाथी पण थाय एम ए आशातना जाणवी, १० थंडिले प्रथम पाणी ले, ११गमणागमण पहेलुं आलोवे, १२ बोलाव्या छता न बोले, १३ कोइने गुरुनी पहेला बोलावे, १४ गुरु छता बीजा पासे भिक्षादि आहार आलोवे. ॥ ३५ ॥

तह उवदंस निमित्तण, खद्धा ययणे तहा अपमिसुणणे
खद्धत्ति य तत्थगए, किं तुम तज्जाय नो सुमणे ॥३६॥

शब्दार्थ—१५ आहारादि बीजाने देखाडे, १६ बीजा साधुने प्रथम बोलावीने पछी गुरुने बोलावे, १७ गुरु विना बीजाने मिष्ट खवरावे, १८ पोते मिष्ट खाय, तेमज १९ गुरु बोलावे छता, न सांभले, २० गुरुने कठण वचन बोले, २१ पोताने संथारे बेठो उत्तर आपे, २२ शुं कहो छो ? एम कहे, २३ तमे करो, एम कहे, २४ तिरस्कार करे, २५ गुरुनो धर्मोपदेश सांभली हर्षित मनवालो न थाय. ॥ ३६ ॥

नो सरसि कहं त्तिता, परिसंजित्ता श्रणुठियाइ कहे॥
संथार पाय घट्टण. चिठुच्च समासणे श्रावि ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ–२६ तमने नथी सांजरतुं? एम कहे, २७ कथा नो छेद करे, २८ सत्तानो जंग करे, २९ गुरुए कहेली वात फरी पोते कहे, ३० गुरुना संथारे पग लगाडे. ३१ गुरुनी शय्या संथारा के आसन उपर बेसे, ३२ गुरुथी उंचा आसने बेसे, ३३ गुरुना स मान आसने बेसे. ॥ ३३ ॥

हवे बे विधिनुं २४मुं द्वार कहे छे.

इरिया कुसुमिणुस्सग्गो. चिइवंदण पुत्ति वंदणा लोयं॥
वंदण खामण वंदण. संवर चउ छोन्न डु सज्जाउ ॥३८॥

शब्दार्थ–१ इरियावहि, २ कुसुमिण डुसुमिणनो काउस्सग्ग, ३ चैत्यवंदन, ४ मुहपत्ति पडिलेहण, ५ बे वांदणा, ६ राइय आलोवे, ७ बे वांदणा, ८ खमासमण, ९ वांदणा, १० पच्चख्काण, ११ चार खमासमण अने बे सझाय. एम अनुक्रमे करे ते प्रजात वंदन विधि जाणवो. ॥ ३८ ॥

इरिया चिइ वंदणपु–त्ति वंदणं चरिमवंदणालोयं ॥
वंदणखामणचउवो–न्न दिवसुस्सग्गो डुसप्राउ ॥३९॥

शब्दार्थ–१ इरियावहि, २ चैत्यवंदन, ३मुहपत्ति पडिलेहण, ४ बे वांदणा, ५ दिवस चरिम पच्चख्काण, ६ बे वांदणा, ७ देवसि आलोवे, ८ बे वांदणा, ९ देवसि खमावे, १० चार खमासण दइ जगवानादि चारने वांदे, ११ देवसिय प्रायश्चित माटे बे लोगस्स नो काउस्सग अने १२ बे सझाय. ए संध्यावंदन विधि. ३९

एयं किइकम्मविहिं, जुंजंता चरण करण माउत्ता ॥
साहू खवंति कम्मं, श्रणेगजवसंचियमणंतं ॥४०॥

शब्दार्थ–ए प्रमाणे वांदणानी विधिने करता तेम... रण

सित्तरी अने करण सित्तरी सहित एवा साधुओ अनेक जवमां मे लवेलां अनंतां कर्मने खपावे छे. ॥ ४० ॥

अप्पमइजवबोहत्थं, जासियं विवरियं च जमिह मए ॥
तं सोहंतु गीयछा, अणजिनिवेसि अमछरिणा ॥४१॥

शब्दार्थ–अल्पमति एवा जव्य जीवोना बोधने अर्थे में अहिं जे कांइ विपरीतपणे कहेलुं होय तेने कदाग्रह रहित अने मत्सर रहित एवा गीतार्थ पुरुषोए सुधारीने लेवुं. ॥ ४१ ॥

॥ इति गुरुवंदन जाष्य. ॥

॥ अथ पच्चरकाण भाष्य. ॥

पच्चख्खाणनां ९ द्वार कहे छे.

दस पच्चरकाण चजविहि, आहार दुवीसगार अदुत्ता॥
दस विगइ तीस विगई, गयछहजंग छ सुध्धि फलं ॥१॥

शब्दार्थ–१ दश पच्चरकाण द्वार, २ चार विधि द्वार, ३ आ हार द्वार, ४ बीजीवार न कहेला बावीस आगार द्वार, ५ दश वि गयद्वार, ६ त्रीस निवीयाद्वार, ७ मूल गुण उत्तरनुं जेदद्वार, ८ छ जेद शुध्धिनुं द्वार, ए पच्चरकाण फलद्वार. ॥ १ ॥

हवे उत्तरगुण पच्चख्खाणना दश भेद कहे छे.

अणागय मइक्कंतं, कोमीसहियं नियंटि अणागारं ॥
सागार निरवसेसं, परिमाणकमं संके अध्धा ॥ २ ॥

शब्दार्थ–१ कारणे आगलथी तप करवुं, २ पाछलथी करवुं, ३ एकनो जोमे बीजुं करवुं, ४ धारी राखेला दिवसे करवुं, ५ आ गार रहित करवुं, ६ आगार सहित करवुं, ७ चार आहारादिकनुं करवुं, ८ वस्तु विगेरेनुं परिमाण करवुं, ए संकेते करवुं अने १० काल पच्चरकाण करवुं. ॥ २ ॥

हवे दश काल पचक्खाणना भेद कहे छे.

नवकारसहिय पोरिसि. पुरिमड्ढेगासणेगठाणे अ ॥
आयंबिल अप्पत्तठे. चरिमेअ अभिग्गहे विगइ ॥३॥

शब्दार्थ–१ नोकारसीनुं, २ पोरसीनुं, ३ पुरीमढनुं, ४ एकासणानुं, ५ एकलठाणानुं, ६ आंबीलनुं, ७ उपवासनुं, ८ दिवस चरिमनुं, ९ अभिग्रहनुं अने १० विगइनुं. ए दश काल पच्चक्खाण छे.

हवे पच्चक्खाण करवानी विधि चार भेदे कहे छे.

उग्गएसूरे नमो. पोरिसि पच्चक्ख उग्गएसूरे ॥
सूरे उग्गए पुरिमं, अभत्तठं पच्चक्खा इति ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–नवकारसीना पच्चक्खाणमां "उग्गए सूरे नमोक्कार सहियं" एवो पाठ, पोरसिना पच्चक्खाणमां "उग्गए सूरे पोरिसियं" एवो पाठ, पुरिमढ्ढना पच्चक्खाणमां "सूरे उग्गए पुरिमढ्ढं" एवो पाठ, उपवासना पच्चक्खाणमां "अभत्तठं पच्चक्खाइ" एवो पाठ जाणवो. ॥ ४ ॥

हवे बीजा चार विधि कहे छे.

भणइ गुरु सीसो पुण. पच्चक्खामिति एव वोसिरइ ॥
उवओगित्थ पमाणं, न पमाणं वंजणच्छलणा ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–प्रथम पच्चक्खाण करावनार गुरु "पच्चक्खाइ" एम कहे, वली पच्चक्खाण करनार शिष्य "पच्चक्खामि" एम कहे, पछी गुरु "वोसिरइ" एम कहे एटले शिष्य "वोसिरामि" एम कहे, अहिं धारेलो उपयोगज प्रमाण छे; परंतु अक्षरनी स्खलना प्रमाण नथी. ॥ ५ ॥

तेज वात विशेषे कहे छे

पढमे ठाणे तेरस. बीए तिन्नित्ति तिगाइ तइअंमि ॥
पाणस्स चउत्थंमि. देसावगाइ पंचमए ॥ ६ ॥

असणे मुग्गोयण सत्तु मंड पय खज्ज रब्ब कंदाइ ॥
पाणे कंजिय जव कयर, कक्कोडोदग सुराइजलं ॥१४॥

शब्दार्थ-अशनमां मग, भात, सत्तु, मांडा, दुध, राबुं, गल अने कंद विगेरे जाणवा. तेमज पानमां कांजी, जवनुं, केरनुं अने काकडीनुं धोवण तथा मदिरादि जल जाणवुं ॥१४॥

खाइमे भत्तोस फलाइ, साइमे सुंठि जीर अजमाइ ॥
महु गुड तंबोलाइ, अणाहारे मोय निंबाई ॥ १५ ॥

शब्दार्थ-खादिममां शेकेलां धान्य तथा फलादि जाणवां अने स्वादिममां सुंठ, जीरुं, अजमो विगेरे, वळी मध, गोळ अने तांबूलना पानादि जाणवुं. तेमज अनाहारने विषे मोथुं तथा लींबडा प्रमुख जाणवुं ॥ १५ ॥

[illegible] आगारनी संख्यानुं ४ थुं द्वार कहे छे.

दो नवकारि छ पोरिसि, सग पुरिमड्ढ इगासणे अट्ठ ॥
सत्तेगठाणि अंबिलि, अट्ठ पण चउत्थि छप्पाणे ॥१६॥

शब्दार्थ-नवकारसीमां बे, पोरिसीमां छ, पुरिमड्ढमां सात, एकासणामां आठ, एकलठाणामां सात, आंबिलमां आठ, चोथ भक्तमां पांच अने पाणस्सना पच्चक्खाणमां छ आगार जाणवा.

चउ चरिमे चउभिग्गहि, पण पावरणे नवट्ठ निव्वीए ॥
आगारुक्खित्तविवेग, मुत्तु दवविगइनियमि ट्ठ ॥ १७ ॥

शब्दार्थ-चरिम पच्चक्खाणमां चार, अभिग्रहमां चार, प्रावरणमां पांच, निवीमां नव अथवा आठ आगार जाणवा. वळी द्रवविगइनुं नियम करनारने 'उक्खित्तविवेगं' ए आगारने मूकीने बाकीना आठ आगार जाणवा. ॥ १७ ॥

[illegible] आगारनो [illegible] कहे छे

अन्नसहदुनमुक्कारे. अन्न सह पच्छ दिसय साहु सव्व ॥
पोरिसि छ सढ्ढपोरिसि. पुरिमढ्ढे सत्त समहत्तरा ॥१८॥

शब्दार्थ–नमुक्कारसीमां अन्नथ्थणाभोगेणं, सहस्सागारेणं ए बे, तथा पोरसीमां अन्नथ्थणाभोगेणं, सहस्सागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं, अने सव्वसमाहिवत्तियागारेणं ए छ आगार जाणवा.साढ पोरसीमां पण एज छ अने पुरिमढ्ढमां उपरना छ सहित एक महत्तरागारेणं ए वधारवो. जेथी तेमां सात थाय.

हवे एकासणाना तथा एकलठाणाना आगार कहे छे.

अन्न सहसागारिय, आउंटण गुरुअ पारिमहसव्व ॥
एगबियासणि अठ्ठ. सग इगठाणे आउंटविणा १९

शब्दार्थ–अन्नथ्थणाभोगेणं, सहस्सागारेणं, सागारि आगारेणं, आउंटण पसारेणं, गुरु अभ्भुठ्ठाणेणं, पारिठ्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं. ए आठ आगार एकासणामां अने बियासणामां जाणवा. अने तेमांथी एक आउंटण विना सात आगार एकलठाणामां जाणवा. ॥१९॥

हवे विगय, नीवी अने आंबीलना आगार कहे छे.

अन्नसहलेवागिह, उक्खित्त पडुच्च पारिमहसवे ॥
विगइ निविगए नव, पडुच्च विणु अंबिले अठ्ठ २०

शब्दार्थ–अन्नथ्थ, सहस्सा, लेवालेवेणं, गीहथ्थ संसठ्ठेणं, उक्खित्त विवेगेणं, पडुच्चमक्खिएणं, पारिठ्ठा, महत्तरा, सव्वसमाहि. ए नव विगइ तथा निविगइने विषे जाणवा अने तेमांथी एक पडुच्चमक्खिएणं विना आठ आंबीलना आगार जाणवा. ॥२०॥

हवे उपवासना आगार कहे छे.

अन्न सह पारि मह सव्व, पंच खवणे छ पाणिलेवाई ॥
चउ चरिमं गुठाइ, भग्गहि अन्न सहमह सवे ॥२१॥

चोखा विगेरेना धोवणनुं पाणी, ५ सीथ सहित ते आटाथी खर मायला हाथनुं दाणा सहित पाणी अने ६ तेथी बीजुं ते तेनेज गली लीधेलुं पाणी, ए छ आगार पाणीना जाणवा. ॥२७॥

हवे दश विगइनां स्वरूपनुं ५ मुं द्वार कहे छे.

पण चउ चउ चउ दु दुविह,छ जक्क दुधाइ-विगइ इगवीसं
तिदुति चउविह अनक्का, चउ महुमाई विगई बार ॥

शब्दार्थ–दुधनां पांच, दहिना चार, घीना चार, तेलना चार, गोलना वे, पक्वान्नना वे. एम ए दुध विगेरे जक्ष्य(खावा योग्य)विगइना सर्व मली एकवीस जेद थाय छे. तेमज मधना त्रण, मदिराना वे, मांसना त्रण, मांखणना चार. एम ए बार अजक्ष्य विगइना सर्व मली बार जेद छे. ॥२७॥

हवे प्रथमनी छ विगइना २१ भेद कहे छे.

खीर घय दहि अ तिल्लं, गुम पक्कन्नं छ जक्क विगइउ ॥
गो महिसी उंटि अय ए-लगाण पण दुध्द अह चउरो३०

शब्दार्थ–दुध, घी, दहिं, तेल, गोल अने पक्वान्न. ए छ जक्ष्य विगइ छे. तेमां गायनुं, जेसनुं, उंटडानुं, वकरानुं अने घेटीनुं ए पांच जातनुं दुध विगइ छे. हवे चार जातनुं घी विगेरे कहे छे.

घयदहिआउट्टिविणा, तिलसरिसवअयसिलट्टतिल्लचउ
दवगुम पिंम गुमादो, पक्कन्नं तिल्ल घय तलियं ॥३१॥

शब्दार्थ–घी अने दहिं उंटणी विना वाकीना चारनुं विगइमां जाणवुं. तलनुं, सरसवनुं, अलसीनुं अने *लाटनुं ए चार जातनुं तेल विगइ छे. ढीलो अने कठीण ए वे जातनो गोल, अने पक्वान्न ते उपर कहेला चार जातनां तेलमां तलेलुं अथवा चार जातनां घीमां तलेलुं ए सर्व विगइमां जाणवुं. ॥३१॥

---

* ए धान्य खसखस जेवुं थाय छे.

हवे दूधनां पांच निवीयातां कहे छे.

पयसाम्हि खीर पेया, वलेहि दुग्धट्टि दुद्ध विगइगया ॥
दक्ख बहु अप्प तंडुल. तच्चुन्नं विलसहिअ दुद्धे ॥३१॥

शब्दार्थ–द्राख नाखीने रांधेलुं दुध पयसाम्हि, बहु चोखा नाखीने रांधेलुं दुध खीर, थोडा चोखा नांखीने रांधेलुं पेया, आटो नाखीने रांधेलुं अवलेहि अने खटास नाखीने रांधेलुं दुध दुग्धट्टि. ए पांच दुधना निवीआता जाणवा. ॥३१॥

हवे घी विगइ तथा दहि विगइना पांच पांच निवीयाता कहे छे.

निब्भंजणवीसंदण, पक्कोसहितरिय किट्टि पक्कघयं ॥
दहिए करंब सिहरिणि,सलवणदहि घोल घोलवडा ३२

शब्दार्थ–दाजेलुं, दुधनी तरीमां आटो नाखीने बनावेलुं, औषधि नाखीने पकावेलुं, कीटुं, अने आंबलादि नाखीने पकावेलुं ते पांच जातनुं घी तेमज भात सहित दहि, सीखंड, लवण नाखेलुं गळ्या विनानुं दहि, गळेलुं दहि अने घोलवडा ए पांच जातनुं दहि निवीयातामां जाणवुं. ॥३२॥

हवे तेल तथा गोळनां पांच पांच निवीयाता कहे छे.

तिलकुट्टि निब्भंजण, पक्कतिल्ल पक्कुसहितरिप तिल्लमली॥
सक्कर गुलवायण पाय, खंम अधकढिय इक्खुरसो ३४

शब्दार्थ–गोल सहित खांडेला तल, दाजेलुं तेल, लाख विगेरेथी पकावेलुं तेल, औषधि पकाव्या पछी तेल उपर थयेली तरी अने तेलनी मली, ए पांच तेलना. तेमज साकर, गोलवाणी, गुलपाय, खांड अने अर्धो उकालेलो शेरडीनो रस ए पांच निवीयातामां जाणवा. ॥ ३४ ॥

हवे कडा विगइना पांच निवीयाता कहे छे.

१ गरमाणुं. २ गोलपाक–गोळनी पापडी.

चोखा विगेरेना धोवणनुं पाणी, ५ सीथ सहित ते आटाथी खर मायला हाथनुं दाणा सहित पाणी अने ६ तेथी वीजुं ते तेनेज गली लीधेलुं पाणी, ए ठ आगार पाणीना जाणवा. ॥२८॥

हवे दश विगइनां स्वरूपनुं ५ मुं द्वार कहे छे.

पण चउ चउ चउ दु दुविह, छ जक्क दुद्धाइ-विगइ इगवीसं
तिदुति चउविह अजरका, चउ महुमाई विगई वार ॥

शब्दार्थ–दुधनां पांच, दहिना चार, घीना चार, तेलना चार, गोलना बे, पक्वान्नना बे. एम ए दुध विगेरे जक्ष्य (खावा योग्य) विगइना सर्व मली एकवीस नेद थाय छे. तेमज मधना त्रण, मदिराना बे, मांसना त्रण, मांखणना चार. एम ए चार अजक्ष्य विगइना सर्व मली बार नेद छे. ॥२९॥

हवे प्रथमनी ६ विगइना २१ भेद कहे छे.

खीर घय दहि अ तिल्लं, गुम पक्कन्नं छ जरक विगइउ ॥
गो महिसी उंटि अय ए-लगाण पण दुद्ध अह चउरो ३०

शब्दार्थ–दुध, घी, दहिं, तेल, गोल अने पक्वान्न. ए छ जक्ष्य विगइ छे. तेमां गायनुं, जेसनुं, उंटडानुं, बकरीनुं अने घेटीनुं ए पांच जातनुं दुध विगइ छे. हवे चार जातनुं घी विगेरे कहे छे.

घयदहिआउट्टिविणा, तिलसरिसवअयसिलट्ठतिल्लचउ
दवगुम पिंम गुमादो, पक्कन्नं तिल्ल घय तलियं ॥३१॥

शब्दार्थ–घी अने दहिं उंटडी विना बाकीना चारनुं विगइ मां जाणवुं. तलनुं, सरसवनुं, अलसीनुं अने *लाटनुं ए चार जातनुं तेल विगइ छे. ढीलो अने कठीण ए बे जातनो गोल, अने पक्वान्न ते उपर कहेला चार जातनां तेलमां तलेलुं अथवा चार जातनां घीमां तलेलुं ए सर्व विगइमां जाणवुं. ॥३१॥

---

* ए धान्य खसखस जेवुं थाय छे.

ण पूर्ण करे ते तर्युं कहेवाय अने भोजनना अवसरे करेला प
च्चरकाणने संभारवुं ते कीर्त्युं कहेवाय. ॥४५॥

इअ पडिचरिअं आरा-हियं तु अहवा ठ सुद्धि सद्दहणा॥
जाणण विणयणु भावण-अनुपालण भाव सुद्धति ४६

शब्दार्थ–उपर कहेला सर्व प्रकारे आचरयुं तेने आराध्युं कहेवाय अथवा पच्चस्काणनो छवि शुद्धि छे ते सीधा प्रमाणे करवुं, जाणनी पासे करवुं, गुरुनो विनय करवो, गुरु बोले तेम मनमां बोलवुं, कष्ट पडे तो पण भागवुं नहि, शंकादिदोष रहित रहेवुं, ए छ विशुद्धि जाणवी. ॥४६॥

हवे पच्चरकाणनुं बे प्रकारे फल थायछे ते कहे छे.

पच्चरकाणस्स फलं, इह परलोए य होइ दुविहं तु ॥
इहलोए धम्मिल्लाइ, दामन्नगमाइ परलोए ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ–पच्चस्काणनुं फल आ लोकमां धम्मिल्लकुमारादिनां अने परलोकमां दामन्नकादिकनां दृष्टांतथी जाणवुं. ४७

हवे समाप्ति करता कहे छे.

पच्चरकाणमिणं से–विऊण भावेण जिणवरुद्दिठं ॥
पत्ता अणंत जीवा, सासयसुक्खं अणाबाहं ॥४८॥

शब्दार्थ–श्री जिनेश्वरे उपदेशेला आ पच्चस्काणने भावथी सेवीने अनंता जीवो निराबाध एवा शाश्वता सुखने पाम्या छे.

॥ इति पच्चस्काण भाष्य समाप्त. ॥

शब्दार्थ–मन, वचन अने काया, वली मनवचन, मनकाया अने वचनकाया; तेमज मन, वचन अने काया ए त्रण योग. ए सात भांगाने करवा, करावबा अने अनुमोदवा. एवा भेदथी एकवीस भेद थाय. वली तेने त्रीक त्रीक योग सहित करी भूत, भविष्य अने वर्त्तमान काले करी गुणता एकसो सुडतालीस भांगा थाय. ॥ ४२ ॥

हवे ए पच्चख्खाणनुं स्वरूप कहे छे.

एयं च उत्तकाले, सयं च मण वयण तणुहिं पालणियं॥
जाणगजाणग पासि, त्तिभंग चउगे तिसु अणुणा ४३

शब्दार्थ–वली ए पच्चख्खाण कहेला काले लेनार धणीये पोते मन, वचन अने कायाए करीने पालवा. वली ते पच्चख्खाण करनार जाण अथवा अजाण तेमज करावनार जाण अथवा अजाण एम चार भांगा थायछे. तेमां प्रथम त्रणने आज्ञा छे.

हवे पच्चख्खाणनी छ विशुद्धिनुं ८ मुं द्वार कहे छे.

फासियपालियसोहिय, तिरियकिट्टियआराहियछसुद्धं॥
पच्चख्खाणं फासिय, विहिणोचिय कालि जंपत्तं ॥४४॥

शब्दार्थ–फरस्युं, पाल्युं, सोध्युं, तर्युं, कीर्युं अने आराध्युं, ए छ प्रकारे शुद्ध एवुं पच्चख्खाण फल आपनारुं थाय छे. तेमां प्रथम विधि प्रमाणे योग्य काले जे पच्चख्खाण लीधुं ते फरस्युं कहेवाय. ॥ ४४ ॥

पालिय पुणपुणसरियं, सोहिय गुरुदत्त सेस भोयणओ॥
तिरिय समहिय कालो,किट्टिय भोयण समय सरणो४५

शब्दार्थ–करेला पच्चख्खाणने वारंवार संभारवुं ते पाल्युं कहेवाय, गुरुने आप्या पछी बाकीनुं पोते जमवुं ते शोध्युं कहेवाय. थोडा कालथी कांइक अधिक काल गया पछी पच्चख्खा

ए पूर्ण करे ते तर्युं कहेवाय अने भोजनना अवसरे करेला प
च्चक्खाणने संभारवुं ते कीर्त्युं कहेवाय. ॥४५॥

इअ पडिचरिअं आराहियं तु अहवा छ सुद्धि सद्दहणा॥
जाणण विणयणु भावण-अनुपालण भाव सुद्धति ४६

शब्दार्थ–उपर कहेला सर्व प्रकारे आचर्युं तेने आराध्युं कहेवाय अथवा पच्चक्खाणनो छवि शुद्धि छे ते लीधा प्रमाणे करवुं, जाणनी पासे करवुं, गुरुनो विनय करवो, गुरु बोले तेम मनमां बोलवुं, कष्ट पडे तो पण भागवुं नहि, शंकादिदोष रहित रहेवुं, ए छ विशुद्धि जाणवी. ॥४६॥

हवे पच्चक्खाणनुं बे प्रकारे फल थायछे ते कहे छे.

पच्चक्खाणस्स फलं, इह परलोए य होइ दुविहं तु ॥
इहलोए धम्मिलाइ, दामन्नगमाइ परलोए ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ–पच्चक्खाणनुं फल आ लोकमां धम्मिल्लकुमारादिनां अने परलोकमां दामन्नकादिकनां दृष्टांतथी जाणवुं. ४७

हवे समाप्ति करता कहे छे.

पच्चक्खाणमिणं से–विऊण भावेण जिणवरुद्दिठं ॥
पत्ता अणंत जीवा, सासयसुक्खं अणाबाहं ॥४८॥

शब्दार्थ–श्री जिनेश्वरे उपदेशेला आ पच्चक्खाणने भावथी सेवीने अनंता जीवो निराबाध एवा शाश्वता सुखने पाम्या छे.

॥ इति पच्चक्खाण भाष्य समाप्त. ॥

श्री इंद्रिय पराजय शतक.

(आर्यावृत्तम्)

सुचिय सूरो सो चेव पंम्डि तं पसंसिमो निच्चं ॥
इंदियचोरेहिं सया, न लुटियं जस्स चरणधणं ॥१॥

शब्दार्थ–तेज सूरवीर अने तेज पंम्डित, वली तेनीज अमे निरंतर प्रशंसा करीये छीये के, जेनुं चारित्ररूप धन निरंतर इंद्रियरूप चोरोए लुंटी लीधुं नथी. ॥१॥

इंदिय चवलतुरंगे, डुग्गइ मग्गाणु धाविरे निच्चं ॥
जाविअ जवस्सरुवो, रूंजइ जिणवयण रस्सीहिं २

शब्दार्थ–इंद्रियरूप चपल घोमाज निरंतर डुर्गतिरूप मार्गमां दोडी रह्या छे, तेमने संसार स्वरूपनी जावना करनारो पुरुष श्री जिनराजनां वचनरूप रासथी रोके छे. ॥२॥

इंदियधुत्ताणमहो, तिलतुसमित्तंपि देसु मा पसरं ॥
जइ दिन्नो तो नीउ, जड खणो वरिसकोडिसमं ॥३॥

शब्दार्थ–हे प्राणिन्! तुं इंद्रियरूप चोरोने तलनां फोतरा मात्र पण प्रसरवा दइश नहि. कारण जो परसवा दिधा तो ज्यां एक क्षण क्रोडो वर्ष समान थाय तेवां डुःखो पामीश. ॥३॥

अजिइंदिएहिं चरणं, कठंव घुणेहिं किरइ असारं ॥
तो धम्मत्थिहिं दढं, जइयव्वं इंदियजयंमि ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–इंद्रियोने न जीतनारा प्राणीनुं चारित्र घुणे (ला कर्मांना जीवोए) करेलां लाकमांनी पेठे सार रहित छे, माटे धर्मना अर्थिये इंद्रियोने जीतवामां दृढ उद्यम करवो. ॥४॥

जह कागिणीइ हेउं, कोडी रयणाण हारए कोई ॥
तह तुच्छ विसय गिद्धा, जीवा हारंति सिद्धिसुहं ॥५॥

शब्दार्थ-जेम कोइ मूर्ख एक कोडीने माटे क्रोडा रत्नने हारे तेम तुच्छ एवा विषयमां आसक्त थयेला जीवो मोक्ष सुख ने हारी जाय छे. ॥५॥

तिलमित्तं विसयसुहं, दुहं च गिरिरायसिंगतुंगयरं ॥
नवकोडिहिं न निठइ, जं जाणसु तं करिज्जासु ॥६॥

शब्दार्थ-तल मात्र विषय सुख दुःखरूप मेरुपर्वतना ऊंचा शिखर जेवुं छे. वली ते दुःख क्रोडो नव सुधी खुटे तेम नथी, माटे हे जीव! जेम जाण तेम कर. ॥६॥

(शार्दूलविक्रीडितवृत्तम्)

भुंजंता महुरा विवागविरसा किंपागतुल्ला इमे,
कच्छुकंडुअणंव दुक्खजणाया दाविंति बुद्धिं सुहे ॥
मझन्हे मयतिन्हियव्व सययं मिच्छाभिसंधिप्पया,
भुत्ता दिंति कुजम्म जोणिगहणं भोगा महा वेरिणो ७

शब्दार्थ-किंपाक फलनी पेठे भोगवतां मधुर, पण परिणामे प्राणनो नाश करनारा, खसना फोल्लाने खणवानी पेठे दुःख आपनारा, मध्यान्ह वखते मृग तृष्णानी पेठे निरंतर खोटा अभिप्राय आपनारा अने महा वैरी सरखा भोगो भोगवनाराने कुजन्मरूप गहन जोनी आपे छे. ॥७॥

(अनुष्टुप्वृत्तम्)

सक्का अग्गि निवारेउं, वारिणा जलिओवि हु ॥
सव्वोदहिजलेणावि, कामग्गि दुन्निवारओ ॥ ८ ॥

शब्दार्थ-बलता अग्निने पाणीवडे निवारी शकाय, पण सर्व समुद्रोनां पाणीथी कामरूप अग्नि निवारी शकातो नथी.

(आर्यावृत्तम्)

विसमिव मुहंमि महुरा, परिणाम निकाम दारुणा विसया॥

(अनुष्टुब्वृत्तम्)

सल्लं कामा विसं कामा, कामा आसीविसोवमा ॥
कामे य पत्थेमाणा, अकामा जंति दुग्गइं ॥ २७ ॥

शब्दार्थ—कामभोग शल्य छे, कामभोग विष छे अने काम भोग आशीविष जेर (सर्पनी दाढमां रहेला जेर) जेवा छे. ते कामभोग भोगव्या नथी; परंतु तेनी प्रार्थना करवाथी एटले तेनी इच्छा राखवाथी पण जीवो दुर्गतिमां जाय छे. ॥२७॥

(आर्यावृत्तम्)

विसए अवइक्खंता, पडंति संसारसायरे घोरे ॥
विसएसु निराविक्खा, तरंति संसारकंतारे ॥२८॥

शब्दार्थ—विषयनी अपेक्षा (वांछना) करनारा जीवो बी हामणा संसार समुद्रमां पडे छे अने विषयथी निरपेक्ष (अवांछक) थयेला जीवो संसार रूप अटवीने तरे छे. ॥२८॥

छलिया अवइक्खंता, निरावइक्खा गया अविग्घेणं ॥
तम्हा पवयण सारे, निरावइक्खेण होअव्वं ॥ २९ ॥

शब्दार्थ—विषयनी अपेक्षा—वांछना करनारा जीवो छलाणा एटले संसारमां रह्या अने विषयथी निरपेक्ष—अवांछक थयेला जीवो, अविघ्नपणे मोक्षमां गया. ते कारण माटे प्रवचन एटले सिद्धांतनो एज सार छे के, विषयथी निरपेक्ष थवुं. ॥२९॥

विसयाविक्खो निवडइ, निरविक्खो तरइदुत्तर भवोघं ॥
देवीदीवसमागय, भाउअजुअलेण दिट्ठंतो ॥३०॥

शब्दार्थ—रत्नादेवीना रत्नद्वीपमां गयेला (जिनरक्षित अने जिनपालित ए) बे भाइना दृष्टांते विषयनी अपेक्षा करनारा जीवो (जिनरक्षितनी पेठे) संसार समुद्रमां पडे छे अने विषय

थी निरपेक्ष थयेला जीवो (जिनपालितनी पेठे) दुस्तर एवा ज वना छेडने-संसार समुद्रने तरे छे. ॥३०॥

जं अइतिक्खं दुक्खं, जं च सुहं उत्तमं तिलोअंमि ॥
तं जाणसु विसयाणं, वुड्ढि क्खय हेउअं सव्वं ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ–हे जीव! त्रण लोकमां जे अति तिक्ष्ण दुःख अने जे उ त्तम सुख छे ते सर्व विषयोनी वृद्धि अने क्षयनुं हेतु छे, एम तुं जाण.

इंदियविसयपसत्ता, पडंति संसारसायरे जीवा ॥
पक्खिव छिन्नपंखा, सुसीलगुण पेहुणविहूणा ३२

शब्दार्थ–पंचेंद्रियना विषयमां आसक्त थएला जीवो, उत्त म आचार अने शीलगुण रूप पांखो विना, छेदाणी छे पांखो जे नी एवा पक्षीनी पेठे संसार समुद्रमां पडे छे. ॥३२॥

न लहइ जहा लिहंतो, मुहल्लियं अठिअं जहा सुणउ
सोसइ तालुअ रसिअं, विलिहंतो मन्नए सुक्खं ॥३३॥
महिलाण कायसेवी, न लहइ किंचिवि सुहं तहा पुरिसो॥
सो मन्नए वराउ, सयकायपरिस्समं सुक्खं ॥३४॥ युग्मम्.

शब्दार्थ–जेम कूतरो म्होटा हाडकाने चाटतो छतो एम नथी जाणतो के, हुं म्हारा पोतानाज तालुआनी रसीने सोसवुं छुं! तथोज ते हाडकाने विशेषे चाटतो छतो जेम सुख माने छे तेम स्त्रीनो कायानो सेवनार, एटले विषय सेवनारो पुरुष तेथी जरा पण सुख नथी पामतो; तथापि ते रांक पुरुष पोतानी का याना परिश्रमने सुख माने छे!!! ॥३३॥३४॥

सुट्ठुवि मग्गिज्जंतो, कत्थवि कयलीइ नत्थि जह सारो ॥
इंदियविसएसु तहा, नत्थि सुहं सुट्ठुवि गविट्ठं ॥३५॥

शब्दार्थ–सारी रीते तपासतां जेम केलमां कांइ पण सार

(आर्यावृत्तम्)

जुवइहिं सह कुणंतो, संसग्गि कुणइ सयलडुक्खेहिं ॥
नहि मुसगाणं संगो, होइ सुहो सह बिलाऐहिं ॥५४॥

शब्दार्थ–जेम बिलाडीनी साथे संसर्ग करतो थतो उंदर सुखी थतो नथी, तेम स्त्रीनो साथे संसर्ग करतो थतो पुरुष पण सर्व दुःखना संसर्गने करे छे. अर्थात् अनेक दुःखने पामे छे.

हरिहरचजराणण चं, दसूरखंदाइणोवि जे देवा ॥
नारीण किंकरत्तं, कुणंति धिद्धी विसयतिन्हा ॥५५॥

शब्दार्थ–विश्नु, ईश्वर, ब्रह्मा, चंद, सूर्य अने कार्तिकस्वामी विगेरे जे कोइ देवो, ते सर्वे (मात्र विषयने माटे) स्त्रीनुं किंकरपणुं करे छे! माटे धिक्कार छे धिक्कार छे विषयनी तृष्णाने !!!

(काव्यम्)

सीअं च उन्हं च सहंति मूढा, इत्थिसु सत्ता अविवेअवंता ।
इलाइपुत्तंव चयंति जाइं, जीअं च नासंति अरावणुव ५६

शब्दार्थ–विवेक विनाना अने स्त्रीमां आसक्त थयेला मूर्ख पुरुषो, इलाची पुत्रनी पेठे पोतानी उत्तम जातिनो त्याग करीने टाढ अने तापने सहन करे छे. तेमज रावणनी पेठे जीवितव्यने पण नाश पमाडे छे. ॥ ५६ ॥

(आर्यावृत्तम्)

वुत्तुणवि जीवाणं, सुदुक्कराइं ति पावचरियाइं ॥
जयवं जा सा सा सा, पच्चाएसो हु इणमो ते ॥५७॥

[illegible] ोनां अतिशे पापचरित्र एटले मागं आचर [illegible] अतिशे दुष्कर छे. अर्थात् मुखे कहां न जाय [illegible] कहे छे. हे जगवन! जे स्त्रीने में धारण करी

थयो पूरावो दुष्कर छे अने तेने लीधेज ते जव जवमां तृप्ति पामतो नथी. ॥ ६१ ॥

विसय विसट्टा जीवा, उप्पडरूवाइएसु विविहेसु ॥
जवसयसहस्सडुलहं, न मुणंति गयंपि निअजम्मं ॥६२॥

शब्दार्थ–विषयरूप विषथी पीडायेला जीवो उद्भटरूप आदि देश विविध प्रकारनां रूपथी पोतानो जव गमावे छे; परंतु तेव लाख जवे पण डुर्लज एवो पोतानो मनुष्य जन्म व्यर्थ जाय छे एम नथी जाणता. ॥ ६२ ॥

चिठंति विसयविवसा, मुत्तं लज्जंपि केवि गयसंका ॥
न गणंति केवि मरणं, विसयंकुससल्लिया जीवा ६३

शब्दार्थ–विषयरूप अंकूशे साल्या एवा जीवो विषयने वश थका रहे छे, तथा मूको छे लाज जेमणे अने गयेली छे शंका जेमने एवा केटलाएक जीवो (विषयने माटे) मरणने पण नथी गणता. ॥ ६३ ॥

विसयविसेणं जीवा, जिणधम्मं हारिऊण हा नरयं ॥
वचंति जहा चित्त य, निवारिउ बंजदत्तनिवो ॥ ६४ ॥

शब्दार्थ–खेद थाय छे के, विषयरूप विषथी जीवो जिनधर्मने हारी नरके जाय छे. एज कारणथी चित्र मुनिये ब्रह्मदत्त राजाने विषयथी निवार्यो हतो. ॥६४॥

धिद्धी ताण नराणं, जे जिणवयणामयंपि मुत्तूणं ॥
चठगइविडंबणाकरं, पियंति विसयासवं घोरं ॥६५॥

शब्दार्थ–धिक्कार थाव! धिक्कार थाव! तेवा पुरुषोने के, जे जिन वचनरूप अमृतने मूकीने चारे गतिनी विटंबना करावनार विषयरूप घोर मदिराने पीए छे!!! ॥६५॥

मरणेवि दीणवयणं, माणधरा जे नरा न जंपंति ॥
तेवि हु कुणंति लल्लिं, बालाणं नेहगहगहिला ६६

शब्दार्थ–मानने धारण करनारा जे पुरुषो मरण आवे छते पण दीन वचन नहोता बोलता, तेज पुरुषो स्त्रीयोना स्नेहरूप ग्रहथी घेला थइने दीन वचनो बोले छे. ॥६६॥

सक्कोवि नेव खंडइ, माहप्प मडुप्फुरं जए जेसिं ॥
तेवि नरा नारीहिं, कराविआ निय य दासत्तं ॥६७॥

शब्दार्थ–आ जगतमां जे पुरुषोनां महात्म्य अने महिमाने शक्रेंद्र पण न खंडन करी शके, तेवा पुरुषोनी पासे पण स्त्रीयोए पोतानुं दासपणुं कराव्युं. ॥६७॥

जउनंदणो महप्पा, जिणजाया वयधरो चरमदेहो ॥
रहनेमी राइमइ, रायमइ कासि ही विसया ॥६८॥

शब्दार्थ–धिक्कार थाव विषयोने! के, यादवना पुत्र, म्होटो छे आत्मा जेनो, नेमिनाथ जिनराजना भाइ, चार महाव्रत धारक अने चरम शरीरी एवा रथनेमीये पण राजीमती साथे रागम ति करी! ॥ ६८ ॥

मयणपवणेण जइता-रिसावि सुरसेलनिच्चला चलिया ॥
ता पक्कपत्तसत्ता–ण इयरसत्ताण का वत्ता ॥६९॥

शब्दार्थ -जो के मदन रूप पवनथी मेरुपर्वत सरखा नि श्चल मुनियो चलि गया, तो पाका पान जेवा सत्ववाला बीजा जीवोनी शी वात ? ॥ ६९ ॥

जिप्पंति सुहेणं चिय, हरिकरिसप्पाइणो महाकूरा ॥
इक्कुच्चिय दुज्जेओ, कामो कयसिवसुहविरामो ॥७०॥

शब्दार्थ–सिंह, हाथी अने सर्पादिक म्हा ... ने

सुखेथी जीताय, परंतु करचो छे मोक्षना सुखथी विराम
ऐ एवो एक काम जीतवो दुर्जय छे. ॥ ७० ॥

विसमा विसयपिवासा, अणाइभवभावणाइ जीवाणं
अइदुज्जेयाणी इंदियाणि तह चंचलं चित्तं ॥७१॥

शब्दार्थ–जीवोने विषम एवा विषयनी तृषा अनादिनी सं
रनी भावना छे. इंद्रियो अति दुर्जय छे तेम चित्त पण चंचल

कलिमल अरइ अ भुक्खो, वाही दाहाइ विविह असुहा
मरणंपि य विरहाइसु, संपज्जइ कामतवियाण ॥७२॥

शब्दार्थ–कामथी तपेला जीवोने कलिमल, अरति, भू
दाहादिक व्याधि, विविध प्रकारनां दुःख, प्रियजननो वि
अने मरण पण थाय छे. ॥ ७२ ॥

(काव्यम्.)

पंचिंदियविसयपसंगरेसि, मणवयणकायनविसंवरेसि
तंवाहिसि कत्तिय गलपएसि, जं अट्ठकम्मं नवि निज्जरे

शब्दार्थ–जे प्राणी पंचेन्द्रियना विषय प्रसंगने माटे म
वचन अने कायाने नथी संवरतो, तथा ज्ञानावरणादि आठ
मोने नथी निर्जरतो; ते प्राणी पोताना गलानी उपर का
वाहे छे. ॥ ७३ ॥

किं तुमंधोसि किंवासि धत्तूरिउ,
अहव किं सन्निवाएण आऊरिउ ॥
अमयसमधम्म जं विसव अवमन्नसे,
विसयविसविसम अमियंव बहु मन्नसे ॥ ७४ ॥

शब्दार्थ–हे जीव ! शुं तुं आंधलो छे ? शुं तें धतूरो खा
छे ? अथवा शुं तुं सन्निपात रोगे पीडाएलो छे ? के, जे कार

माटे अमृत समान जिनधर्मने विषनी पेठे अवगणे छे ? अने विषम एवा विषय रूप विषने अमृतनी पेठे बहु मानेछ. ॥७४॥

तुज्झ तुह नाणविन्नाणगुणडंबरो,
जलणजालासु निवडंतु जिअ निप्परो ॥
पयइ वामेसु कामेसु जं रज्जसे,
जेहिं पुण पुणवि निरयानले पच्चसे ॥ ७५॥

शब्दार्थ–हे जीव ! त्हारुं ज्ञान, विज्ञान अने गुणनो आडंबर, ते सर्वे निरंतर अग्निनी ज्वालामां पडो, जे कारण माटे तुं प्रकृतिये वांका एवा कामभोगमां राचे छे, जेथी तुं फरी फरीने नरकमां रहेलो अग्निनी ज्वालामां पचीश. ॥ ७५ ॥

दहइ गोसीस सिरिखंम छारकए.
छगल गहणठ मेरावणं विक्कए ॥
कप्पतरु तोडि एरंड सो वावए,
जुज्जि विसएहिं मणुअत्तणं हारए ॥ ७६ ॥

शब्दार्थ–जे प्राणी अल्प एवा विषयसुखने माटे मनुष्य पणाने हारे छे; ते प्राणी राखने माटे गोशीर्षचंदन अने सूखड ने बाले छे, बोकडो ग्रहण करवा माटे ऐरावत हाथीने वेचे छे अने कल्पवृक्षने उखेडी नांखी एरंडाने वावे छे ॥ ७६ ॥

(अनुष्टुप्वृत्तम्)

अधुवं जीवियं नच्चा, सिद्धिमग्गं वियाणिया ॥
विणिअट्टिज्ज जोगेसु, आउ परिमिअ मप्पणो ॥७७॥

शब्दार्थ–जीवितव्यने अशाश्वत जाणीने, मोक्ष मार्गना सुखने शाश्वत जाणीने अने आउखुं अपरिमित (प्रमाण विनानुं) जाणीने भोगथी विशेष निवर्त्तवुं. ॥ ७७ ॥

जेणे रागादिकने पोताने वश्य कर्या छे, तेना वश्यमां सर्व प्रकारनां सुख छे. ॥ ७७ ॥

केवल दुहनिम्मविए, पडियो संसारसायरे जीवो ॥
जं अणुहवइ किलेसो, तं आसव हेउअं सवं ॥७८॥

शब्दार्थ–आ जीव केवल दुःखे निपजावेला संसार समुद्रमां पड्यो छे अने त्यां जे क्लेशने (दुःखने) अनुभवे छे, ते सर्व आश्रवनां कारण छे. ॥ ७८ ॥

ही संसारे विहिणा, महिलारूवेण मंडिअं जालं ॥
वज्झंति जत्थ मूढा, मणुआ तिरिआ सुरा असुरा ७९

शब्दार्थ–ही इति खेदे ! आ संसारमां स्त्रीना रूपे करी विधाताए जाल मांड्यो छे, जे जालमां मूढ एवा मनुष्यो, तिर्यंचो, सुरो अने असुरो बंधाय छे ! ॥ ७९ ॥

विसमा विसय भुअंगा, जेहिं डसिआ जिआ भववणंमि
कीसंती दुहग्गीहिं, चुलसीई जोणि लखेसु ॥८०॥

शब्दार्थ–भव रूपी वनमां अर्थात् संसार रूपी वनमां रखडता एवा जे जीवोने विषम एवा विषय रूप सर्पो डश्या, ते जीवो दुःख रूप अग्निये दुःख पामता थका चोराशीलाख जीवाजोनिमां क्लेश पामे छे. ॥ ८० ॥

संसारचारगिम्हे, विसयकुवाएण लुक्किया जीवा ॥
हियमहियं अमुणंता, अणुहवइ अणंतदुक्खाइं ॥८१॥

शब्दार्थ–संसारना मार्ग रूप ग्रिष्मकालमां विषय रूप नठारा वायरेथी सुकायेला जीवो हित अहितने न जाणता थका अनंत दुःखोने अनुभवे छे. ॥ ८१ ॥

हा हा दुरंत दुट्ठा, विसय तुरंगा कुसिक्खिया लोए ॥
भीसण भवाडवीए, पाडंति जिआण मुद्धाणं ॥८२॥

शब्दार्थ–हा ! हा ! आ संसाररूप लोकमां दुःखे करी अंत छे जेनो, दुष्ट अने विपरीत शीखवेला एवा विषयरूप घोडाउ मुग्ध जीवोने जयंकर एवी जवरूप अटवीमां पाडे छे. ए२

विसयपिवासातत्ता, रत्ता नारीसु पंकिलसरंमि ॥
दुहिया दीणा खीणा, रुलंति जीवा जववणंमि ए३

शब्दार्थ–विषयरूप तृषाथी तपेला अने स्त्रीमां रक्त थयेला जीवो जवरूपी वनमां स्त्रीरूप कादववाला सरोवरमां दुःखीया, दीन अने क्षीण थया उता लोटे छे. ॥ ए३ ॥

गुणकारियाइ धणियं, धिइरज्जु निअंतिआइ तुह जीव
नियपाइ इंदियाइं, वल्लिनिअत्ता तुरंगुव ॥ए४॥

शब्दार्थ–हे जीव ! धिरजरूप दोरडाथी वश्य राखेली पोतानी इंद्रियो लगाममां वश्य राखेला घोडानी पेठे अतिशे फायदाकारक छे. ॥ ए४ ॥

मणवयणकायजोगा, सुनिअत्ता तेवि गुणकरा हुंति ॥
अनिअत्ता पुण जंजति, मत्तकरिणुव सीलवणं॥ए५॥

शब्दार्थ–मन, वचन अने कायाना योग वश्य कर्या उता ते पण गुणकारी थाय छे अने नहि वश्य कर्या उता मदोन्मत्त हस्तिनी पेठें शीलरूप वनने जांगे छे. ॥ ए५ ॥

जह जह दोसा विरमइ, जह जह विसएहिं होइ वेरग्गं ॥
तह तह विन्नायवं, आसन्नं से य परमपयं ॥ ए६ ॥

शब्दार्थ–जेम जेम दोषो विराम पामे छे अने जेम जेम विषयथी वैराग्य थाय छे, तेम तेम जाणवुं के, तेने (मोक्ष) ढुकडुं थाय छे. ॥ ९६ ॥

डुक्कर मेएहिं कयं, जेहिं समत्थेहिं जुव्वणत्थेहिं ॥
जग्गं इंदियसिन्नं, धिइपायारं विलग्गेहिं ॥ए७॥

शब्दार्थ–जे पुरुष पोताना सामर्थ्यपणाथी जोवन अव स्थामां इंद्रियरूप सैन्यने जागीने विरजरूप प्राकार (गढ)ने व लग्या, ते पुरुषे दुष्कर काम कर्युं एम जाणवुं. ॥ ९७ ॥

ते धन्ना ताण नमो, दासोऽहं ताण संजमधराणं ॥
अद्धच्छि पच्छिराड, जाण न हियए खम्कंति ॥ए८॥

शब्दार्थ–तेज पुरुषोने धन्य छे, तेमनेज अमे नमस्कार करीए छीए अने तेज संयमधारीना अमे दास छीए के, जे पुरु षोनां हृदयमां अर्ध आंखे जोनारी अर्थात् कटाक्ष नेत्रे जोनारी स्त्री खटकती नथी. ॥ ९८ ॥

किं बहुणा जइ वंछसि, जीव तुमं सासयं सुहं अरुहं ॥
ता पियसु विसयविमुहो, संवेगरसायणं निच्चं ॥एए॥

शब्दार्थ–वधारे कहेवाथी शुं ? हे जीव ! जो तुं निरोग एवा शाश्वत सुखने वांछतो होय, तो विषयथी विमुख था अने निरंतर संवेग रसायणने पी. ॥ ९९ ॥

॥ इति श्री इंद्रियपराजयशतक समाप्तम्. ॥

॥ श्री वैराग्य शतकम् ॥

संसारंमि असारे, नत्थि सुहं वाहिवेअणापउरे ॥
जाणंतो इह जीवो, न कुणइ जिणदेसियं धम्मं ॥१॥

शब्दार्थ–असार तेमज व्याधि अने वेदनाथी भरपूर एवा आ संसारमां सुख नथी, एम जाणतो छतो जीव जिनराजे क हेला धर्मने आचरतो नथी. ॥ १ ॥

१ शरीर संबंधि दुःख, २ मन संबंधि दुःख.

अद्यं कल्लं परं परारिं, पुरिसा चिंतंति अत्थसंपत्तिं ॥
अंजलिगयंव तोयं, गलंतमाऽऽउं न पिच्छंति ॥२॥

शब्दार्थ–पुरुषो " आज, काल, पहोर अथवा परार मने धन संपत्ति मलशे. " एम विचार करे छे; परंतु अंजलीमां रहेला पाणीनी पेठे गली जतां आयुष्यने नथी जोता. ॥ २ ॥

जं कल्ले कायव्वं. तं अज्जं चिय करेह तुरमाणा ॥
बहुविग्घो हु मुहुत्तो, मा अवरण्हं पडिक्खेह ॥३॥

शब्दार्थ–हे प्राणीयो! जे काले करवा योग्य होय तेने आजेज करो. कारणके, एक मुहूर्तमां पण बहु विघ्नो आवी पडे छे, माटे आवता दिवसनी वाट न जूओ. ॥ ३ ॥

ही संसारसहावं, चरियं नेहाणुरायरत्तावि ॥
जे पुव्वण्हे दिट्ठा, ते अवरण्हे न दीसंति ॥४॥

शब्दार्थ–आ संसारना स्वभावना आचरणने जोइने श्रम ने खेद थाय छे के, स्नेहना अनुरागमां आसक्त एवा स्वजनो सवारे देखाता हता ते सांजे देखाता नथी. ॥ ४ ॥

मा सुअह जग्गिअव्वे, पलाइअव्वंमि कीस वीसमहे ॥
तिन्नि जणा अणुलग्गा, रोगो अ जरा अ मच्चू अ ५

शब्दार्थ–हे लोको! जागवाने अवसरे अर्थात् धर्मकृत्य करवाने वखते केम सूइ रहो छो ? अर्थात् आलस करो छो ? वली नासी जवानां स्थानके केम विसामो करो छो ? कारणके, रोग, जरा अने मृत्यु ए त्रण तमारी पुंठे लागेला छे ॥ ५ ॥

दिवसनिसाघडिमालं, आउसलिलं जीआण घित्तूणं
चंदाइच्चवइल्ला, कालरहट्टं भमाडंति ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–चंद्र सूर्यरूप बलदो रात्रि दिवसरूप घडानी पं

कि वडे जीवोनां आयुष्यरूप पाणीने खेंची काढता छता कालरूप रेंटने फेरवे छे ॥ ६ ॥

सा नत्थि कला तं नत्थि, उसहं तं नत्थि किंपि विन्नाणं॥
जेण धरिज्जइ काया, खज्जंती कालसप्पेणं ॥७॥

शब्दार्थ–हे भव्य जीवो! कालरूप सर्पथी भक्षण कराता देहने जेनाथी रक्षण करीये एवी कोइ कला नथी, तेवुं कोइ औषध नथी अने तेवुं कोइ विज्ञान पण नथी. ॥७॥

दीहरफणिंदनाले, महिअरकेसर दिसामहदलिल्ले ॥
उ पीअइ कालभमरो, जणमयरंदं पुहविपउमे ॥८॥

शब्दार्थ–आ घणो खेदनी वात छे के, कालरूप भमरो म्होटा शेषनागरूप नालवालां, पर्वतोरूप केशरावालां, दिशाओरूप पत्रवाला, पृथ्वीरूप कमलने विषे मनुष्योरूप मकरंदनुं पानकरेछे।

छायामिसेण कालो, सयलजीआणं छलं गवेसंतो ॥
पासं कहवि न मुंचइ, ता धम्मे उज्जमं कुणह ॥९॥

शब्दार्थ–छलनी शोध करतो काल छायानां मिषथी सर्व प्राणीयोनां पडखांने नथी मूकतो, माटे हे भव्य जीवो! तमे धर्मने विषे उद्यम करो ॥ ९ ॥

कालंमि अणाईए, जीवाणं विविहकम्मवसगाणं ॥
तं नत्थि संविहाणं, संसारे जं न संभवइ ॥ १० ॥

शब्दार्थ–अनादि काल चक्रमां भमता अने नाना प्रकारनां कर्मने वश रहेला जीवोने संसारमां कोइ पण एकेंद्रियादि भेद नथी प्राप्त थयो, एम नथी. अर्थात् एकेंद्रियादि सर्व भेदोमां भमेलो छे

(अनुष्टुप्वृत्तम्)

बंधवा सुहिणो सव्वे, पिअमाया पुत्तभारिया ॥
पेअवणाउ निअत्तंति, दाऊणं सलिलंजलिं ॥११॥

शब्दार्थ-बांधवो, सुहृदो, माता, पिता, पुत्र अने स्त्री, ए सर्वे मरी गयेला मनुष्यने पाणीनो अंजली आपीने पछी श्मशानथी पाछा आवे छे. ॥ ११ ॥

(आर्यावृत्तम्.)

विहडंति सुआ विहडं-ति बंधव वल्लहा य विहडंति ॥
इक्को कहवि न विहडइ, धम्मो रे जीव जिणभणिउ १२

शब्दार्थ-अरे जीव ! पुत्रो, बांधवो अने स्त्रीयो ए सर्वनो वियोग थाय छे; परंतु श्री जिनराजे कहेला एक धर्मनो वियोग क्यारे पण थतो नथी. ॥ १२ ॥

अडकम्मपासबद्धो, जीवो संसारचारए ठाइ ॥
अडकम्मपासमुक्को, आया सिवमंदिरे ठाइ ॥१३॥

शब्दार्थ-आठ कर्मरूप पाशथी बंधायलो जीव संसाररूप बंदीखानामां रहे छे अने आठ कर्मपाशथी छूटेलो आत्मा मोक्ष मंदिरमां वसे छे ॥ १३ ॥

विहवो सज्जणसंगो, विसयसुहाइं विलासललिआइं ॥
नलिणीदलग्गघोलिर, जललवपरिचंचलं सव्वं ॥१४॥

शब्दार्थ-लक्ष्मी, स्वजन संयोग अने विलास करीने सुंदर एवां विषय सुख ए सर्वे कमलनां पत्र उपर रहेला पाणीना बिंदु समान अत्यंत चपल छे. ॥ १४ ॥

तं कत्थ बलं तं क-त्थ जुव्वणं अंगचंगिमा कत्थ ॥
सव्वमणिच्चं पिच्छह, दिट्ठनठ्ठं कयंतेण ॥१५॥

शब्दार्थ-हे प्राणीयो! ते बल, ते यौवन अने ते अंगनुं सुंदरपणुं क्यां गयुं ? ते कारण माटे काले करीने दीठा न... आ सर्व अनित्य जाणो. ॥१५॥

घणकम्मपासबद्धो, जवनयरचउप्पहेसु विविहाउ।
पावइ विडंबणाउ, जीवो को इत्थ सरणं से ॥१६॥

शब्दार्थ–गाढ कर्मरूप पासाथी बंधायलो जीव संसा
नगरना चौटामां विविध प्रकारनी विटंबना पामे छे, माटे अ
सारमां ते जीवनुं कोण रक्षण करनार छे ? ॥१६॥

घोरंमि गप्रवास, कलमलजंबालअसुइबीजत्थे।
वसिउं अणंतखुत्तो, जीवो कम्माणुनावेण ॥१७

शब्दार्थ–जीव, घोर अने उदरमां रहेला पदार्थोथी
चि तेमज जयंकर एवा गर्जवासमां पोतानां कर्मना प्रज
अनंतीवार वश्यो छे. ॥१७॥

चुलसीइ किर लोए, जोणीणं पमुहसयसहस्साइं
इक्किक्कम्मि अ जीवो, अणंत खुत्तो समुप्पनो ॥१

शब्दार्थ–शास्त्रमां चोराशी लाख योनी कही छे अने
रेक योनीमां जीव अनंतीवार उत्पन्न थयो छे. ॥१८॥

मायापियबंधूहिं, संसारत्थेहिं पूरिउ लोउ ॥
बहुजोणिनिवासीहिं, नय ते ताणं च सरणं च ॥१

शब्दार्थ–संसारमां रहेला अने घणी योनीमां निवास
नारां माता, पिता अने बंधुजए करीने आ लोक जरपूर थ
परंतु ते माता पिता विगेरे त्हारुं रक्षण करनार नथी, ते
त्हारे शरण करवा योग्य नथी. ॥१९॥

जीवो वाहिविलुत्तो, सफरो इव निजले तम्फमइ
सयलोवि जणो पिन्नइ, को सक्को वेअणाविगमे ॥

शब्दार्थ–पीमाथी व्याप्त थयेलो जीव जल रहित स्था
मांछलानी पेठे तरफमे छे. सर्व लोक ते जीवने जूए छे, पण

वेदना दूर करवा कोण समर्थ होय? अर्थात् कोइ नथी. २०

मा जाणसु जीव तुमं, पुत्त कलत्ताइ मज्झ सुहहेऊ ॥
निउणं बंधणमेअं, संसारे संसरंताणं ॥ २१ ॥

शब्दार्थ–हे जीव! तुं "आ पुत्र कलत्रादि म्हारां सुखनां कारण थशे." एम तुं न जाणीश. कारणके, संसारमां भमतां जीवोने ते पुत्रादि उलटा बंधनरूप थाय छे. ॥२१॥

जणणी जायइ जाया, जाया माया पिआ य पुत्तो य ॥
अणवत्था संसारे, कम्मवसा सव्वजीवाणं ॥ २२ ॥

शब्दार्थ–संसारमां कर्मनां वशपणाथी सर्व जीवोने एक जातनी अवस्था रहेली नथी. कारणके, पूर्वना भवमां माता होय ते बीजा भवमां स्त्री थइ जाय, स्त्री होय ते माता थाय, पिता होय ते पुत्र थाय अने पुत्र होय ते पिता पण थाय. ॥ २२ ॥

(अनुष्टुप्वृत्तम्.)

न सा जाई न सा जोणी, न तं ठाणं न तं कुलं ॥
न जाया न मुआ जत्थ, सव्वे जीवा अणंतसो ॥२३॥

शब्दार्थ–जेमां सर्वे जीवो अनंतीवार उत्पन्न थया नथी अने मृत्यु पाम्या नथी एवी कोइ जाति, योनी, स्थान के कुल नथी.

(आर्यावृत्तम्.)

तं किंपि नत्थि ठाणं, लोए वालग्गकोडिमित्तंपि ॥
जत्थ न जीवा बहुसो, सुहदुक्खपरंपरं पत्ता ॥२४॥

शब्दार्थ–जेमां जीवो बहुवार सुख दुःखनी परंपराने नथी पाम्या; एवुं लोकमां वालना अग्रभाग जेटलुं कोइपण स्थान नथी.

सव्वाउ रिद्धीउ, पत्ता सव्वेवि सयणसंबंधा ॥
संसारे तो विरमसु, तत्तो जइ मुणसि अप्पाणं

शब्दार्थ–हे जीव! तने आ संसारमां सर्व समृद्धि अने सं स्वजनादि संबंध प्राप्त थाय छे, माटे जो पोताने सुखी जाणते होय तो तेथी विराम पाम. ॥२५॥

एगो बंधइ कम्मं, एगो वहबंधमरणवसणाइं ॥
विसहइ जवंमि जमडइ, एगुच्चिअ कम्मवेलविउ॥२६॥

शब्दार्थ–जीव पोते एकलोज कर्मने बांधे छे, एकलो वध बंधन अने मरणनी आपत्तिने सहन करे छे; वली एकलोज कर्म थी ठगायो छतो संसारमां जमे छे. ॥२६॥

अन्नो न कुणइ अहिअं, हियंपि अप्पा करेइ न हु अन्नो
अप्पकयं सुहडुरकं, जुंजसि ता कोस दीणमुहो ॥२७॥

शब्दार्थ–हे प्राणिन्! त्हारुं बीजुं कोइ अहित करतुं नथी, तेमज त्हारुं पोतानुं हित पण तुं पोतेज करे छे, बीजुं कोइ करतुं नथी, माटे तुं पोतानुं करेलुं सुख डुःख जोगवे छे, तो पछी शा कारण माटे दीन मुखवालो थाय छे? ॥२७॥

बहुआरंजविढत्तं, वित्तं विलसंति जीव सयणगणा ॥
तज्जणियपावकम्मं, अणुहवसि पुणो तुमं चेव ॥२८॥

शब्दार्थ–हे जीव! तें पोते बहु आरंजथी मेलवेलुं जे धन छे तेणे करीने त्हारा स्वजनो विलास करे छे अने वली ते आरंजथी उत्पन्न थयेलां पापने तुं पोते एकलोज नरकमां अनुजव करीश.

अह डुक्खिआइ तह जु–क्खिआइ, जह चिंतियाइ डिंजाइ
तह थोवंपि न अप्पा, विचिंतिउ जीव किं जणिमो॥२९

शब्दार्थ–अरे मूर्ख जीव! तें जेवी रीते त्हारा डुःखी थता जूख्या एवा बालकोनो विचार कर्यो छे तेवी रीते त्हारो पोतानो विचार कर्यो नथी, तो हवे तने शुं कहुं? ॥२९॥

खणभंगुरं सरीरं, जीवो अन्नो अ सासयसरूवो ॥
कम्मवसा संबंधो, निव्वंधो इत्त को तुझ ॥ ३० ॥

शब्दार्थ–शरीर क्षणभंगुर अने तेथी जूदो एवो जीव शाश्वत रूपवालो छे. वली ए बेनो कर्मना वश्यथी संबंध थयो छे तो पछी हे जीव! त्हारे ए शरीरने विषे मूर्छा शामाटे राखवी जोइये?

कह आयं कह चलिअं, तुमंपि कह आगत कहं गमिहो॥
अन्नुन्नंपि न याणह, जीव कुडुंबं कउ तुझ ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ–हे जीव! आ कुटुंब क्यांथी आव्युं अने क्यां गयुं? तुं पण क्यांथी आव्यो अने क्यां जइश? वली तमे परस्पर एक बीजाने जाणता नथी तो पछी ते कुटुंब त्हारुं क्यांथी? ३१

खणभंगुरे सरीरे, मणुअभवे अब्भपडलसारिछे ॥
सारं इत्तिअमित्तं, जं कीरइ सोहणो धम्मो ॥३२॥

शब्दार्थ–शरीर क्षणभंगुर अने मनुष्यभव मेघना समूह जेवो छे, जेथी उत्तम धर्म आचरवो एज मात्र सार छे. ३२

(अनुष्टुब्वृत्तम्)

जम्म डुक्खं जरा डुक्खं, रोगा य मरणाणि य ॥
अहो डुक्खो हुं संसारे, जन्न कीसंति जंतुणो ॥३३॥

शब्दार्थ–जन्म संबंधी दुःख, जरावस्था संबंधी दुःख, रोगो अने मरण ए पण दुःखमय छे; माटे आ संसारज दुःखरूप छे के, जेमां पाणीयो क्लेश पामे छे. ॥३३॥

(आर्यावृत्तम्)

जाव न इंदियहाणी, जाव न जररक्खसी परिफुरइ ॥
जाव न रोगविआरा, जाव न मच्चू समुल्लिअइ ॥३४॥

शब्दार्थ–ज्यां सुधीमा इंद्रियो क्षीण थइ नथी. ज्यां सुधी

शब्दार्थ–हे जीव! तने आ संसारमां सर्व समृद्धि अने सर्व स्वजनादि संबंध प्राप्त थाय छे, माटे जो पोताने सुखी जाणतो होय तो तेथी विराम पाम. ॥२५॥

एगो बंधइ कम्मं, एगो वहबंधमरणवसणाइं ॥
विसहइ भवंमि भमइ, एगुच्चिअ कम्मवेलविओ॥२६॥

शब्दार्थ–जीव पोते एकलोज कर्मने बांधे छे, एकलो वध, बंधन अने मरणनी आपत्तिने सहन करे छे; वली एकलोज कर्म थी ठगायो छतो संसारमां भमे छे. ॥२६॥

अन्नो न कुणइ अहिअं,हियंपि अप्पा करेइ न हु अन्नो
अप्पकयं सुहदुक्खं, भुंजसि ता कीस दीणमुहो ॥२७॥

शब्दार्थ–हे प्राणिन्! त्हारुं बीजुं कोइ अहित करतुं नथी. तेमज त्हारुं पोतानुं हित पण तुं पोतेज करे छे, बीजुं कोइ करतुं नथी, माटे तुं पोतानुं करेलुं सुख दुःख भोगवे छे, तो पछी शा कारण माटे दीन मुखवालो थाय छे? ॥२७॥

बहुआरंभविढत्तं, वित्तं विलसंति जीव सयणगणा ॥
तज्जणियपावकम्मं, अणुहवसि पुणो तुमं चेव ॥२८॥

शब्दार्थ–हे जीव! तें पोते बहु आरंभथी मेलवेलुं जे धन छे तेणे करीने त्हारा स्वजनो विलास करे छे अने वली ते आरंभथी उत्पन्न थयेलां पापने तुं पोते एकलोज नरकमां अनुभव करीश.

अह दुक्खिआइ तह भु–क्खिआइ,जह चिंतियाइ डिंभाइ
तह थोवंपि न अप्पा, विचिंतिओ जीव किं भणिमो॥२९

शब्दार्थ–अरे मूर्ख जीव! तें जेवी रीते त्हारा दुःखी थता भूख्या एवा बालकोनो विचार कर्यो छे तेवी रीते त्हारो पोतानो विचार कर्यो नथी, तो हवे तने शुं कहुं? ॥२९॥

(उपजाति वृत्तम्)

निसाविरामे परिभावयामि, गेहे पलित्ते किमहं सुआमि
डझंतमप्पाणमुवक्खयामि,जं धम्मरहिउ दिअहा गमामि॥

शब्दार्थ–हे जीव! तने आवो विचार केम नथी आवतो के, हुं पाछली चार घमी रात रहे एटले आवो विचार करुं के, जे हुं धर्म रहित दिवसो केम गमावुं छुं ? घर बलवा मांडये छते केम सुइ रहुं छुं? अने बलता एवा आत्मानी केम उपेक्षा करुं छुं?

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

जाजा वच्चइ रयणी, न सा पमिनिअत्तइ ॥
अहम्मं कुणमाणस्स, अहला जंति राइउ ॥४०॥

शब्दार्थ–जे जे रात्री दिवसो जाय छे ते ते पाछा आवता नथी. कारणके, अधर्म करनार माणसना रात्री दिवस निष्फल जाय छे.

जस्स त्थि मच्चुणासक्खं, जस्स व त्थि पलायणं ॥
जो जाणे न मरिस्सामि, सोहु कंखे सुए सिया ॥४१॥

शब्दार्थ–जेने मृत्युनी साथे मित्रता छे, जेने मृत्युथी नासी जवुं छे. वली जे पुरुप एम जाणे छे के, हुं मरीश नहि, ते पुरुप कदापि आवती काले धर्म करवानी इछा करे छे. ॥४१॥

(आर्यावृत्तम्)

दंरूकलिअं करित्ता, वच्चंति हु राइउ अ दिवसा य ॥
आउस संविल्लंता, गयावि न पुणो निअत्तंति ॥४२॥

शब्दार्थ–फालका उपरथी दंरूवर्के सूत्रने उकेलवानी पेठे आयुष्यने उकेलता एवा रात्री दिवसो चाल्या जाय छे अने ते गयेला रात्री दिवसो पाछा आवता नथी. ॥ ४२ ॥

(उपजातिवृत्तम्)

जहेह सीहो व मियं गहाय, मच्चू नरं नेइ हु अंतकाले ॥
न तस्स माया व पिया व भाया, कालंमि तंमिंऽसहरा भवंति

शब्दार्थ—जेम आ लोकमां सिंह मृगने पकडीने मारी नाखे छे तेम मृत्यु माणसने निश्चे विनाश पमाडे छे; पण ते वखते ते माणसने माता, पिता अने भाइ रक्षण करवा समर्थ थता नथी.

(आर्यावृत्तम्)

जिअं जलबिंदुसमं, संपत्तीउ तरंगलोलाउ ॥
सुमिणयसमं च पिम्मं, जं जाणसु तं करिज्जासु ४४

शब्दार्थ—जीवित दर्भना अग्रभाग उपर रहेला जलबिंदु समान, संपत्तियो जलना तरंगो समान अने प्रेम स्वप्न समान छे, माटे जो ते तेवुं जाणतो होय तो धर्म आचर. ॥ ४४ ॥

(रथोद्धतावृत्तम्)

संझरागजलबुब्बुउवमे, जीविए अ जलबिंदुचंचले ॥
जुव्वणे य नइवेगसन्निभे, पावजीव किमियं न बुज्झसे ४५

शब्दार्थ—संध्या समयनो रंग, पाणीनो परपोटो अने दर्भना अग्रभाग उपर रहेलुं पाणीनुं बिंदु, तेना समान जीवित छते, वली नदीना वेग समान युवावस्था छते हे पाप जीव! तुं बोध नथी पामतो ए शुं ? ॥ ४५ ॥

(आर्यावृत्तम्)

अन्नत्थ सुआ अन्नत्थ गेहिणी परिअणोवि अन्नत्थ ॥
भूअबलिव कुडुंबं, पक्खित्तं हयकयंतेण ॥ ४६ ॥

शब्दार्थ—अरे निंदा करवा योग्य काले भूतने बलिदान आपवानी पेठे पुत्रोने जूदी गतिमां, स्त्रीने जूदी गतिमां अने परि

वारने जूदी गतिमां; एम सर्व कुटुंबने जूड जूड करी नाख्युं छे.

जीवेण जवेजवे मि-लियाइ, देहाइ जाइ संसारे ॥
ताणं न सागरेहिं, कीरइ संखा अणंतेहिं ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ–हे आत्मन्! आ संसारमां जीवे, जवे जवमां जे देहो मेलव्या छे, तेउनी अनंता सागरोपमथी पण संख्या थइ शके तेम नथी. ॥ ४७ ॥

नयणोदयंपि तासिं, सागरसलिलाउ बहुयरं होइ ॥
गलियं रुयमाणीणं, माऊणं अन्नमन्नाणं ॥४८॥

शब्दार्थ–हे आत्मन्! ते अपर अपर जन्मनो रुदन करती माताउनां आंसुनां जलनुं प्रमाण समुद्रनां जलथी पण वधारे छे.

जं नरए नेरइआ, दुहाइ पावंति घोरणंताइ ॥
तत्तो अणंतगुणिअं. निगोअमज्झे दुहं होइ ॥४९॥

शब्दार्थ–नरकमां नारकी जोवो जे घोर अनंत दुःख पा मे छे, तेनाथी अनंतगणु दुःख निगोदमां छे. ॥ ४९ ॥

तंमिवि निगोअमज्झे. वसिउ रेजीव विविहकम्मवसा ॥
विसहंतो तिरकदुहं, अणंतपुग्गलपरावत्ते ॥ ५० ॥

शब्दार्थ–अरे जीव! विविध कर्मना वशथी ते निगोदनी मध्ये पण तुं तीक्ष्ण दुःखने सहन करतो छतो अनंत पुद्गलप रावर्त्त काल सुधी वश्यो छे. ॥ ५० ॥

नीहरिअ कहवि तत्तो, पत्तो मणुअत्तणंपि रेजीव ॥
तन्नवि जिणवरधम्मो, पत्तो चिंतामणिसरिच्छो ॥ ५१ ॥

शब्दार्थ–अरे जीव! महा कष्टे करीने ते निगोदथी नीक ली तुं मनुष्य पणाने पाम्यो छे अने तेमां पण चिंतामणि रत्न सरखा जिनेश्वरना धर्मने पाम्यो छे. ॥ ५१ ॥

पत्तेवि तंमि रेजीव, कुणसि पमायं तयं तुमं चेव ॥
जेणं भवंधकूवे, पुणोवि पडिओ दुहं लहसि ॥ ५२ ॥

शब्दार्थ–अरे जीव ! ते जिनेश्वर धर्म प्राप्त थया छता प
ण तुं जेनाथी फरीने पण संसाररूप कूवामां पडीने दुःख पामीए
एवा प्रमादने करे छे. ॥ ५२ ॥

उवलद्धो जिणधम्मो, न य अणुचिन्नो पमायदोसेणं ॥
हा जीव अप्पवेरि अ. सुबहुं परओ विसूरिहिसि ॥५३॥

शब्दार्थ–हे जीव ! तने जिनेश्वरनो धर्म प्राप्त थयो; पण
तें प्रमादना दोषथी तेने सेव्यो नहि; जेथी हे आत्मवैरी ! तुं
आगल बहुज खेद करीश. ॥ ५३ ॥

सोअंति ते वराया, पच्छा समुवट्ठिअंमि मरणंमि ॥
पावपमायवसेणं, न संचिओ जेहिं जिणधम्मो ॥५४॥

शब्दार्थ–जेमणे पापरूप प्रमादना वशथी जिनधर्म नथी
मेल्व्यो ते रांक पुरुषो मरण प्राप्त थये छते शोक करे छे. ५४

धी धी धी संसारं, देवो मरिऊण जं तिरी होइ ॥
मरिऊण रायराया, परिपच्चइ निरयजालाए ॥ ५५ ॥

शब्दार्थ–आ संसारनेज धिक्कार छे! धिक्कार छे!! धिक्कार
छे!!! कारणके, देवता मरीने तिर्यंच थाय छे अने चक्रवर्त्ती मरी
ने नरकनी ज्वालामां पचाय छे. ॥५५॥

जाइ अणाहो जीवो, दुमस्स पुप्फंव कम्मवायहओ ॥
धणधन्नाभरणाइं, घरसयणकुडुंब मिल्लेवि ॥ ५६ ॥

शब्दार्थ–अनाथ जीव धन, धान्य, आभरण, घर, स्वजन
अने कुटुंबने छोडीने कर्मरूप वायुथी हणायां छतां वृक्षनां पुष्पनी
पेठे चाल्यो जाय छे. (मरणी गति पामे छे.) ॥५६॥

वसिअं गिरीसु वसिअं, दरीसु वसिअं समुद्दमझंमि ॥
रुक्खग्गेसु अ वसिअं, संसारे संसरंताणं ॥ ५७ ॥

शब्दार्थ–हे आत्मन्! संसारने विषे भमता एवा तें पर्वतो उपर, गुफामां, समुद्रमां अने वृक्षोनां अग्रभागने विषे निवास कर्यो छे.

देवो नेरइअ त्ति य, कीअ पयंगु त्ति माणसो एसो ॥
रूवस्सी य विरूवो, सुहभागी दुक्खभागी य ॥५८॥

शब्दार्थ–हे जीव! तुं केटलीक वखत देवता, नारकी, कीडो, पतंग अने मनुष्य थयो छे. वली तेनो तेज तुं केटलीक वखत रूपवंत, कुरूपवंत, सुखी अने दुःखी थयो छे. ॥५८॥

राउत्ति अ दुमगुत्तिअ, एस सपागुत्ति एस वेअविऊ ॥
सामी दासो पुज्जो, खलुत्ति अधणो धणव इत्ति ॥५९॥

शब्दार्थ–एज तुं केटली वखत राजा, भीखारी, चंडाल, ब्राह्मण, स्वामी, दास, पूज्य, खल, निर्धन अने धनवंत थयो छे.

नविअछिकोइनियमो, सकम्मविणिविठसरिसकयचिठो
अन्नुन्नरूववेसो, नडुव्व परिअत्तए जीवो ॥ ६० ॥

शब्दार्थ–ए पूर्वे कहेलामां कोइ जातनो नियम नथी. कारणके, पोते पोतानां कर्मनी रचना प्रमाणे चेष्टा करनारो जीव नटनी पेठे जूदा जूदा रूप लइने फर्या करे छे. ॥६०॥

नरएसु वेयणाउ, अणोवमाउ असायबहुलाउ ॥
रे जीव तए पत्ता, अणंतखुत्तो बहुविहाउ ॥ ६१ ॥

शब्दार्थ–अरे जीव! तें नरकमां उपमा रहित अने असाता वेदनावाली बहु प्रकारनी वेदनाउ अनंतीवार प्राप्त करी छे.

देवत्ते माणुअत्ते, पराभिउगत्तणं उवगएणं ॥
भीसणदुहं बहुविहं, अणंतखुत्तो समणुभूअं ॥

शब्दार्थ—हे जीव! तें देवपणामां, मनुष्यपणामां परतंत्र प णाने पामवावडे बहु प्रकारनुं भयंकर दुःख अनंतीवार अनुभव्युं छे.

तिरिअगइं अणुपत्तो, भीममहावेअणा अणेगविहा ॥
जम्मणमरणरहट्टे, अणंतखुत्तो परिब्भमिओ ॥ ६३ ॥

शब्दार्थ—हे जीव! तीर्यंच गतिने पामेलो तुं अनेक प्रकारनी भयंकर वेदनावाला जन्म मरण रूप रेंहेटमां अनंतीवार भम्योछुं

जावंति केवि दुक्खा, सारीरा माणसा व संसारे ॥
पत्तो अणंतखुत्तो, जीवो संसारकंतारे ॥ ६४ ॥

शब्दार्थ—संसारमां शरीरसंबंधी अने मनसंबंधी जेटलां कोइ दुखो छे ते सर्व आ संसाररूप अरण्यमां भमतो एवो जीव अनंतीवार पाम्यो छे. ॥ ६४ ॥

तण्हा अणंतखुत्तो, संसारे तारिसी तुमं आसी ॥
जं पसमेउं सव्वो—दहीणमुदयं न तीरिज्जा ॥ ६५ ॥

शब्दार्थ—हे जीव! तने तेवा प्रकारनी (तृष्णा) तृषा संसार ने विषे अनंतीवार थइ छे के, जे तृष्णाने शमाववा माटे सर्व समुद्रोनुं पाणी (तेटलुं धन) पण समर्थ न थाय. ॥६५॥

आसी अणंतखुत्तो, संसारे ते छुहावि तारिसीया ॥
जं पसमेउं सव्वो, पुग्गलकाओवि न तरिज्जा ॥ ६६ ॥

शब्दार्थ—हे जीव! वली तने संसारमां तेवी क्षुधा अनंती वार उत्पन्न थइ छे के, जे क्षुधाने शमाववाने घृतादि पुद्गल समू हो पण समर्थ न थाय ॥ ६६ ॥

काऊण मणेगाइं, जम्मणमरणपरिअट्टणसयाइं ॥
दुक्खेण माणुसत्तं, जइ लहइ जहिच्छिअं जीवो ॥६७॥

शब्दार्थ—ज्यारे जीव अनेक एवा जन्म मरणना सेंकडो पराव

तेने करीने दुःखथी मनुष्यभव पामे त्यारे ते इच्छित सुख पामे छे.

तं तह डुल्लहलंभं. विज्जुलयाचंचलं च मणुअत्तं ॥
धम्मंमि जो विसीअइ, सो काउरिसो न सप्पुरिसो ६८

शब्दार्थ–जे पुरुष दश दृष्टांतथी दुर्लभ अने विजलीनो पेठे चंचल एवा ते मनुष्य भवने पामीने धर्मने विषे खेद पामेछे, ते कायर पुरुष जाणवो पण सत्पुरुष न जाणवो ॥ ६८ ॥

(उपजाति वृत्तम्)

माणुस्सजंम्मे तम्हि लद्धयंमि, जिणंदधम्मो न कओ अ जेणं
तुट्टे गुणे जह धाणुक्कएणं, हत्था मलेवा य अवस्स तेणं ६९

शब्दार्थ–जेणे मनुष्यजन्मरूप संसारसमुद्रनो कांठो प्राप्त थया छता जिनेंद्र धर्म नथी कर्यो तेने जेम धनुष्यनी दोरी तुटी जवाथी धनुष्यधारी पुरुषने हाथ घसवा पडे छे तेम अवश्य हाथ घसवा पडे छे. ॥ ६९ ॥

रेजीव निसुणि चंचलसहाव. मिल्हेविणु सयलवि बज्झभाव
नवभेअपरिग्गहविविहजाल, संसारि अत्थि सहुइंदआल

शब्दार्थ–अरे जीव! सांभल. तुं चंचल स्वभाववाला आ सर्व बाह्य भावोने अने नव भेदवाला परिग्रहना विविध समूहने मूकीने परलोकमां जइश, माटे संसारमां शरीरादि जे कांइ देखाय ते सर्व इंद्रजाल समान छे ॥ ७० ॥

पियपुत्तमित्तघरघरणिजाय,
इहलोइअ सव्व नियसुहसहावे ॥
नवि अत्थि कोइ तुह सरणि मुक्ख,
इक्कल्लु सहसि तिरिनिरयदुक्ख ॥७१ ॥

शब्दार्थ–हे मूर्ख! आ लोक संबंधी सर्व पिता, माता, पुत्र

मित्र, घर अने स्त्री विगेरेनो समूह पोत पोताने सुख करवाना स्वन्नाववालो बे; परंतु तिर्यंच अने नरकनां दुःखने तो तुं एकलोज सहन करीश. ते वखते तेमानुं कोइ ह्हारे शरण करवा योग्य नथी. ॥ ३१ ॥

(मागधिकावृत्तम्)

कुसग्गे जह उसबिंडुए, थोवं चिठइ लंबमाणए ॥
एवं मणुआण जीविअं, समयं गोअम मा पमायए ३२

शब्दार्थ–जेम दर्ज्जना अग्रन्नाग उपर रहेलुं पाणीनुं बिंदु थोमो वखत रहे बे, तेम मनुष्यनुं जीवित पण थोमा वखतनुं बे, माटे हे गौतम! एक समय पण प्रमादी थइश नहि. ॥ ३२ ॥

संबुज्झह किं न बुज्झह, संबोही खलु पिच्च उल्लहा ॥
नो हू उवणमंति राइउ, नो सुलहं पुणरवि जीवियं ३३

शब्दार्थ–हे न्नव्यजीवो ! बोध पामो. शा माटे बोध पामतो नथी ? मृत्यु पाम्या पछी परन्नवमां बोधि उर्ल्लन्न बे. गयेलां रात्रो दिवस पाछा आवतां नथी. तेमज जीवित पण फरी मलवुं सुलन्न नथी ॥ ३३ ॥

महरा वुढा अ पासह, गप्नछावि चयंति माणवा ॥
सेणे जह वट्टयं हरे, एवं आउखयंमि तुट्टइ ॥ ३४ ॥

शब्दार्थ–बालक, वृद्ध अने गर्ज्जमां रहेला माणसो मृत्यु पामे बे, तेने तुं जो. वली जेम सिंचाणो तेतरने मारेबे तेम आयुष्यनो क्षय थये जीवित तुटी जाय बे. ॥ ३४ ॥

(आर्यावृत्तम्.)

निहुआणजणं मंतं, दढूण नयंति जे न अप्पाणं ॥
विरमंति न पावाउ, धिधि धिठत्तणं ताणं ॥ ३५ ॥

शब्दार्थ–जे पुरुषो मृत्यु पामता एवा त्रण भुवनना माण सोने जोता छता पोताना आत्माने धर्मने विषे स्थापन करता नथी अने पापथी निवर्त्तता नथी, तेउनां धिठ्ठपणाने धिक्कार छे ! धिक्कार छे ! ! ॥ ७५ ॥

मा मा जंपह बहुअं, जे बद्धा चिक्कणेहिं कम्मेहिं ॥
सव्वेसि तेसि जायइ, हियोवएसो महादोसो॥ ७६ ॥

शब्दार्थ–(अयोग्य शिष्योने उपदेश करता गुरुने जोइ योग्य शिष्य गुरुने कहे छे के,) "हे गुरो! जे पुरुषो पोतानां चि कणां कर्मथी बंधायला छे, तेमने बहु उपदेश न करो, कारणके ते अयोग्य शिष्योने हितोपदेश महा दोषवालो थाय छे. ॥७६॥

कुणसि ममत्तं धणसयण विहवपमुहेसु अणंतदुक्खेसु॥
सिढिलेसि आयरं पुण, अणंतसुक्खंमि मुक्खंमि ॥७७॥

शब्दार्थ–हे आत्मन ! तुं अनंत दुःखनां कारण एवा धन स्वजन अने लक्ष्मी विगेरेमां ममता करे छे अने वली अनंत सु खवाला मोक्षने विषे आदरने शिथिल करे छे. ॥ ७७ ॥

संसारो दुहहेऊ, दुक्खफलो दुस्सहदुक्खरूवो अ ॥
न चयंति तंपि जीवा, अइबद्धा नेहनिअलेहिं ॥७८॥

शब्दार्थ–हे जीव ! आ संसार दुःखनुं कारण, दुःख छे फ ल जेनुं एवो अने दुःसह दुःखरूपज छे. स्नेहरूप बेडीथी बंधायला जीवो ते संसारने पण त्यजी देता नथी. ॥ ७८ ॥

नियकम्मपवणचलिओ, जीवो संसारकाणणे घोरे ॥
का का विडंबणाओ, न पावए दुसहदुक्खाओ ॥ ७९ ॥

शब्दार्थ–आ घोर संसाररूप अरण्यमां पोतानां कर्मरूप पवनथी चंचल एवो जीव ! जेनाथी दुःसह दुःख उत्पन्न थाय छे

एवी कइ कइ वध बंधनादि विटंबना नथी पाम्यो ? अर्थात स र्वे पाम्यो छे. ॥ ७९ ॥

सिसिरंमि सीअलानिल-लहरिसहस्सेहिं भिन्नघणदेहो
तिरिअत्तणंमिऽरन्ने, अणंतसो निहणमणुपत्तो ॥ ८० ॥

शब्दार्थ—हे जीव! तुं तिर्यंच भवमां अरण्यने विषे शिया लामां शितल पवननी हजारो लहेरोथी भेदायला दृढ देहवाळो थइने अनंतीवार मृत्यु पाम्यो छे. ॥८०॥

गिम्हायवसंतत्तो, रन्ने छुहिओ पिवासिओ बहुसो ॥
संपत्तो तिरिअभवे, मरणदुहं बहु विसूरंतो ॥८१॥

शब्दार्थ—हे जीव! तुं तिर्यंच भवमां अरण्यने विषे उनाळा ना तापथी तप्त थयो छतो बहुवार भूख्यो तथा तरश्यो थइने बहु खेद पामतो मृत्यु पाम्यो छे. ॥८१॥

वासासुऽरन्नमझे, गिरिनिझरणोदगेहिं वझंतो ॥
सीआनिलडज्झविओ, मओसि तिरिअत्तणे बहुसो ८२

शब्दार्थ—हे जीव! तुं तिर्यंच भवमां चोमासाने विषे वनमां पर्वतोनां झरणानां पाणीथी खेंचाइने शितल पवनथी दग्ध थयो छतो बहुवार मृत्यु पाम्यो छे. ॥८२॥

एवं तिरिअभवेसु, कीसंतो दुक्खसयसहस्सेहिं ॥
वसिओ अणंतखुत्तो, जीवो भीसणभवारन्ने ॥८३॥

शब्दार्थ—ए प्रमाणे तिर्यंच भवमां सेंकडो दुःखोथी क्लेश पामतो जीव भयंकर संसाररूप अरण्यमां अनंतीवार वश्योछे.

दुट्ठंकम्मपलया-निलपेरिओ भीसणंमि भवरन्ने ॥
हिंडंतो नरएसुवि, अणंतसो जीव पत्तोसि ॥ ८४ ॥

शब्दार्थ—हे जीव! दुष्ट एवां आठ कर्मरूप प्रलयकाळना प

नथी प्रेरायेलो तुं भयंकर संसाररूप अरण्यमां वाखतो हतो न
कने विषे पण अनंतीवार दुःख पाम्यो छे. ॥८४॥

सत्तसु नरयमहीसु, वज्जानलदाहसीअविज्ञणासु ॥
भसिऊ अणंतखुत्तो, विलवंतो करुणसद्देहिं ॥ ८५ ॥

शब्दार्थ–हे जीव! वज्राग्निनो दाह छे जेमां तथा अत्यंत
शीत वेदना छे जेमां एवी सात नरक पृथ्वीओमां तुं करुण शब्दथी
विलाप करतो छतो अनंतीवार वस्यो छे. ॥८५॥

पियमायसयणरहिओ, दुरंतवाहिहिं पीडिओ बहुसो ॥
माणुअभवे निस्सारे. विलाविओ किं न तं सरसि ८६

शब्दार्थ–अरे जीव! आ सार रहित मनुष्यभवमां पिता
मातादि स्वजनथी रहित अने महा व्याधिथी बहुवार पीडा पा
मतो तथा विलाप करतो तुं ते मनुष्य भवने शुं नथी संभारतो?

पवणुव्व गयणमग्गे, अलक्खिओ भमइ भववणे जीवो ॥
ठाणठाणंमि समु-ज्झिऊण, धणसयणसंघाए ॥ ८७ ॥

शब्दार्थ–जीव आ संसाररूप वनमां ठेकाणे ठेकाणे धन
स्वजनना समूहने त्यजी दइ आकाशमां पवननी पेठे अदृश्य
थयो छतो भमे छे. ॥८७॥

विज्झिज्जंता असयं, जम्मजरामरणतिक्खकुंतेहिं ॥
दुहमणुहवंति घोरं, संसारे संसरंत जीआ ॥८८॥

तहवि खणंपि कयावि हु, अन्नाणभुयंगडंकिआ जीवा
संसारचारगाओ, नयउ विज्जंति मूढमणा ॥ ८९ ॥

शब्दार्थ–संसारमां भमता एवा जीवो जन्म, जरा अने म
रणरूप तीक्ष्ण भालाथी निरंतर विंधाया छता घोर दुःखने अ
नुभवे छे तो पण मूढ मनवाळा अने अज्ञानरूप भुजंगथी डसा
यला जीवो क्यारे पण निश्चे संसाररूप केदखानामांथी क्षणमात्र

उद्वेग पामता नथी. ॥ ८८–८९ ॥

कीलसि किअंतवेलं, सरीरवावीइ जत्थ पइसमयं ॥
कालरहट्टघमीहिं, सोसिज्जइ जीविअंभोहं ॥ ९० ॥

शब्दार्थ–हे जीव! तुं शरीररूपी वाव्यने विषे केटली वखत सुधी क्रीडा करीश? के, जे वाव्यमां समये समये कालरूप रेंटनी घमीयोथी जीवितरूप पाणीनो प्रवाह सूकाइ जायछे.

रे जीव बुज्झ मा मुज्झ, मा पमायं करेसि रे पाव ॥
किं परलोए गुरुदुक्ख-भायणं होहिसि अयाण ॥९१॥

शब्दार्थ–अरे जीव! तुं बोध पाम. मोह न पाम. अरे पाप! तुं धर्ममां प्रमाद न कर अरे अज्ञान! तुं परलोकमां महा दुःखनो पात्र केम थाय छे? ॥९१॥

बुज्झसु रे जीव तुमं, मा मुज्झसु जिणमयंमि नाऊणं ॥
जह्मा पुणरवि एसा, सामग्गी दुल्लहा जीव ॥ ९२ ॥

शब्दार्थ–अरे जीव! तुं बोध पाम अने धर्मस्वरूप जाणीने जिनमतमां मोह न पाम. अरे जीव! कारण के, फरीथी आ सामग्री मलवी दुर्लभ छे. ॥९२॥

दुलहो पुण जिणधम्मो, तुमं पमायायरो सुहेसी य ॥
दुसहं च नरयदुक्खं, कह होहिसि तं न याणामो ॥९३॥

शब्दार्थ–जिनधर्म फरीथी मलवो दुर्लभ छे. तेम तुं प्रमादनी खाण अने सुखनी इच्छा करनारो छे. वली नरक दुःख दुःसह छे, माटे हुं नथी जाणतो के, परलोकमां तुं केम थइश, अर्थात् त्हारी शी गति थशे? ॥९३॥

अथिरेण थिरो समले-ण, निम्मलो परवसेण साहीणो॥
देहेण जइ विढप्पइ, धम्मो ता किं न पज्जत्तं ॥ ९४ ॥

शब्दार्थ–जो अस्थिर, मलिन अने परस्वाधिन एवा देहथी

स्थिर, निर्मल अने स्वाधिन एवो धर्म मेलवी शकाय तो पछी शुं प्राप्त करवुं न कहेवाय? ॥९४॥

जह चिंतामणिरयणं, सुलहं न हु होइ तुच्छविहवाणं ॥
गुणविहववज्जिआणं, जिआण तह धम्मरयणंपि ९५

शब्दार्थ–अल्प पुण्यवालाने जेम चिंतामणि रत्न सुलभ नज होय तेम गुणविभव रहित जीवोने धर्मरत्न पण सुलभ न होय.

जह दिठ्ठीसंजोगो, न होइ जच्चंधयाण जीवाणं ॥
तह जिणमयसंजोगो, न होइ मिच्छंधजीवाणं ॥ ९६ ॥

शब्दार्थ–जेम जन्मांध जीवोने आंखोथी देखवुं थतुं नथी तेम मिथ्यात्वथी आंधला जीवोने जिनमतनो संयोग थतो नथी.

पच्चक्खमणंतगुणे, जिणंदधम्मे न दोसलेसोवि ॥
तहवि हु अन्नाणंधा, न रमंति कयावि तंमि जिआ ९७

शब्दार्थ–प्रत्यक्ष एवा अनंतगुणवाला जिनराजना धर्मने विषे दोषनो लेश मात्र नथी. तोपण अज्ञानथी आंधला जीवो निश्चे ते धर्मने विषे क्यारे पण रमता नथी. ॥९७॥

मिच्छे अणंतदोसा, पयडा दीसंति नवि य गुणलेसो ॥
तहवि य तं चेव जिया, हा मोहंधा निसेवंति ॥ ९८ ॥

शब्दार्थ–मिथ्यात्वथी प्रगट अनंत दोषो देखाय छे अने गुणलेश देखातो नथी. तोपण मोहथी आंधला जीवो ते मिथ्यात्वनेज सेवे छे. ए घणुं आश्चर्य छे. ॥९८॥

धि धी ताण नराणं, विन्नाणे तह गुणेसु कुसलत्तं ॥
सुहसच्चधम्मरयणे, सुपरिक्खं जे न जाणंति ॥९९॥

शब्दार्थ–सुखरूप अने सत्यरूप धर्मरत्नने विषे जे पुरुषो उत्तम परीक्षा नथी जाणता, ते पुरुषोना विज्ञानने विषे अने गुणने विषे कुशलपणाने धिक्कार थाओ! धिक्कार थाओ!! ९९

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

जिणधम्मोऽयं जीवाणं, अप्पुवो कप्पपायवो ॥
सग्गापवग्गसुक्खाणं, फलाणं दायगो इमो ॥ १०० ॥

शब्दार्थ–आ जिनधर्म जीवोने अपूर्व कल्पवृक्ष छे, तेथी ए कल्पवृक्ष स्वर्ग अने मोक्षनां सुखरूप फलोनो आपनार छे. १००

धम्मो बंधु सुमित्तो अ, धम्मो अ परमो गुरु ॥
मुक्खमग्ग पयट्टाणं, धम्मो परमसंदणो ॥ १०१ ॥

शब्दार्थ–धर्म एज बंधु अने उत्तम मित्र छे. वली धर्म उत्तम गुरु छे. तेमज धर्म मोक्ष मार्गमां प्रवृत्तेलाने उत्कृष्ट रथ समान छे. ॥१०१॥ (आर्यावृत्तम्)

चउगइणंतदुहानल- पलित्तभवकाणणे महाभीमे॥
सेविसु रे जीव तुमं, जिणवयणं अमियकुंडसमं १०२

शब्दार्थ–अरे जीव! महा भयंकर अने चार गतिना अनंत दुःखरूप अग्निथी सलगता संसाररूप वनमां अमृतनां कुंड समान जिनराजनां वचनने सेवन करच. ॥१०२॥

विसमे भयमरुदेसे, अणंत दुह गिम्हतावसंतत्ते ॥
जिणधम्मकप्परुक्खं, सरसु तुमं जीव सिवसुहदं १०३

शब्दार्थ–हे जीव! तुं विषम अने अनंतां दुःखरूप उनाला ना तापथी तप्त एवा मरुदेशमां मोक्षसुख आपनारा जिनधर्म रूप कल्पवृक्षनुं सेवन कर. ॥१०३॥

किं बहुणा जिण धम्मे, जइअव्वं जह भवोदहिं घोरं ॥
लहुतरिअमणंतसुहं, लहइ जिअ सासयं ठाणं १०४

शब्दार्थ–हे आत्मन! बहु कहेवाथी शुं? परंतु तारे जिन धर्मने विषे ते प्रकारे यत्न करवो के, जेथी जीव भयानक एवा संसार समुद्रने झट तरीने अनंत सुखवाला मोक्षस्थानने पामे.

॥ इति वैराग्यशतक समाप्तम् ॥

॥ अथ अभव्य कुलकम् ॥

जह अभविय जीवेहिं, न फासिया एवमाइआ भावा ॥
इंदत्तमणुत्तरसुर, सिलायनर नारयत्तं च ॥ १ ॥

शब्दार्थ–अभव्य जीवोए आ हवे पछी कहेवामां आवशे ते भावो स्पर्शा नथी. ते इंद्रपणुं, अनुत्तरवासी देवपणुं, त्रेसठ शलाका पुरुषपणुं अने नव नारदपणुं. ॥ १ ॥

केवलिगणहरहत्थे, पवज्जा तित्थवच्छरं दाणं ॥
पवयणसुरी सुरत्तं, लोगंतिय देवसामित्तं ॥ २ ॥

शब्दार्थ–वली केवली तथा गणधरना हाथे दीक्षा, तीर्थंकरनुं वार्षिक दान, प्रवचननो अधिष्टायक देवी तथा देवपणुं, लोकांतिक देवपणुं अने देवपतिपणुं न पामे ॥ २ ॥

तायत्तीससुरत्तं, परमाहम्मिय जुयलमणुअत्तं ॥
संभिन्नसोयं तह, पुव्वधराहारयपुलायत्तं ॥ ३ ॥

शब्दार्थ–त्रायत्रिंशकदेवपणुं, पंदर जातिना परमाधामीपणुं, युगलिया मनुष्यपणुं, वली संभिन्न श्रोत लब्धि, पूर्वधरलब्धि, आहारकलब्धि अने पुलाकलब्धिपणुं पण न पामे ॥३॥

मणनाणाई सुलद्धी, सुपत्तदाणं समाहिमरणत्तं ॥
चारणदुगमहुसिप्पय, खीरासव खीरठाणत्तं ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञाननी लब्धि, सुपात्रदान, समाधि मरण, विद्याचारण अने जंघाचारणनी लब्धि. मधुसर्पि लब्धि क्षिराश्रव लब्धि, क्षिर स्थानकी लब्धि पण न पामे॥४॥

तित्थयर तित्थपडिमा, तणुपरिभोगाइ कारणेवि पुणो
पुढवाइय भावंमि वि, अभवजीवेहिं नो पत्तं ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–तीर्थंकर तथा तीर्थंकरनी प्रतिमा, वली शरीरना

अविआरं तारुन्नं, जिणाणं राउ परोवियारत्तं ॥
निक्कंपयाय प्राणे, लप्नंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–घणां पुण्यना उदयथी अविकारी युवावस्था जिन आज्ञामां राग, परोपकारपणुं, धर्मध्यानमां निश्चलपणुं प्राप्त थाय छे.

परनिंदापरिहारो, अप्पसंसा अत्तणो गुणाणं च ॥
संवेगो निवेगो, लप्नंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–घणां पुण्यना उदयथी परनिंदानो त्याग, पोतानी प्रशंसा अने पोताना गुणना अवखाण, संसारथी वैराग्य अने संसारथी निकलवानी इच्छा प्राप्त थाय छे. ॥ ७ ॥

निम्मलसीलाप्नासो, दाणुल्हासो विवेग संवासो ॥
चउगइडुहसंत्तासो, लप्नंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ८ ॥

शब्दार्थ–घणां पुण्यना उदयथी निर्मल शीलनुं पालवुं, दान आपवामां उल्लास, हिताहितना विवेकनुं समीपपणुं अने चार गतिनां दुःखना त्रासनुं जाणपणुं होय छे. ॥ ८ ॥

डुक्कमगरिहा सुकमा–णुमोयणं पायछित तवचरणं ॥
सुहझाण नमुकारो, लप्नंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ९ ॥

शब्दार्थ–घणां पुण्यना उदयथी मागं कृत्यनी निंदा, सारां कृत्यनी अनुमोदना, खोटा कृत्यनुं प्रायश्चित्त लेवुं, तप करवुं, शुभ ध्यान करवुं अने नमस्कार करवो. ए सर्व प्राप्त थाय छे.

इयगुणमणिन्नंमारो, सामग्गी पावीउण जेण कउ ॥
विन्नप्नमोहपासा, लहंति ते सासयसुखं ॥ १० ॥

शब्दार्थ–आ उपर रहेला गुणरूप मणिना भंडाररूप सामग्री पामीने जेणे ते प्रमाणे आचरण कर्युं छे ते, मोहना पासने तोडी नाखी शाश्वतां सुखने पामे छे.॥१०॥इति पुण्यकुलकम् ॥

॥ अथ पुण्यपाप कुलकम् ॥

छत्तीसदिनसहस्सा. वाससये होइ आउपरिमाणं ॥
झिझंतं पईसमयं. पिछउ धम्मंमि जइअवं ॥ १ ॥

शब्दार्थ–सो वर्षना छत्रीस हजार दिवस, आयुष्यनुं एटलुं परिमाण होय छे. ते समये समये ओछुं थतुं जाय छे, एम जाणीने धर्ममां यत्न करवो. ॥ १ ॥

जइ पोसहसहीउ, तवनियमगुणेहिं गमइ एकदिणं ॥
ता बंधइ देवाउ. इत्तियमित्ताइं पलियाइं ॥ २ ॥

शब्दार्थ–जो कोइ जीव पोषह सहित तप नियमना गुणो थी एक दिवस गमावे तो ते आगल कहेशे तेटला पल्योपमनुं देवतानुं आयुष्य बांधे छे. ॥ २ ॥

सगवीसं कोमीसया, सतहत्तरी कोमिलस्क सहस्सा य॥
सत्तसया सतहुतरि, नवभागा सतपलियस्स ॥ ३ ॥

शब्दार्थ–सत्तावीस सो क्रोम, सीत्योतेर क्रोम, सीत्योतेर लाख सीत्योतेर हजार, सातसोने सीत्योतेर एटला पल्योपम अने वली एक पल्योपमनो सातमो भाग ॥ ३ ॥

अघासीई सहस्सा, वाससये दुन्नि लस्क पहराणं ॥
एगोवि अ जइ पहरो. धम्मजुत्त ता इमो लाहो ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–एक सो वर्षना बे लाख अने अघासी हजार पहोर छे. तेमांथी जो कोइ जीव एक पण पहोर धर्म युक्त (पोसह वृत युक्त) थाय तो तेने आगल कहेशे एटलो लाभ थाय छे.॥४॥

तिसयसगं चत्तकोमि, लस्का बावीस सहस बावीसा ॥
दुसय दुवीस दुभागा, सुराउबंधो य इगपहरे ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–त्रणसो सुमताली क्रोम, बावीस लाख, बावीस

हजार, नसो अने बावीस, वली उपर वे जाग. वर्षमां एक पहोर पोषह करनारने देवतानां आयुष्यनो एटलो वंध थाय छे. ॥ ५ ॥

दस लस्क असीय सहसा, महुत्त संखाय होइ वाससए ॥
जइ सामाइअसहिअ, एगोविअत्ता इमो लाहो ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–सो वर्षनां मुहूर्त (बे घमीयो) दस लाख अने एंसी हजार थाय छे. जे जीव ए एक मुहूर्त सामायिक लहे तो तेने आगली गाथामां कहेशे तेटलो लाज थाय छे. ॥ ६ ॥

बाणवयकोमीउ, लस्का गुणसट्ठि सहस्स पणवीसं ॥
नवसयपणवीस जूआ, सतिहा अरुजाग पलियस्स ७

शब्दार्थ–बाणुं क्रोड, उगणसाठ लाख, पचीस हजार नवसो पचीस अने उपर एक पल्योपमना आगीया सात जाग; एटलुं देवगतिनुं आयुष्य वेघमी सामायक करनार जीव बांधे छे.

वाससये घमिआणं, लस्किगवीसं सहस्स तह सघी ॥
एगायि अ धम्मजूआ, जइ ता लाहो इमो होइ ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–एक वर्षनी घमीयो एकवीश लाख अने साठ हजार थाय, तेमांथी एक घमी पण जो जीव धर्म युक्त होय तो तेने आगली गाथामां कहेशे तेटलो लाज थाय छे. ॥ ७ ॥

बायालकोमी गुणती-म लस्क बासठी सहस्स सयनवगं
ते मती किंचूणा, सुराउ बंधोइ इगघमिए ॥ ए ॥

शब्दार्थ–एक घमी धर्म करनार जीव बेतालीश क्रोम, ओगणत्रीस लाख, बासठ हजार, नवसें अने कांइक ओछा एवा पँसठ एटला पल्योपमनुं आयुष्य बांधे. ॥ ए ॥

मती अहोरत्तेणं, घमीआउ जस्स जंति पुरिसस्स ॥
नियमेणवि घमीआउ, सो दिअहउ निष्फलो तस्स १०

शब्दार्थ–एकसठ लाख, पांत्रीस हजार, बसो ने दश
क्षयोपमनुं देवतानुं आयुष्य पच्चीस श्वासोश्वास अथवा एक
गसनो काउस्सग्ग करनार जीव बांधे. ॥ १५ ॥

पावइ पारायाणं, हवेइ निरयाउ अस्स बंधोवि ॥
इअ नाउ सिरि जिणकित्ति-अंमि धम्मंमि उज्जमं कुण

शब्दार्थ–हे भव्य जीवो ! पाप करनाराने ए प्रमाणे
कनो बंध पण होय छे. एम जाणीने श्री जिनेश्वरे कहेला
ने विषे उद्यम करो. ॥ १६ ॥

॥ इति पुण्य पाप कुलकम् ॥

॥ अथ गौतमकुलकम् ॥

लुद्धा नरा अत्थपरा हवंति, मूढा नरा कामपरा हवंति
बुद्धानरा खंतिपरा हवंति, मिस्सा नरा तिन्निविआयरं

शब्दार्थ–लोभीया पुरुषो धन मेलववाने तत्पर होय
मूर्ख पुरुषो कामने विषे तत्पर होय छे, पंडित पुरुषो क्षमामां
त्पर होय छे अने मिश्र पुरुषो पूर्वे कहेला त्रणने पण आचरे

ते पंडिया जे विरया विरोहे, ते साहुणो जे समयं चरंति
ते सत्तिणो जे न चयंति धम्मं, ते बंधवा जे वसणे हवंति

शब्दार्थ–जे विरोधथी निवर्त्या ते पंडित, जे आगम प्र
णे चाले ते साधु, जे धर्मने न त्यजे ते शक्तिवंत अने जे दु
मां सहाय करे ते बांधवो जाणवा. ॥ २ ॥

कोहाभिभूया न सुहं लहंति, माणंसीणो सोयपरा हवं
मायाविणो हुंति परस्स पेसा, लुद्धा महिच्छा नरयं उवि

शब्दार्थ–क्रोधथी पराजव पामेला माणसो सुख न पामे. अनिमानी माणसो शोकवंत थाय, मायावो माणसो बीजाना चाकर थाय अने लोजो तथा म्होटी इच्छा करनारा नरक पामे॥३॥

कोहो विसं किं अमयं अहिंसा, माणो अरी किं हियमप्पमात्र
माया जयं किं सरणं तु सच्चं, लोहो डुहो किं सुहमाह तुठी

शब्दार्थ–प्र० विष शुं ? उ० क्रोध; प्र० अमृत शुं ? उ० अहिंसा; प्र० शत्रु कोण ? उ० मान; प्र० हित शुं ? उ० अप्रमाद; प्र० जय शुं ? उ० माया; प्र० शरण करवा योग्य शुं ? उ० सत्य; प्र० डुख शुं ? उ० लोज; प्र० सुख शुं ? उ० संतोष.

बुद्धि अचंमं जयए विणीयं, कुद्धं कुशीलं जयए अकित्ति॥
संजिन्नचित्तं जयए अलच्छी, सच्चेठियं संजयए सिरियछ

शब्दार्थ–बुद्धि विनयवंतने सेवे छे, क्रोधी तथा कुशीलने अकीर्ति सेवे छे, जग्न चित्तवालाने अलक्ष्मी (निर्धनपणुं) सेवे छे अने सत्यमां रहेलाने सर्व प्रकारे लक्ष्मी सेवे छे. ॥५॥

चयंति मित्ताणि नरं कयग्घं, चयंति पावाइ मुणिं जयंतं॥
चयंति सुक्काणि सराणि हंसा, चएइ बुद्धी कुवियं मणुस्सं

शब्दार्थ–कृतघ्न माणसने मित्रो त्यजी दे छे, जितेंद्रिय मुनिने पापो त्यजी दे छे, सुकाइ गयेला तलावने हंसो त्यजी दे छे अने क्रोधवाला माणसने बुद्धि त्यजी दे छे. ॥ ६ ॥

असंपहारे कहिए विलावो, अईयअत्ते कहिए विलावो
विक्खित्तचित्ते कहिए विलावो, बहुकुसीसे कहिए विलावो

शब्दार्थ–असावधानने धर्मादि कहेवुं ते विलाप छे, गइ वातनुं कहेवुं ते विलाप छे, खेदचित्तवालाने हित वचन कहेवुं ते विलाप छे अने कुशिष्यने बहु कहेवुं ए पण विलाप छे. ॥७॥

दुट्ठा हवंति दंडपरा हवंति, विज्जाहरा मंतपरा हवंति ॥
मुक्खा नरा कोवपरा हवंति, सुसाहुणो तत्तपरा हवंति

भावार्थ—दुष्ट राजाओ दंड करवामां तत्पर होय छे, वि[illegible] पुरुषो मंत्र साधनमां तत्पर होय छे, मूर्ख पुरुषो क्रोध [illegible] तत्पर होय छे अने उत्तम साधुओ तत्त्व ग्रहण करव[illegible] तत्पर होय छे. ॥ ८ ॥

सोहा भवे उग्गतवस्स खंती, समाहिजोगो पसमस्स सो[illegible]
नाणं सुझाणं चरणस्स सोहा, सिसस्स सोहा विणए प[illegible]

भावार्थ—उग्र तपस्यानी शोभा क्षमा छे, उपशमन[illegible] समाधि योग शोभा छे, चारित्रनी ज्ञान अने उत्तम ध्या[illegible] शोभा छे अने शिष्यनी विनयमां प्रवृत्ति ए शोभा छे. ॥९॥

अभूसणो सोहइ बंभयारी, अकिंचणो सोहइ दिक्ख[illegible]
बुद्धिजुओ सोहइ रायमंती, लज्जाजुओ सोहइ एगपत्ति

भावार्थ—आभूषण विना ब्रह्मचारी शोभे छे, परिग्र[illegible] [illegible] शोभे छे, बुद्धिवंत राजमंत्री शोभे छे अने [illegible] [illegible] स्त्री शोभे छे. ॥ १० ॥

अप्पा अरी होइ अणवट्ठियस्स, अप्पा जसो सीलमओ न[illegible]
अप्पा दुरप्पा अणवट्ठियस्स, अप्पा य अप्पा सरणं ग[illegible]

[illegible] अस्थिर मनवाळाने पोतानो आत्मा वैरी छे. [illegible]
[illegible] आत्मा [illegible] छे, अस्थिर मनवाळानो आत्मा [illegible]
[illegible] अने आत्मा ज आत्माने शरण करवा योग्य अने गति [illegible]

न [illegible], [illegible] [illegible]
न [illegible] [illegible]

[illegible]

विना बीजुं अकार्य नथी, प्रेमराग विना बीजो बंध नथी अने बोधिलाज्न विना बीजो लाज्न नथी. ॥ १२ ॥

न सेवियव्वा पमया परक्का, न सेवियव्वा पुरिसा अविद्या ॥
नसेवियव्वाअहिमानिहिणा, नसेवियव्वापिसुणामणुस्सा॥

शब्दार्थ–पारकी स्त्री सेववी नहि, मूर्ख पुरुषोने सेववा नहि, अज्निमानी हिन माणसोने सेववा नहि अने चाडिया माणसोने पण सेववा नहि. ॥ १३ ॥

जे धम्मिया ते खलु सेवियव्वा, जे पंडिया ते खलु पुच्छियव्वा
जे साहुणो ते अज्निवंदियव्वा,जे निम्ममा ते पम्लािज्नियव्वा

शब्दार्थ–जे धर्मी माणसो छे ते सेववा योग्य छे, जे पंमित पुरुषो छे ते पूछवा योग्य छे, जे साधुओ छे ते वांदवा योग्य छे अने जे ममतारहित छे ते पम्लिाजवा योग्य छे. ॥ १४ ॥

पुत्ताय सीसाय समं विज्ञत्ता, रिसी य देवा य समं विज्ञत्ता॥
मुक्ख तिरिक्खा यसमं विज्ञत्ता,मुख्रा दरिद्दाय समं विज्ञत्ता

शब्दार्थ–पुत्र अने शिष्यो सरखा जाणवा, मुनि अने देवता सरखा जाणवा, मूर्ख अने तिर्यंच सरखा जाणवा अने मूवेला तथा दरिद्री सरखा जाणवा. ॥ १५ ॥

सव्वा कला धम्मकला जिणाइ,सव्वाकहाधम्मकहाजिणाइ
सव्वं वलं धम्मवलं जिणाइ, सव्वं सुहं धम्मसुहं जिणाइ१६

शब्दार्थ–सर्वकलाने धर्मकला जीते, सर्व कथाने धर्मकथा जीते, सर्व वलने धर्मवल जीते अने सर्व सुखने धर्म सुख जीते॥

जूए पसत्तस्य धणस्स नासो, मंसं पसत्तस्य दयाइनासो॥
मज्जं पसत्तस्य जसस्सनासो, वेसापसत्तस्य कुलस्स नासे

शब्दार्थ–जुवटामां आसक्त थयेलाना धननो नाश थाय छे

मांसमां आसक्त थयेला दयादिनो नाश थाय छे, मद्यमां आसक्त थयेलाना जसनो नाश थाय छे अने वेश्यामां आसक्त थयेलाना कुलनो नाश थाय छे. ॥१७॥

हिंसापसत्तस्य सुधम्मनासो, चोरीपसत्तस्य सरीरनासो ॥
तहापरत्थिसुपसत्तयस्स, सव्वस्सनासोअहमा गई य॥१८॥

शब्दार्थ–हिंसामां आसक्त थयेलाना सारा धर्मनो नाश थाय छे, चोरीमां आसक्त थयेलाना शरीरनो नाश थाय छे. तेमज परस्त्रीमां आसक्त थयेला धन शरीरादि सर्वनो नाश अने अधम गति थाय छे. ॥ १८ ॥

दाणं दरिद्दस्सपहुस्स खंती, इच्छानिरोहोइ सुहोइ यस्स॥
तारुण्णए इंदियनिग्गहो य, चत्तारि एयाणि सुदुक्कराणि१९

शब्दार्थ–दरिद्रीने दान आपवुं, श्रीमंतने क्षमा राखवी, इच्छाने रोकवी अने युवास्थामां इंद्रियोने वश्य राखवी. ए चार बहु दुष्कर छे. ॥ १९ ॥

असासयं जीवियमाहु लोए, धम्मं चरे साहु जिणोवइट्ठं
धम्मो यताणं सरणं गई य, धम्मं निसेवित्तु सुहं लहंति ॥

शब्दार्थ–लोकमां जीवीत अशाश्वतुं कह्युं छे, माटे जिनेश्वरे कहेला उत्तम धर्मनुं आचरण करो. धर्म रक्षण कर्ता, शरण करवा योग्य अने सारी गति आपनारो छे. ए धर्मने सेवीने शाश्वतुं सुख पमाय छे. ॥ २० ॥

॥ इति श्री गौतम कुलक ॥

॥ अथ दान कुलकम् ॥

परिहरिय रज्जसारो, उप्पाडियसंजमिक्कगुरुजारो ॥
खंधाउ देवदूसं, वियरंतो जयउ वीरजिणो ॥ १ ॥

शब्दार्थ–राज्यना सारने त्यजी देनारा, चारित्ररूप एक
वहु भारने उपाडनारा अने खभा उपरथी देवदूष्य वस्त्र विप्रने
आपी देनारा श्री महावीर प्रभु जयवंता वर्त्तो. ॥ १ ॥

धम्मत्थकामभेया, तिविहं दाणं जयंमि विक्खायं ॥
तहवि य जिणिंदमुणिणो, धम्मियदाणं पसंसंति ॥२॥

शब्दार्थ–धर्मदान, अर्थदान अने कामदान एवा भेदथी
त्रण प्रकारनुं दान जगतमां विख्यात छे. तो पण जिनेश्वरना
मुनियो आहारादिक धार्मिक दानने वखाणे छे. ॥ २ ॥

दाणं सोहग्गकरं, दाणं आरुग्गकारणं परमं ॥
दाणं भोगनिहाणं, दाणं ठाणं गुणगणाणं ॥ ३ ॥

शब्दार्थ–दान सौभाग्य करनार छे, दान श्रेष्ठ आरोग्यनुं कारण छे, दान भोगनुं निधान छे अने दान गुणसमूहनुं स्थानक छे.

दाणेण फुरइ कीत्ति, दाणेण य होइ निम्मला कंती ॥
दाणावज्जिय हियउ, वयरीवि हु पाणियं वहइ ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–दानथी कीर्ति विस्तार पामे छे, दानथी निर्मळ कांति थाय छे, दानथी वश हृदयवाळा थयेला शत्रु पण तेने घेर पाणी भरे छे.

धणसत्थवाहजम्मे, जं घयदाणं कयं सुसाहूणं ॥
तक्कारणमुसभजिणो, तेलुक्कपियामहो जाउ ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–धन सार्थवाहना भवमां उत्तम साधुओने जे घीनुं
दान कर्युं हतुं ते पुण्यना कारणथी ऋषभदेव प्रभु त्रण लोकना
पितामह (दादा) थया. ॥ ५ ॥

करुणाइ दिन्नदाणं, जम्मंतरं गहियपुन्नकिरियाणं ॥
तित्थयरचक्करिद्धिं, संपत्तो संतिनाहोवि ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–कृपाथी पारेवाने अन्नयदान आपी पाछला नव माटे पुण्यरूप करीयाणांने खरीद करनारा शोलमा श्री शांति नाथ तीर्थंकर पण तीर्थंकर अने चक्रवर्त्तीनी समृद्धिने पाम्या॥६॥

पंचसयसाहुन्नोयण–दाणावज्जियसुपुन्नपब्नारो ॥
अच्चरियचरियन्नरिउ, न्नरहो न्नरहाहिवो जाउ ॥७॥

शब्दार्थ–पांचसो साधुने न्नोजननां दानथी पुण्यनो स मूह मेलवनार अने आश्चर्यकारी चरित्रथी न्नरपूर एवो न्नरत चक्रवर्त्ती न्नरतक्षेत्रनो स्वामी थयो. ॥ ७ ॥

मुल्लं विणावि दाउं, गिलाण पमिअरणजोगवत्थूणि ॥
सिद्धो अ रयणकंवल–चंदण विणिउवि तंमिन्नवे॥८॥

शब्दार्थ-ग्लान मुनिने वापरवा योग्य वस्तु रत्न कंबल अने बावनुं चंदन विना मूल्ये आपीने श्रावक पण तेजन्नवमां सिद्धिपद पाम्यो.

दाकण खीरदाणं, तवेण सुसिअंगसाहुणो धणिअं ॥
जणजणियचमक्कारो, संजाउ सालिन्नद्दोवि ॥ ९ ॥

शब्दार्थ–तपथी सूकवी नाख्युं छे शरीर जेमणे एवा सा धुने धन्यकारी खीरनुं दान आपी शालिन्नद्र शेठ पण माणसोने आश्चर्य उत्पन्न करनारो थयो. ॥ ९ ॥

जम्मंतरदाणाउ, उल्लसिया पुव्वकुसलझाणाउ ॥
कयवन्नो कयपुन्नो, न्नोगाणं न्नायणं जाउ ॥१०॥

शब्दार्थ–पूर्व जन्मने विषे करेला सुपात्रदानना प्रन्नावने लीधे उल्लास पामेला अपूर्व शुन्न ध्यानथी कृतपुण्य एवो कयव न्नो शेठ न्नोगोनुं पात्र थयो. ॥ १० ॥

घयपूसवत्थपूसा, महरिसिणो दोसलेसपरिहीणा ॥
लध्धीइ सपलगच्छो—वग्गहगा सुग्गइं पत्ता ॥ ११ ॥

शब्दार्थ-घृतपुष्प तथा वस्त्रपुष्प ए बे साधु दोषना लेश रहित छता पोताना लपनी लब्धिथी सर्व गछनी घृत तथा वस्त्रथी भक्ति करी उत्तम गति पाम्या. ॥ ११ ॥

जीवंतसामिपडिमा—इ सासणं वियरिऊण भत्तीए ॥
पव्वईऊण सिध्धो, उदाइणो चरमरायरिसी ॥ १२ ॥

शब्दार्थ-श्री जीवंतस्वामीनी प्रतिमाने श्री वीरप्रभुना शासनमां भक्तिथी विचरीने पछी चारित्र लइ उदायन नामनो छेलो राजर्षि सिध्धि पद पाम्यो. ॥ १२ ॥

जिणहरमंडियवसुहा, दाणं अनुकंपभत्तिदाणाई ॥
तिथ्थपभावगरेहिं, संपत्तो संपइराया ॥ १३ ॥

शब्दार्थ-जिनमंदिरथी पृथ्वीने शोभावनारो संप्रति राजा अनुकंपादान अने भक्तिदान आपीने तीर्थ प्रभावक पुरुषोमां रेखाने पाम्यो. ॥ १३ ॥

दाउं सहासुद्धे, सुद्धे कुम्मासए महामुणिणो ॥
सिरिमूलदेवकुमारो, रज्जसिरिं पाविउ गुरुई ॥१४॥

शब्दार्थ-श्री मुलदेव कुमार शुद्ध भक्तथी महामुनिने शुद्ध एवा अडदना बाकला आपीने म्होटी राज्य लक्ष्मी पाम्यो.॥१४॥

अइदाणमुहरकविश्राण-विरइअसयसंखकव्वविच्छरिअं ॥
विक्कमनरिंदचरिअं, अज्जवि लोए परिप्फुरइ ॥ १५ ॥

शब्दार्थ-अतिदानथी वाचाल एवा कविलोकोए रचेला सें कडो काव्योथी विस्तार पामेलुं विक्रमराजानुं चरित्र . . . थी पण लोकमां विस्तार पामे छे. ॥ १५ ॥

निअलोअबंधवेहिं, तब्भवसिद्धेहिं जिणवरिंदेहिं ॥
कयकिच्चेहिंवि दिन्नं, संवच्छरियं महादाणं ॥ १६ ॥

भावार्थ—त्रण लोकना बंधु, तेज जन्ममां सिद्धि पामनारा अने कृतार्थ एवाय श्री जिनेश्वरे सांवत्सरिक महादान आप्युं ॥ १६॥

सिज्जंसकुमारो, निस्सेयससामिओ कहं न होई ॥
फासुअदाणपवाहो, पयासिओ जेण जगहंमि ॥ १७ ॥

भावार्थ—श्री श्रेयांसकुमार मोक्षनो स्वामी केम न थाय? अर्थात् थाय, जेणे आ जगतमां प्रासुकदाननो प्रवाह प्रकाश कर्यो.

कह सा न पसंसिज्जइ, चंदणबाला जिणिंददाणेणं ॥
[illegible] निव्वविओ जीए वीरजिणो ॥१८॥

भावार्थ—ते चंदनबाला श्री जिनेश्वरने दान आपवाथी केम [illegible] पामी? अर्थात् पामी. कारणके, जे चंदनबालाए छ मासना [illegible] श्री महावीरस्वामीने शीतळ पमाड्या,

[illegible] ॥
[illegible] ॥१९॥

[illegible] ॥ १९ ॥

[illegible] ॥
[illegible] २०

[illegible] ॥ २० ॥ [illegible] ॥

॥ अथ शीलकुलक ॥

सोहग्ग महानिहिणो, पाए पणमामि नेमिजिण वइणो ॥
बालेण जुअबलेण, जणाद्दणो जेण निज्जिणिउ ॥ १ ॥

शब्दार्थ—जेमणे बाल्यावस्थामां भुजबलथी कृष्णवासुदेवने जीत्या छे ते सोभाग्यना समुद्र एवा श्री नेमि जिनेश्वरना पगमां हुं प्रणाम करुं छुं. ॥ १ ॥

सीलं उत्तमवित्तं, सीलं जीवाण मंगलं परमं ॥
सीलं दोहग्गहरं, सीलं सुक्खाण कुलभवणं ॥ २ ॥

शब्दार्थ—जीवोने शील एज उत्तम धन, शील एज उत्कृष्ट मंगल, शील एज दुर्भाग्यने नाश करनारुं अने शील एज सुखोनुं कुलघर छे. ॥ २ ॥

सीलं धम्मनिहाणं. सीलं पावाण खंमणं जणियं ॥
सीलं जंतूणजए. अकित्तिमं मंमणं पवरं ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—शील धर्मनो भंडार तेमज सील पापोने नाश करनारुं कह्युं छे. वली जगत्मां शील माणसोने अकृत्रिम (साचुं) घरेणुं छे. ॥ ३ ॥

नरयदुवारनिरुंजण—कवाडसंपुडसहोअरछायं ॥
सुरलोअधवलमंदिर—आरुहणे पवरनिस्सेणिं ॥४॥

शब्दार्थ—शील नरकना रस्ताने रोकवाने कमाडनी जोड सरखुं अने देवलोकरूप उज्वल मंदिरमां चढवाने श्रेष्ठ निसरणी रूप छे. ॥ ४ ॥

सिरि उग्गसेणधूआ, रायमई लहउ सीलवइरेहं ॥
गिरि विवरगउ जोए, रहनेमी गविउ मग्गे ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—श्री उग्रसेन राजानी पुत्री राजीमति शीलवंती

स्त्रीयोमां रेखा पामी छे. कारण के, जेणे पर्वतनी गुफामां रहे ला रथनेमिने धर्ममार्गने विषे रोकी राख्या छे. ॥ ५ ॥

पज्जलिउवि हु जलणो, सीलपभावेण पाणियं हवइ ॥
सा जयउ जए सीआ, जीसे पयमा जसपमाया ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–जेना शील प्रभावथी ज्वाजल्यमान एवो पण अग्नि पाणीरूप थयो. ते सीता जगत्मां जयवंती वर्ते छे के, जेनी यशपताका प्रगट छे. ॥ ६ ॥

चालणिजलेण चंपा–ए जीइ उग्घाम्रियं दुवारतियं ॥
कस्स न हरेइ चित्तं, तीयं चरियं सुभद्दाए ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–जेणे चालणीनां जले करीने चंपा नगरीना त्रण दरवाजा उघाड्या ते सुभद्रानुं चरित्र कोनां चित्तने हरनारुं न थाय ? ॥ ७ ॥

नंदउ नमयासुंदरि, सा सुचिरं जीइ पालियं सीलं ॥
गहिलत्तणंपि काउं, सहिआ य विम्बणा विविहा ८

शब्दार्थ–ते नर्मदा सुंदरी आनंद पामो के, जेणे गांडापणुं करीने पण विविध प्रकारनी विटंबना सहन करीने शील पाळ्युं.

भइं कलावईए, भीसणरन्नंमि रायचत्ताए ॥
जंसा सीलगुणेणं, छिन्नंगं पुण नवा जाया ॥ ९ ॥

शब्दार्थ–भयंकर अरण्यमां राजाए त्यजी दीधेली कला वतोनुं कल्याण थाउ के, जेना शीलगुणथी छेदायेला अंगो पण फरी नवा थया. ॥ ९ ॥

सीलवईए सीलं, सक्कइ सक्कोवि वन्निउं नेव ॥
रायनिउत्ता सचिवा, चउरोवि पवंचिआ जीए ॥१०॥

शब्दार्थ–शीलवतीना शीलने इंद्र पण वर्णववाने समर्थ

नथी. कारणके, जे शीलवंतीये राजाना मोकलावेला चार मधा नोने पण छेतरया छे, ॥ १० ॥

सिरिवद्धमाणपहुणा. सुधम्मलाभुत्ति जीई पठविर्ड ॥
सा जयउ जए सुलसा. सारयससि विमलशीलगुणा ११

शब्दार्थ–श्री वर्द्धमान स्वामींये जेने धर्मलाभ मोकल्यो हतो, ते शरद रुतुना चंद्रसमान निर्मल गुणवाली सुलसा जग तमां जयवंती वर्त्तो. ॥ ११ ॥

हरिहरबंभपुरंदर–मयभंजणा पंचवाण बलदप्पो ॥
लीलाइ जेण दलिउ, स थूलभद्दो दिसउ भद्दं १२

शब्दार्थ–हरि, हर, ब्रह्मा, अने इंद्रना मदने भागनार तथा बलथी गर्ववंत एवा कामदेवने जेणे लीलामात्रथी दली नाख्यो छे ते स्थूलभद्र कल्याण आपो, ॥ १२ ॥

मणहरतारूणभरे. पत्तिब्भंतोवि तरूणि नियरेणं ॥
सुरगिरिनिचलचित्तो. सो वयरमहारिसी जयउ ॥१३॥

शब्दार्थ–जे मनोहर तारूणपना भारवाली स्त्रीना जत्थ मूह प्रार्थना करया छतां पण मेरुपर्वतनी पेठे निश्चल चित्तवाला रहेला छे, ते श्री वज्रस्वामी जयवंता वर्त्तो ॥१३॥

थुणियं तस्स न सक्का, सहस्स सुदंसणस्स गुणनियरं ॥
जो विसमसंकडेसुवि, पडिउवि अखंडशीलघणो १४

शब्दार्थ–ते सुदर्शन श्रावकनो गुणसमूह स्तुति करवा शक्य नथी. अर्थात् स्तुति करी शकाय तेवो नथी. कारण के, जे विषम संकटमां पड्या छतां पण अखंड शीलरूपधन वालो रह्यो छे.

सुंदरि सुनंद चिल्लणा. मणोरमा अंजणा मिगावइ अ ॥
जिणसासणसु पसिद्धा, महासईओ सुहं दिंतु ॥ १५ ॥

शब्दार्थ—सुंदरी, सुनंदा, चिल्लणा, मनोरमा, अंजना अने मृगा वती.जिनशासनमां प्रसिद्ध एवी ए महा सतीयो(तमने)सुख आपो.

अच्चंकारिय चरिअं. सुणिऊणं को न धुणइ किर सीसं
जा अखंडियसीला, भिल्लवइकयत्थिआवि दढं ॥१६॥

शब्दार्थ—अचंकारी भटानुं चरित्र सांभलीने कोण पोता नुं मस्तक निश्चे न धुणावे ? के, जे भिल्लपतिये कष्ट आप्या बतां दृढ अखंडित शीलवाली रही ॥ १६ ॥

नियमित्तं नियभाया, नियजणउ नियपियामहो वावि ॥
नियपुत्तोवि कुसीलो, न वल्लहो होइ लोआणं ॥१७॥

शब्दार्थ—पोतानो मित्र, पोतानो भाइ, पोतानो बाप अ थवा पोताना बापनो बाप पण, वली पोतानो पुत्र पण जो कु शील होय तो ते लोकोने वहालो थतो नथी. ॥ १७ ॥

सव्वेसिंपि वयाणं, भग्गाणं अत्थि कोइ पडिआरो ॥
पक्कघडस्सव कन्ना, न होइ सीलं पुणो भग्गं ॥ १८ ॥

शब्दार्थ—सर्वे एवाय पण भागेलां व्रतनो कोइ पण आलो यणादि उपाय छे, पण जेम पाका घडाने कांठा चोडवानो कोइ उपाय नथी तेम भागेला शीलनो फरी कोइ उपाय नथी. १८

वेयालभूअरक्खस—केसरिचित्तयगइंदसप्पाणं ॥
लीलाइ दलइ दप्पं, पालंतो निम्मलं सीलं ॥१९॥

शब्दार्थ—निर्मल शील पालनारो पुरुष वैताल, भूत, राक्षस, के शरीसिंह,चित्रा,हाथी अने सर्पना गर्वने लीला मात्रमां दली नाखेछे.

जे केइ कम्ममुक्का, सिद्धा सिज्झंति सिज्झिहिंति तहा ॥
सव्वेसिं तेसिं बलं, विसाल सीलस्स माहप्पं ॥ २० ॥

शब्दार्थ-जे कोइ कर्म मुक्त जीवो सिद्ध थया, सिद्ध थाय छे तेमज

सिद्ध थशे; ते सर्वने विशाल शीलनुं महात्म्यज बल छे. अर्थात् शीलना बलथी सिद्धिपद पामे ॥ २० ॥

॥ इति शील कुलक ॥

॥ अथ तपकुलक ॥

सो जयउ जुगाइजिणो, जस्संसे सोहए जडामउडो ॥
तवझाणग्गिपलिविय, कम्मिंधणधूमपंतिव ॥ १ ॥

शब्दार्थ–तप ध्यानरूप अग्निथी बलता एवा कर्मरूप इंधणांना धूमाडानी पेठे जेमना खभाने विषे जटारूप मुकुट शोभतो हतो ते श्री युगादि जिनेश्वर जयवंता वर्तो. ॥१॥

संवच्छरियतवेणं, काउसग्गंमि जो ठिउ भयवं ॥
पूरियनियपइन्नो, हरउ दुरिआइं बाहुबली ॥ २ ॥

शब्दार्थ–जे भगवान संवत्सरीनां तपथी कानसगगमां रह्या रही पोतानी प्रतिज्ञा पूर्ण करी. ते श्री बाहुबली पापोने दूर करो.

अथिरंपिथिरं वंकं–पि उजुअं दुल्लहंपि तह सुलहं ॥
दुस्सझंपि सुसझं, तवेण संपजए कज्जं ॥ ३ ॥

शब्दार्थ–तपथी अस्थिर कार्य होय ते स्थिर, वक्र होय ते सरल, दुर्लभ होय ते सुलभ अने दुःसाध्य होय ते सुसाध्य थायछे.

छठं छठेण तवं, कुणमाणे पढमगणहरो भयवं ॥
अरकीणमहाणसोउ, सिरि गोअमसामिउ जयउ ॥४॥

शब्दार्थ–छठ छठना तपने करता, प्रथम गणधर अने अक्षीण महा लब्धीवाला थयेला एवा भगवान् श्री गौतमस्वामी जयवंता वर्तो.

छजाइ सणंकुमारो, तववललखेलाइलद्धिसंपन्नो ॥
निठुअखवलिअंगुलि–सुवन्नकंतिपयासंतो ॥५॥

शब्दार्थ–तपना बलथी खेलादि लब्धीने पामेलो अने पोतानां थुंकथी लिप्त करेली आंगलीनी सुवर्णना सरखी कांतिने प्रकाश करतो सनत् कुमार चक्रवर्ती शोभे छे. ॥५॥

गोबंभगप्भ गब्भिणि–बंभणिघाताइ गुरुअपावाइं ॥
काऊणवि कणयंपिव, तवेण सुद्धो दढपहारी ॥६॥

शब्दार्थ–गाय, ब्राह्मण, गर्भ अने गर्भवती ब्राह्मणी ए चार हत्यानां म्होटां पापने करीने पण सुवर्णनी पेठे तप करी दढप्रहारी शुद्ध थयो छे. ॥६॥

पुव्वभवे तिव्वतवो, तविउं जं नंदिसेणमहरिसिणा ॥
वसुदेवो तेण पिउ, जाउ खयरी सहस्साणं ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–पूर्वभवमां नंदिषेण महामुनिये जे तीव्र तप कर्यो,तेथी ते हजारोनो विद्याधरीयोने प्रियकारी वासुदेव थयो.॥७॥

देवावि किंकरत्तं, कुणंति कुलजाइविरहिआणंपि ॥
तवमंतपभावेणं, हरिकेसबलस्स वरिसिस्स ॥ ८ ॥

शब्दार्थ–देवता पण कुलजाति रहितनुं पण दासपणुं करे छे. जुवो देवताए चंडालना कुलमां जन्मेला हरिकेशी महा मुनिनुं तपरूप मंत्रना प्रभावथी दासपणुं करयुं छे. ॥८॥

पम्मसयमेगपम्मेणं, एकेण घमेण घम्मसहस्साइं ॥
जं किर कुणंति मुणिणो, तवकप्पतरुस्स तं रकू फलं ९

शब्दार्थ–मुनियो जे एक वस्त्रवडे हजारो वस्त्र अने एक भाववडे हजारो घमाउ निश्चे करे छे, ते ख्ररेखर तपरूप कल्प वृक्षनुं फल छे. ॥ ९ ॥

अनिआणस्स विहीए, तवस्स तविपस्स किं पसंसामो
किज्जइ जेण विणासो, निकाइयाणंपि कम्माणं ॥१०॥

शब्दार्थ–नीयाणा रहित विधिवमे करेलां तपने शुं वखाणीये ? कारण के, जे तपथी निकाचित एवां पण कर्मनो विनाश कराय छे.

अइदुक्करतवकारी, जगगुरुणा कन्हपुच्छिएण तया ॥
वाहरिओ स महप्पा, समरिज्जउ ढंढणकुमारो ॥११॥

शब्दार्थ–श्री कृष्णना पूछवा उपरथी ते श्री जगत् गुरु नेमिनाथे "जेने अतिदुष्कर तप करनार छे." एम कह्युं हतुं, ते महात्मा श्री ढंढणकुमारने स्मरण करो. ॥११॥

पइदिवसं सत्तजणे, वहिऊणं गहियवीरजिणदिक्खो ॥
दुग्गाभिग्गहनिरओ, अज्जुणओ मालिओ सिद्धो ॥१२॥

शब्दार्थ–दररोज (छ पुरुष अने एक स्त्री) एम सात माणसनो वध करीने पछी श्री वीरप्रभु पासे दीक्षा लइ दुष्कर एवा अभिग्रहमां आसक्त थयेलो अर्जुनमाली सिद्ध थयो. ॥१२॥

नंदीसररुयगेसुवि. सुरगिरिसिहरेसु एगफालाए ॥
जंघाचारणमुणिणो. गच्छंति तवप्पभावेण ॥१३॥

शब्दार्थ–जंघाचारण मुनियो तपना प्रभावथी एक फाले करीने आठमा नंदीश्वरद्वीपमां, बारमा रुचकद्वीपमां अने मेरुपर्वतना शिखर उपर जाय छे. ॥१३॥

सेणियपुरओ जेसिं, पसंसिओ सामिणा तवोरूवं ॥
ते धन्ना धन्नमुणि, दुन्नवि पंचुत्तरे पत्ता ॥ १४ ॥

शब्दार्थ–श्रेणिक राजानी आगल श्री महावीरप्रभुए जेनुं तपस्वरुप वर्णव्युं छे, ते धनकुमार अने धनाकाकंदी ए बन्ने मुनि पण पांचमा अनुत्तर विमानने विषे प्राप्त थया. ॥१४॥

सुणिऊण तव सुंदरी-कुमरीए अंबिलाणि अणवरयं ॥
सट्ठिवाससहस्सा, भण कस्स न कंपए हिययं ॥१५॥

शब्दार्थ–हे भाइ! सुंदरी कुमारीनुं साठ हजार वर्षसुधी निरंतर आंबील तप सांभली कोनुं हृदय न कंपे? कहे. १५

जं विहिअमंबिलतवं, बारसवरिसाइं सिवकुमारेण ॥
तं दट्ठु जंबुरूवं, विम्हइओ कोणिओ राया ॥ १६ ॥

शब्दार्थ–शिवकुमारे (जंबूस्वामीने पाछले भवे) बार वर्ष पर्यंत जे आंबिल तप कर्यो, तेथी बीजा भवमां जंबूस्वामीना रूपने जोइ कोणिक राजा विस्मय पाम्यो. ॥१६॥

जिणकप्पिय परिहारिय, पडिमापडिवन्न लंदयाईणं।
सोऊण तवसरूवं, को अन्नो वहउ तवगव्वं ॥ १७ ॥

शब्दार्थ–जिनकल्पी, परिहारविशुद्धि चारित्रवाला, पडिमाना धारणहार एवा लंदो साधुनां तपस्वरूपने सांभलीने बीजो कयो पुरुष तपना गर्वने धारण करे? ॥१७॥

मासद्धमासखवओ, बलभद्दो रूववंपि हु विरतो ॥
सो जयाउ रन्नवासी, पडिबोहिअसावयसहस्सो १८

शब्दार्थ–मासखमण अथवा पक्खमण करनारा, रूपवंत छतां पण निश्चे विरक्त थयेला, अरण्यमां वसनारा अने सिंहादि हजारो हिंसक पशुओने बोध करनारा ते बलभद्र मुनि जयवंता वर्तो.

थरहरियधरं झलहलि-य सायरं चलियसयलकुलसेलं
जमकासि जयं विण्हु, संघकए तं तवस्स फलं ॥१९

शब्दार्थ–पृथ्वी कंपी, समुद्रो खलभल्या, सर्वे हिमवंतादि कुलपर्वतो कंप्या. ए प्रमाणे जयवंता विष्णुकुमारे श्री संघने माटे जे कांइ कर्युं, ते सर्व तपनुं फल छे. ॥१९॥

किं बहुणा भणिएणं, जंकस्सवि कहवि कहवि सुहाइं
दिसंति भवणमझे, तत्थ तवो कारणं चेव ॥ २० ॥

शब्दार्थ—बहु कहेवाथी शुं? कारणके, भुवननी मध्ये जे कांइ कोइने पण क्यांइ सुखादि देखाय छे, त्यां तपनुं कारण निश्चे जाणवुं. अर्थात् तपथी सर्व प्रकारनुं सुख मले छे. ॥२०॥

॥ इति तप कुलक ॥

॥ अथ भावकुलक ॥

कमठासुरेण रइयं-मि भीसणे पलयतुल्लजलबोले ॥
भावेण केवललच्छि, विवाहिउ जयउ पासजिणो ॥१॥

शब्दार्थ—कमठासुरे रचेला भयंकर प्रलयकाल समान जलमां भावे करीने छ काय जीवनुं हित चिंतववाथी केवलज्ञानरूप लक्ष्मीने पामेला श्री पार्श्वनाथ प्रभु जयवंता वर्तो. ॥१॥

निच्चुन्नो तंबोलो, पासेण विणा न होइ जह रंगो ॥
तह दाणसीलतवभा-वणाउ अहलाउ भावविणा ॥२॥

शब्दार्थ—जेम चूना विना तांबुल अने पास विना वस्त्र रंग न पामे, तेम भाव विना दान, शील, तप अने भावना अफल जाणवी. ॥ २ ॥

मणिमंतउसहीणं, जंतयतंताण देवयाणंपि ॥
भावेण विणा सिद्धी, न हु कस्सइ दीसई लोए ॥३॥

शब्दार्थ—लोकमां मणि, मंत्र, औषधो, जंत्र, तंत्र अने देवतानी उपासनानी पण भाव विना सिद्धि कोइने देखाती नथीज.

सुहभावणावसेणं, पसंदचंदो मुहुत्तमित्तेण ॥
खविऊण कम्मगंठिं, संपत्तो केवलं नाणं ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—शुभ भावनाना वशथी प्रसन्न चंद्रराजा मुहूर्त मात्रमां कर्मनी गांठ खपावी केवलज्ञान पाम्यो. ॥४॥

शब्दार्थ–हे नाथ! सुंदरी कुमारीनुं साठ ह
निरंतर आंबील तप सांजली कोनुं हृदय न कं
जं विहिअमंबिलतवं, वारसवरिसाइं सिव
तं दट्टु जंबुरूवं, विम्हइओ कोणिओ राया ॥

शब्दार्थ–शिवकुमारे (जंबूस्वामीने पाछले न
पर्यंत जे आंबिल तप कर्यो, तेथी बीजा जवमां
रूपने जोइ कोणिक राजा विस्मय पाम्यो. ॥१६॥

जिणकप्पिय परिहारिय, पडिमापडिवन्न
सोऊण तवसरूवं, को अन्नो वहउ तवगव्वं

शब्दार्थ–जिनकल्पी, परिहारविशुद्धि चारित्र
माना धारणहार एवा लंदो साधुनां तपस्वरूपने स
जो कयो पुरुष तपना गर्वने धारण करे? ॥१७॥

मासद्धमासखवओ, वलजद्दो रूववंपि हु विर
सो जयाउ रन्नवासी, पडिवोहिअसावयसहर

शब्दार्थ–मासखमण अथवा पक्षखमण करनारा
बतां पण निश्चे विरक्त थयेला, अरण्यमां वसनारा अने
जारो हिंसक पशुओने बोध करनारा ते वलजद्र मुनि जय

थरहरियधरं झलहलि-य सायरं चलियसयलकुल
जमकासि जयं विहुणु, संघकए तं तवस्स फलं

शब्दार्थ–पृथ्वी कंपी, समुद्रो खलजल्या, सर्व हि
कुलपर्वतो कंप्या. ए प्रमाणे जयवंता विष्णुकुमारे श्री संघ
जे कांइ कर्युं, ते सर्व तपनुं फल छे. ॥१ए॥

किं वहुणा जणिएणं, जंकस्सवि कहवि कत्थ
दिसंति जवणमज्झे, तत्थ तवो कारणं चेव ॥ ५

किं बहुणा जणिएणं, तत्तं निसुणेह जो महासत्ता ॥
मुक्खसुहबीयजूओ, जीवाण सुहावहो जावो ॥२०॥

शब्दार्थ–बहु कहेवाथी शुं? हे महासत्ववंतो! तत्वनी वात सांजलो. जूवोने, मोक्षनां सुखनुं बीजजूत सुखकारी जावज छे.

ईय दाणसील तव जावणाओ जो कुणई सत्ति भत्तिजरो॥
देविंदविंदमहिअं, अ ईरा सो लहई सिद्धिसुहं ॥२१॥

शब्दार्थ– जे शक्ति अने जक्तिना समूहवाळो पुरुष आ उपर कहेला दान, शील, तप अने जावनाने आचरे छे, ते देवताना इंद्रोना समूहे अथवा देवेंद्रसूरिये पूजेलां मोक्ष सुखने थोडा वखतमां पामे छे. ॥ २१ ॥

॥ इति जावकुलक ॥

॥ अथ उपदेशरत्न कोश ॥

उवएसरयणकोसं, नासिअनीसेसलोगदोगच्चं ॥
उवएसरयणमालं, वुत्थं नमिऊण वीरजिणं ॥१॥

शब्दार्थ–श्री वीरप्रभुने नमस्कार करीने हुं नाश कर्यां छे सर्व लोकना दारिद्र जेणे एवा अने उपदेशरूप रत्ननी माला रूप उपदेश रत्नकोशने कहुं छुं. ॥ १ ॥

जीवदयाइ रमिज्जइ, इंदियवग्गो दमिज्जइ सयावि ॥
सच्चं चेव चविज्जइ, धम्मस्स रहस्समिणमेव ॥२॥

शब्दार्थ–जीव दयामां रमवुं, इंद्रियोना समूहने नित्य दमवो अने सत्यज बोलवुं. एज धर्मनुं रहस्य छे. ॥ २ ॥

सीलं न हु खंमिज्जइ, न संवसिज्जइ समं कुसीलेहिं ॥
गुरुवयणं न खलिज्जइ, जइनज्जइधम्मपरमत्थो ॥३॥

शब्दार्थ–निश्चे शीलने न खंम्वुं. कुशीलियानी साथे न वसवुं, गुरुनुं वचन न उलंघवुं. एज श्री जिनेश्वरना धर्मनो उत्कृष्ट अर्थ छे. ॥ ३ ॥

चवलं न चंकमिज्जइ, विरइज्जइ नेव उप्भमो वेसो ॥
वंकं न पलोइज्जइ, रुठावि भणंति किं पिसुणा ॥४॥

शब्दार्थ–चपलपणाथी (अयतनाथी) न चालवुं, उद्भट वेष न पहेरवो, वांकी दृष्टिथी न जोवुं के, जेथी रीसायला एवा पण चाडीया शुं बोले ? ॥ ४ ॥

निअमिज्जइ नीअजीह, अविआरिअ नेव किज्जए कज्जं
न कुलक्कमोअ लुप्पइ, कुविउ किं कुणइ कलिकालो ५

शब्दार्थ–पोतानी जीभने वश करवो, अविचार्युं काम न करवुं अने पोताना सारा कुलाचारने न लोपवो; तो पछी कोप पामेलो कलिकाल पण शुं करे ? अर्थात् कांइ न करे. ॥५॥

मम्मं नउ छविज्जइ, कस्सवि आलं न दिज्जइ कया।
कोवि न उक्कोसिज्जइ, सज्जणमग्गो इमो दुग्गो ॥६॥

शब्दार्थ–कोइनुं मर्म वचन न बोलवुं, कोइने क्यारे पण आल न देवुं तेमज कोइने तिरस्कार पण न करवो. आ प्रमाणे सज्जननो मार्ग दुर्लभ छे. ॥ ६ ॥

सव्वस्स उवयरिज्जइ, न पम्हसिज्जइ परस्स उवयारो ॥
विहलं अवलंविज्जइ, उवएसो एस विउसाणं ॥७॥

शब्दार्थ–सर्वने उपकार करवो, पारको उपकार न विसारवो, दुःखीने आधार आपवो. ए डाह्या पुरुषोनो उपदेश जाणवो

कोवि न अभ्भत्थिज्जइ, किज्जइ कस्सवि न पत्थणाभंगो॥
दीणं न य जंपिज्जइ, जीविज्जइ जाव जिअलोए ॥८॥

शब्दार्थ—ज्यां सुधी जीवलोकमां जीवियें त्यां सुधी कोइ नी पासे याचना न करवी, तेमज कोइनी याचनानो भंग न करवो अने दीन वचन न बोलवुं. ॥ ८ ॥

अप्पा न पसंसिज्जइ, निंदिज्जइ दुज्जणोवि न कयावि ॥
बहु बहुसो न हसिज्जइ, लप्पइ गुरुअत्तणं तेण ॥९॥

शब्दार्थ—पोतानां वखाण न करवां, दुर्जनने क्यारे पण न निंदवो, बहु बहु न हसवुं के, जेथी म्होटाइपणुं पामीये. ९

रिजणो न वीससिज्जइ, कयावि वंचिजए न वीसन्नो ॥
न कयग्घेहिं हविज्जइ, एसो नायस्स नीसंदो ॥१०॥

शब्दार्थ—शत्रुनो विश्वास न करवो, विश्वासवालाने क्यारे पण न ठगवो, करेला गुणना लोपक (कृतघ्न) न थवुं. ए न्या यनो रस्तो जाणवो. ॥ १० ॥

रचिज्जइ सुगुणेसु, बज्झइ राउ न नेहरहिएसु ॥
किज्जइ पत्तपरिक्खा, दक्खाण इमोअ कसवट्टो ॥११॥

शब्दार्थ—सारा गुणवालाने विषे राचीये, साचा स्नेह रहि तनी साथे राग न बांधीये अने पात्रनी परीक्षा करीये. माह्या पुरुषनी एज कसोटी छे. ॥ ११ ॥

नाकज्जमायरिज्जइ, अप्पा पाडिज्जए न वयणिज्जे ॥
न य साहसं चइज्जइ, उन्निज्जइ तेण जगलच्छी ॥१२॥

शब्दार्थ—अकार्य न आदरवुं, पोते निंदनीयमां न पडवुं अने साहसने न त्यजी देवुं के, तेथी जगतमां हाथ ऊंचो रहे.१२

वसणेवि न मुज्झिज्जइ, मुच्चइ माणो न नाम मरणेवि ॥
विहवक्खएवि दिज्जइ, वयमसिधारं खु धीराणं ॥१३॥

शब्दार्थ—दुःखमां पण न मुंझावुं, मरण थाय तो पण मा

नवुं नाम न मूकवुं, लक्ष्मीनो नाश थाय तो पण दान आपवुं, ए वीरपुरुषोनुं असिधारा (तरवारनी धार सरखुं) व्रत छे. १३

अइनेहो न वहिज्जइ, रूसिज्जइ न य पिएवि पयदिहं ॥
वद्धारिज्जइ न कली, जलंजली दिज्जइ डुहाणं ॥ १४ ॥

शब्दार्थ–कोइनी साथे बहु स्नेह न करवो, स्नेही उपर निरंतर न रीसावुं, क्लेश न वधारवो तेमज दुःखोने जलांजली आपवी. अर्थात् दुःखने त्यजी देवुं. ॥ १४ ॥

न कुसंगेण वसिज्जइ, बालस्सवि घिप्पए हिअं वयणं ॥
अनयाउ निवहिज्जइ, न होइ वयणिज्जया एवं ॥ १५ ॥

शब्दार्थ–कुसंगीनी साथे न वसवुं, बालकनुं पण हित व चन ग्रहण करवुं, अन्यायथी पाछा फरवुं के, जेथी आपणुं को इ मावुं न बोले ॥ १५ ॥

विहवेवि न मच्चिज्जइ, न विसीइज्जइ असंपयाएवि ॥
वहिज्जइ समभावे, न होइ रणरणइ संतावो ॥ १६ ॥

शब्दार्थ–धनवंतपणामां अभिमान न करवुं तेमज निर्ध नपणामां खेद न करवो, शत्रु मित्रने विषे समभाव राखवो के, जेथी मोटो खोटो संताप न होय ॥ १६ ॥

वन्निज्जइ निअगुणा, न परुक्खे न य सुअस्स पचक्खं ॥
महिलाउ नो जयाविहु, न नस्सए जेण माहप्पं ॥ १७ ॥

शब्दार्थ–सेवकना गुण पाछल न वर्णववा, तेमज पुत्रना गुण समक्ष न वर्णववा, स्त्रीना गुण पाछल अने समक्ष न वर्णववा के, जेथी आपणी म्होटाइ नाश न पामे. ॥१७॥

जंपिज्जइ पिअवयणं, किज्जइ विणाउअ दिज्जए दाणं ॥
परगुणगहणं किज्जइ, अमूलमंतं वसीकरणं ॥ १८ ॥

शब्दार्थ–प्रीय वचन बोलवुं, विनय करवो, दान आपवुं अने पारका गुण ग्रहण करवा. ए मूल विनानो वशीकरण मंत्रछे.

पन्नावे जंपिज्जइ, सम्माणिज्जइ खलोवि बहुमज्झे ॥
न जइ सपरविसेसो, सयलछा तस्स सिज्झंति ॥१९॥

शब्दार्थ–उचित अवसरे बोलवुं, बहु माणसोनी मध्ये खलने पण सन्मान आपवुं, स्वपरनुं विशेषपणुं न त्यजवुं. ए प्रमाणे चालनाराना सर्व अर्थो सिद्ध थाय छे. ॥ १९ ॥

मंततंताण न पासे. गम्मइ नइ परग्गहे अवीएहिं ॥
पम्मिवन्नं पालिज्जइ, सुकुलीणत्तं हवइ एवं ॥ २० ॥

शब्दार्थ–मंत्र तंत्रने न जोवां, एकला पारका घरमां न जवुं अने पोतानुं कहेलुं पालवुं. ए प्रमाणे चालवाथी सारुं कुलीनपणुं होय छे. ॥ २० ॥

जुंजइ जुंजाविज्जइ. पुच्छिज्ज मणोगयं कहिज्ज सयं ॥
दिज्जइ लिज्जइ उचिअं, इच्छिज्जइ जइ थिरं पिम्मं ॥२१॥

शब्दार्थ–जो मित्रनी साथे स्थिर प्रेम इछिये तो तेने घेर जमीये अने तेने जमाडीये, आपणां मननो विचार तेने पूछीए अने ते पूछे तेनो उतर आपीए; वली योग्य वस्तु आपीए अने लइए.

कोवि न अवमन्निज्जइ. न य गविज्जइ गुणेहिं निअएहिं॥
न य विम्हउ वहिज्जइ, बहुरयणा जेणिमा पुहवी ॥२२॥

शब्दार्थ–कोइने पण अपमान न आपवुं, तेम पोताना गुणथी गर्व पण न करवो. वली मनमां आश्चर्य पण न पामवुं. कारण के, आ पृथ्वी बहु रत्नवाली छे. ॥ २२ ॥

आरंभिज्जइ लहुअं, किज्जइ कज्ज महंत मविपच्छा ॥
न य उक्करिसो किज्जइ, लप्पइ गुरुअत्तणं जेण ॥२३॥

शब्दार्थ–प्रथम आरंभ थोमो करवो अने पाछलथी म्होटुं कार्य पण करवुं. वली पोतानुं उत्कृष्टपणुं न करवुं के, जेथी म्होटाइपणुं पामीये. ॥ २३ ॥

झाइज्जइ परमप्पा, अप्पसमाणो गणिज्जइ परो ॥
किज्जइ न रागदोसो, छिन्निज्जइ तेण संसारो ॥ २४॥

शब्दार्थ–परमात्मानुं ध्यान करवुं, बीजाने पोतानां समान गणवा, राग दोष पण न करवो, तेथी संसार छेदाइ जाय छे.२४

उवएसरयणमालं. जो एयं ठवइ सुठ निअकंठे ॥
सो नर सिवसुहलछी, वच्छयले रमइ सच्छाई ॥२५॥

शब्दार्थ–जे पुरुष आ प्रमाणे उपदेशरत्नमालाने पोताना कंठने विषे स्थापन करे छे; तेनां वक्षस्थलमां मोक्ष सुखनी लक्ष्मी पोतानी इच्छा प्रमाणे क्रीडा करे छे. ॥ २५ ॥

॥ इति उपदेश रत्न कोष.

॥ अथ शाश्वताजिन नामादि संख्या स्तवन ॥

सिरि उसह वद्धमाणं, चंदाणण वारिसेण जिणचंदे ॥
नमिउं सासय जिण भव–ण संख्य परिकित्तणं काहं॥१॥

शब्दार्थ–सामान्य केवलीनी मध्ये चंद्र समान श्री ऋषभ देव, श्री वर्द्धमान स्वामी, श्री चंद्रानन अने श्री वारिषेणने नम स्कार करीने शाश्वता जिनभुवननी संख्यानुं कीर्तन करुं छुं.॥१

कोडि सयोसग अडसठा, सग कोडि बिसयरि लक्ख भवणंग
भुवणेसु क्षमका सगलवड, गहन नेयासुयरि लोग ॥२॥

शब्दार्थ–पातालमां अने भवनने विषे भवनपतिना, कुल सात क्रोड अने बोतेर लाख, तथा ऊर्ध्व लोकमां चं

सी लाख सत्ताणुं हजार अने त्रेवीस जिन भुवन छे. ॥ २ ॥

बावन्ना नंदीसर-वरंमि चउ चउ कुंमले रूअगे ॥
इअ सठी चउबारा, तिडुवारा सेसजिण जवणा ॥३॥

शब्दार्थ-आठमा नंदीश्वर द्वीपमां बावन तथा कुंमल द्वीप अने रुचकद्वीपमां चार चार. एम साठ जिनभुवन चार बारणा वाला छे अने बाकीना जिनभुवनो त्रण बारणावाला छे. ३

पत्तेअं बारेसु, मुहमंमव रंगमंमवे तत्तो ॥
मणिमयपीढं तडवरि, थूजे चउदिसिसु चउ पमिमा ४

शब्दार्थ-प्रत्येक बारणामां मुखमंमप अने रंगमंमपछे. त्यार पछी मणिमयपीठ छे. ते पीठ उपर स्थूज अने ते स्थूज उपर चार दिशामां चार प्रतिमा छे. ॥ ४ ॥

तत्तो मणिपीढजुगे, असोग धम्मझउ अ पुक्करणी ॥
पइजवणं पमिमाणं, मझे अठुत्तर सयं च ॥ ५ ॥

शब्दार्थ-त्यार पछी मणिपीठनुं जोमलुं, अशोक वृक्ष, धर्म ध्वज अने पुष्करिणी वाव्य छे. प्रत्येक जुवननी मध्ये (गजारामां) एकसो आठ प्रतिमाउ छे. ॥ ५ ॥

पमिमा पुण गुरुआउ, पण धणुसय लहु अ सत्तहत्थाउ ॥
मणिपीढे देवछं-दयंमि सीहासणनिसन्ना ॥ ६ ॥

शब्दार्थ-वली म्होटी प्रतिमाउ पांचसो धनुष्यनी अने न्हानी प्रतिमाउ सात हाथनी छे. ते प्रतिमाउ मणिपीठ उपर देवछंदामां सिंहासन उपर बेठेली छे. ॥ ६ ॥

जिण पिठे छत्तधरा, पमिमा जिणभिमुह डुन्नि चमरधरा
नागा नूआ जक्खा, कुंडधरा जिणमुहा दो दो ॥ ७ ॥

शब्दार्थ-जिनप्रतिमानो पाछल एक छत्रधर प्रतिमा अने

पहोळा २५–उंचा ३६ नागकुमारमां–२५–१२॥–१८ व्यंतरमां १२॥–६॥–ए–योजन अनुक्रमे जाणवा. ॥ १५ ॥

दिग्गयगिरिसु चत्ता, दहे असी कंचणेसु इगसहसो ॥
सत्तरि महानईसु, सतरिसयं दीह वेअड्ढे ॥ १६ ॥

शब्दार्थ–दिग्गज पर्वत उपर चालीश, द्रहमां एंशी, कंचन गिरिने विषे एक हजार, महा नदीयोमां सीतेर अने लांबा वैताढ्य उपर एकसो सीत्तेर जिन भुवन छे. ॥ १६ ॥

कुंडेसु तिसय असीआ, वीसं जमगेसु पंच चूलासु ॥
इक्कारस सय सत्तरि, जंबूपमुहे दसतरूसु ॥ १७ ॥

शब्दार्थ–कुंडने विषे त्रणसो एंसी, यमक पर्वत उपर वीस, मेरुपर्वतनी चूलिका उपर पांच अने जंबू प्रमुख दश वृक्ष उपर अगीयार सो सीत्तेर जिनभुवन छे. ॥ १७ ॥

वट्टवेअड्ढे वीसा, कोस तयद्धंच दीहविछारा ॥
चउदस धणुसय चालीस, अहिअ उच्चत्तणे सव्वे १८

शब्दार्थ–वृत वैताढ्य उपर वीश जिनभुवन छे. ए सर्वे दिग्गजादि दश स्थानना ३०८५ जिनभुवनो एक गाउ लांबां अने अर्धो गाउ पहोळां तेमज चौद सो चालीस धनुष्य उंचां छे.

अट्ठदीविविदिसिसोलस, सोहम्मीसाणग्गदेविनयरीसु॥
एवं बत्तीससया, गुणसठि जुआ तिरिअलोए ॥१९॥

शब्दार्थ–आठमा द्वीपनी विदिशाए सौधर्म अने ईशान ए बे इंद्रनी सोल देवीनी सोल नगरीयोमां सोल जिनभुवन छे. एम तिर्छालोकमां सर्व मली बत्रीससो ने ओगणसाठ जिनभुवनछे

एवं तिहुअणमझे, अड कोडी सत्तवन्न लक्खाइं ॥
दोअसया बासीया, सासय जिणभवण वंदामि ॥२०॥

शब्दार्थ—ए प्रमाणे पूर्वे कहेला ऊर्द्ध, अधो अने तिर्छा ए त्रणे लोकमां आठ क्रोड, सत्तावन लाख, बसोने व्यासी शाश्वता जिनभुवनने हुं वांदुं. ॥ २० ॥

सत्ती लक्खा गुणनवइ कोमि, तेरकोमि सय बिंब ज्ञवणेसु
तिअसय वीसा इगनवइ. सहस लक्ख तिगं तिरिअं २१

शब्दार्थ—तेरसो क्रोड, नव्यासी क्रोड अने साठ लाख एट लां जिनबिंब भुवनपतिमां छे, तेमज त्रण लाख, एकाणुं हजार त्रणसो वीस जिनबिंब तिर्छालोकमां छे. ॥ २१ ॥

एगं कोमि सय खलु, बावन्ना कोमि चउणवइ लक्खा ॥
चउ चत्त सहस सगसय, सठा वेमाणि बिंबाणि ॥२२॥

शब्दार्थ—एकसो क्रोड, बावन क्रोड, चोराणुं लाख, चुमालीश हजार सातसो साठ एटलां जिनबिंब वैमानिक देव लोकमां छे.

पनरस कोमि सयाइं, ङुचत्त कोडि अमवन्न लक्खाइं ॥
उत्तीससहस असीआ. तिहुअण बिंबाणि पणमामि २३

शब्दार्थ—पंदर सो क्रोड, बेंतालीसक्रोड, अठावन लाख, छत्रीस हजार अने एंसी एटला त्रण भुवनमां सर्व जिनबिंबने हुं प्रणाम करूं. ॥ २३ ॥

सिरि ज्ञरह निवइ पमुहे—हिं जाइं अन्नाइं इत्र विहिआइं
देविंद मुणिंदथुआइं, दिंतु ज्ञवीयाण सिद्धिसुहं ॥२४॥

शब्दार्थ—श्री भरतचक्रवर्ती विगेरे राजाउए आ अढीद्वीप मां जे प्रतिबिंबो निपजाव्यां छे अने देवेंद्र सूरीश्वरे स्तव्या छे, ते जिनबिंब ज्ञव्यजनोने सिद्धि सुख आपो. ॥ २४ ॥

उस्सेह मंगुलेणं, अह उह्नमसेस सत्त रयणीउ ॥
तिरिल्लोए पण धणु सय. सासय पमिमा पणिवयामि२५

शब्दार्थ—उत्सेधांगुलनां प्रमाणे करी अधोलोकमां अने ऊर्ध्वलोकमां सर्व सात हाथनी अने तिर्छालोकमां पांचसो धनुष्यनी शाश्वति प्रतिमाने हुं प्रणमुं छुं. ॥ २५ ॥

॥ इति शाश्वत जिननामादि संख्या स्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ त्रिलोक चैत्य बिंब संख्या ॥

॥ अधोलोकमां जिनभुवनबिंब संख्या ॥

स्थान संख्या	स्थाननां नाम	भुवन संख्या	जिनबिंब संख्या
१	असुरकुमारमां ॥	६४०००००	११५२०००००००
२	नागकुमारमां ॥	८४०००००	१५१२०००००००
३	सुवर्णकुमारमां ॥	७२ लाख	१२९६००००००
४	विद्युत्कुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
५	अग्निकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
६	द्वीपकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
७	उदधिकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
८	दिक्कुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
९	वायुकुमारमां ॥	९६ लाख	१७२८००००००
१०	स्तनितकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
		कुल	कुल
[illegible]	[illegible]	७७२०००००	१३८९६०००००००

॥ उर्द्धलोकमां जिनभुवन बिंबसंख्या ॥

स्थान संख्या	स्थाननां नांम	भुवन संख्या	जिनबिंब संख्या
१	सौधर्म देवलोके ॥	३२ लाख	५७६००००००
२	ईशानदेवलोके ॥	२८ लाख	५०४००००००
३	सनत्कुमारमां ॥	१२ लाख	२१६००००००
४	माहेंद्रदेवलोके ॥	८ लाख	१४४००००००
५	ब्रह्मदेवलोके ॥	४ लाख	७२०००००००
६	लांतकदेवलोके ॥	५००००	९००००००
७	महाशुक्रदेवलोके ॥	४००००	७२०००००
८	सहस्त्रारदेवलोके ॥	६०००	१०८००००
९	आनतदेवलोके ॥	२००	३६०००
१०	प्राणतदेवलोके ॥	२००	३६०००
११	आरणदेवलोके ॥	१५०	२७०००
१२	अच्युतदेवलोके ॥	१५०	२७०००
३	प्रथमत्रीके (नवग्रैवेयक) ॥	१११	१३३२०
३	बीजेत्रीके (नवग्रैवेयक) ॥	१०७	१२८४०
३	त्रीजेत्रीके (नवग्रैवेयक) ॥	१००	१२०००
५	अनुत्तरपांचे ॥	५	६००
		कुल ८४९७०२३	कुल १५२९४४४७६०

प्रथमदेवलोकथी १२ मा सुधी प्रत्येक चैत्ये १८० प्रतीमा छे ॥ पांच सभानी ६० प्रतीमा। त्रण बारणाना चोमुखनी १२ प्रतीमा। मध्य चैत्यनी १०८ प्रतीमा। सर्व मली १८० जाणवी ॥ ग्रैवेयक अनुत्तरे १२० कल्पातीत छे, माटे सभा नथी ॥

॥ तिर्च्छालोकमां चैत्य बिंबसंख्या ॥

स्थान संख्या	स्थानना नाम	जिनचैत्य संख्या	जिनबिंब संख्या
१	व्यंतर असंख्यनगरे॥	असंख्यभुवन	असंख्यबिंब
२	जोतषीचरथरमां ॥	असंख्यभुवन	असंख्यबिंब
३	नंदीश्वरद्वीपमां म०१२४	५२	६४४८
४	कुंडलद्वीपमां ॥	४	४९६
५	रुचकद्वीपमां ॥	४	४९६
६	कुंडलगिरिमां म०१२०	३०	३६००
७	देव उत्तरकुरुमां ॥	१०	१२००
८	मेरुवनने विषे ॥	८०	९६००
९	गजदंता पर्वते ॥	२०	२४००
१०	वखार पर्वते	८०	९६००
११	इक्षुकार पर्वते ॥	४	४८०
१२	मानुषोत्तर पर्वते ॥	४	४८०
१३	द्रहने ॥	४०	४८००
१४	[illegible] ॥	८०	९६००
१५	कंचनगिरिये ॥	१०००	१२००००
१६	महानदीये ॥	७०	८४००
१७	दीर्घ वैताढ्य गिरिये॥	१७०	२०४००
१८	कुंडे ॥	३८०	४५६००
१९	यमकगिरिये ॥	२०	२४००
२०	मेरुपर्वतनी चूलीकाये	५	६००
२१	[illegible] वृक्षे ॥	११७०	१४०४००
२२	वृत्तवैताढ्यगिरिये॥	२०	२४००
२३	[illegible] ॥	१६	१९२०
		[illegible]	[illegible]

एहमां ६० प्रासाद तेमां प्रत्येके १२४ पातिमा. बाकी ३१९९ प्रासाद चोमुखारा । तेमां प्रत्येके १२० पतिमा ॥

॥ त्रिजगसंख्या ॥

अधोलोके ॥	७७२०००००	१३८९६००००००
उर्ध्वलोके ॥	८४९७०२३	१५२९४४४७६०
तिर्छालोके ॥	३२५९	३९१३२०

॥ एम त्रणलोकमां ॥

साश्वता प्रासाद ॥	साश्वता जिनबिंब ॥
८५७००२८२	१५४२५८३६०८०

॥ इति सास्वतां जिनभुवन तथा जिनबिंब संख्यायंत्र समाप्तम्॥

॥ अथ शत्रुंजय लघुकल्प ॥

अइमुत्तयकेवलिणा, कहिअं सेत्तुंजतित्थमाहप्पं ॥
नारयरिसिस्स पुरओ, तं निसुणह भावओ भविआ ॥१॥

शब्दार्थ–हे भव्यजनो! अति मुक्त मुनिये नारदऋषिनी आगल शत्रुंजय तीर्थनुं महात्म्य कह्युं छे, तेने तमे भावथी सांभलो.

सेत्तुंजे पुंडरीओ, सिद्धो मुणिकोडिपंचसंजुत्तो ॥
चित्तस्स पुण्णिमाए, सो भण्णइ तेण पुंडरिओ ॥ २ ॥

शब्दार्थ–शत्रुंजय उपर पुंडरिक गणधर पांच क्रोड साधु सहित' चैत्रमासनी पुनमे सिद्ध थया छे, तेथी ते पर्वतनुं नाम पुंडरिक कहेवाय छे. ॥ २ ॥

नमि विनमि रायाणो, सिद्धा कोमिहिं दोहीं साहुणं ॥
तह दविम वालीखिल्ला, निव्वुआ दसय कोडिर्ज ॥३॥

शब्दार्थ–नमि अने विनमि राजा बे क्रोड साधुसहित सिद्ध थया. तेमज द्राविड अने वालीखिल बे बंधु मुनियो दशक्रोड साधु साथे सिद्ध थया छे. ॥ ३ ॥

पज्जुन्नसंबपमुहा, अद्धु हाउ कुमारकोमिर्ज ॥
तह पमवावि पंचय, सिद्धिगया नारयरिसि य ॥४॥

शब्दार्थ–प्रद्युम्न सांब विगेरे साडा आठ क्रोड कुमारो तेमज पांच पांडवो अने नारदऋषि सिद्धि पद पाम्या. ॥ ४ ॥

थावच्चा सुय सेलं–गाय मुणिणोवि तह राममुणि ॥
नरहो दसरहपुत्तो, सिद्धा वंदामि सेत्तुंजे ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–थावच्चा पुत्र मुनि, शुकमुनि, शेलकमुनि तेमज दशरथना पुत्र राममुनि अने नरतमुनि शत्रुंजय उपर सिद्ध थया छे, तेमने हुं वांदु छुं. ॥ ५ ॥

अन्नेवि खवियमोहा, उसन्नाइविसालवंससंन्नूआ ॥
जे सिद्धा सेत्तुजे, तं नमह मुणि असंखिज्जा ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–बीजा पण मोहने खपावनारा अने ऋषन्नादिकना विशाल वंशमां उत्पन्न थयेला जे मुनियो शत्रुंजय उपर सिद्ध थया छे ते असंख्याता मुनियोने हुं वांदुं छुं. ॥६॥

पंनास जोयणाइं, आसी सेत्तुंजविच्छडो मूले ॥
दसजोयण सिहरतले, उच्चत्तं जोयणा अह ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–मूलमां शत्रुंजयनो विस्तार पचास जोजन हतो. शिखर उपर दश जोजन अने उंचपणे आठ जोजन हतो.

जं लहइ अन्नतिठे, उग्गेण तवेण बंभचेरेण ॥
तं लहइ पयत्तेणं, सेत्तुंजगिरिम्मी निवसंते ॥ ८ ॥

शब्दार्थ–अन्यतीर्थमां उग्रतपथी अथवा ब्रह्मचर्यथी जे फल प्राप्त थाय ते फल प्रयत्ने शत्रुंजय उपर वसवाथी थाय छे. ८

जं कोमिए पुन्नं, कामियआहारजोइआ जेन्न ॥
जं लहइं तन्न पुन्नं, एगो वासेण सेतुंजे ॥ ९ ॥

शब्दार्थ–इच्छित जोजन वडे कोम माणसने जमाडवाथी जे पुण्य थाय, ते पुण्य शत्रुंजय उपर एक उपवास करवाथी थाय छे.

जं किंची नामतीछं, सग्गे पायाले माणुसे लोए ॥
तं सबमेव दिठं, पुंमरिए वंदिए संते ॥ १० ॥

शब्दार्थ–स्वर्ग, पाताल अथवा मनुष्य लोकमां जे कोइ पण नाम मात्र तीर्थ होय, ते सर्व फक्त शत्रुंजयने वांदवाथी दीठां जाणवां. ॥ १० ॥

पमिलान्नंते संघं, दिठमदिठेप साहूसेत्तुंजे ॥
कोमिगुणं च अदिठे, दिठेअ अणंतये होई ॥११॥

शब्दार्थ–शत्रुंजय पर्वतने दीठा अणदीठा पण तेना सन्मुख चालवाथी चतुर्विध संघनी जक्ति करवा जेटलुं पुण्य थाय छे, न देखवाथी कोम गणुं अने देखवाथी अनंतगणुं थाय छे.

केवलनाणुप्पत्ती, निवाणं आसि जन्न साहूणं ॥
पुंमरिए वंदित्ता, सबे ते वंदिया तन्न ॥ १२ ॥

शब्दार्थ–ज्यां साधुउने ज्ञानती उत्पत्ति अने मोक्षप्राप्ति होय छे; त्यां ते पुंमरीकगिरिने वंदन करवाथी ते सर्वे मुनियोने वांद्या जाणवा. ॥ १२ ॥

शब्दार्थ—कृष्ण अगुरुना धूपथी पंदर दिवसना उपवासनुं फल अने कर्पूरना धूपथी एक मासना उपवासनुं फल थाय छे वली साधुने शुद्ध आहारादिक आपवाथी केटलाक मासना उपवासनुं फल थाय छे. ॥ २२ ॥

न वित्तं सुवन्न भूमी—भूसणदाणेण अन्नतित्थेसु ॥
जं पावइ पुन्न फलं, पुआ न्हवणेण सित्तुंजे ॥ २३ ॥

शब्दार्थ—शत्रुंजय उपर तीर्थपतिने पूजा न्हावण कराववाथी जेटलुं पुण्यफल प्राप्त थाय, तेटलुं पुण्यफल बीजा तीर्थमां सुवर्ण, भूमी अथवा आभूषणनां दानथी पण न थाय. ॥२३॥

कंतार चोर सावय, समुद्द दारिद्द रोग रिउ रुद्दा ॥
मुच्चंति अविग्घेणं, जे सेत्तुंजं धरंति मणे ॥ २४ ॥

शब्दार्थ—जे माणस मनमां शत्रुंजयनुं ध्यान करे छे ते माणस अरण्यना, चोरना, सिंहादिकना, समुद्रना, दारिद्रना, रोगना, शत्रुना अने भयंकर अग्निना भयने निर्विघ्नपणे त्यजी दे छे.

सारावली पयन्नग, गाहाउ सुअहरेण भणिआउ ॥
जो पढइ गुणइ निसुणई, सो लहइ सित्तुंजजत्तफलं २५

शब्दार्थ—श्रुतधरे सारावली नामना प्रज्ञापना सूत्रमां जे गाथाउ कही छे, तेने जे माणस भणे छे, गणे छे अथवा सांभले छे, ते शत्रुंजयनी जात्राना फलने पामे छे. ॥२५॥

॥ इति शत्रुंजय लघुकल्प समाप्त ॥

॥ अथ उपगारी श्री रत्नागरसूरिजी कृत ॥

॥ श्री रत्नाकर पचीसी ॥

श्रेयःश्रियां मंगलकेलिसद्मः, नरेंद्रदेवेंद्रनतांघ्रीपद्म ॥
सर्वज्ञ सर्वातिशय प्रधान, चिरं जय ज्ञानकलानिधान १

शब्दार्थ–मोक्ष लक्ष्मीने मंगल एवुं क्रीडा करवानुं मंदिर, चक्रवर्त्ती अने इंद्रो जेमनां चरण कमलमां नमस्कार करी रह्या छे एवा, सर्व जाण, चोत्रीश अतिशये करीने प्रधान अने ज्ञान कलाना जंडार एवा हे प्रजो ! तमे दीर्घकाल जयवंता वर्त्तो. १

जगत्त्रयाधार कृपावतार, दुर्वारसंसारविकारवैद्य ॥
श्रीवीतरागत्वयिमुग्धजावा,द्विज्ञप्रजोविज्ञपयामिकिंचित्॥

शब्दार्थ–त्रण जगत्ना आधार, कृपाना अवतार, दुःखे निवारवा योग्य संसाररूप विकारने दुर करनारा वैद्य एवा हे विशेष जाण प्रजो ! हुं जोला जावथी तमारी आगल कांइ विनंती करुं छुं. ॥ २ ॥

किं बाललीलाकलितो न बालः,
पित्रोःपुरो जल्पति निर्विकल्पः ॥
तथा यथार्थं कथयामि नाथ,
निजाशयं सानुशयस्तवाग्रे ॥ ३ ॥

शब्दार्थ–हे नाथ ! बालक्रीडा सहित एवो बालक माता पितानी आगल विकल्प रहित शुं नथी बोलतो ? तेम हुं पण तमारी आगल पश्चाताप करतो बतो म्हारो पोतानो आशय कहुं छुं. ॥ ३ ॥

दत्तं न दानं परिशीलितं च,
न शालिशीलं न तपोऽभितप्तम् ॥

शुन्नो न न्नावोऽप्यन्नवन्नवेऽस्मिन्,
विन्नो मया न्नांतमहो मुधैव ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–हे विन्नो ! में दान आप्युं नथी, सुशोन्नित एवुं शील पाळ्युं नथी, तप कर्युं नथी तेमज आ न्नवमां मने शुन्न न्नाव पण थयो नथी, माटे अहो! हुं फोगटज न्नांती पाम्योछुं.

दग्धोऽग्निना क्रोधमयेन दष्टो,
दुष्टेन लोन्नाख्यमहोरगेण ॥
ग्रस्तोऽन्निमानाजगरेण माया–
जालेन बद्धोऽस्मि कथं न्नजे त्वां ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–हे प्रन्नो ! क्रोधरूप अग्निथी बळेलो, लोन्नरूप दुष्ट महा सर्पे डसेलो, अन्निमान रूप अजगरे गळेलो अने माया थी बंधाइ रहेलो हुं तमने शी रीते न्नजी शकुं ? ॥ ५ ॥

कृतं मयामुत्र हितं न चेह,
लोकेऽपि लोकेश सुखं न मेऽन्नूत् ॥
अस्मादृशां केवलमेव जन्म,
जिनेश जज्ञे न्नवपूरणाय ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–हे लोकेश ! में परलोकमां हितकारी अने आ लोकमां पण हितकारी एवुं कांइ कर्युं नथी, जेथी मने आ जन्ममां सुख नथी मळ्युं. हे जिनेश्वर ! ते माटे अमारा सरखा नो जन्म फक्त न्नव पूरवा माटेज थयो छे. ॥ ६ ॥

मन्ये मनो यन्न मनोज्ञवृत्तं,
त्वदास्यपीयूषमयूखलान्नात् ॥
द्रुतं महानंदरसं कठोर–
मस्मादृशां देव तदश्मतोऽपि ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–हे मनोज्ञवृत्त ! हुं जाणुं छुं के, तमारां मुखरूप अमृतनां किरणोनो लाभ थयाथी पण अमारुं मन महा आनंद ने गृहण करतुं नथी, तेथी ते पत्थरथी पण कठीण छे. ॥ ७ ॥

त्वत:सुदु:प्राप्यमिदं मयाप्तं, रत्नत्रयं भूरिभवभ्रमेण ॥
प्रमादनिद्रावशतो गतं तत्, कस्याग्रतो नायकपूत्करोमि

शब्दार्थ–संसारमां बहु भटकता एवा में दुखे मेलवी श काय एवा आ ज्ञान, दर्शन अने चारित्ररूप त्रण रत्न तमाराथी मेलव्यां हतां ते प्रमाद निद्रना वशथी गुमावी दीधां छे, तो हवे हे नायक ! हुं कोनी आगल जइने पोकार करुं. ॥ ८ ॥

वैराग्यरंगो परवंचनाय, धर्मोपदेशो जनरंजनाय ॥
वादाय विद्याध्ययनं च मे भूत्, कियद्ब्रुवे हास्यकरं स्वमीश

शब्दार्थ–हे ईश ! म्हारो वैराग्य रंग बीजाने ठगवाने अर्थे थयो, धर्मोपदेश माणसोने राजी करवाने अर्थे थयो अने विद्या भ्यास वाद करवा माटे थयो. आवुं म्हारुं हास्यकारक कृत्य केटलुं कहुं ? ॥ ९ ॥

परापवादेन मुखं सदोषं, नेत्रं परस्त्रीजनवीक्षणेन ॥
चेत:परापायविचिंतनेन,कृतं भविष्यामि कथं विभोहम्१०

शब्दार्थ–हे विभो बीजाना अछता दोष बोलवाथी मुखने, परस्त्रीने जोवाथी नेत्रने अने बीजाइने कष्ट चिंतववाथी चित्त ने एम ए त्रणेने मलीन कर्यां छे, तो हवे म्हारी शी गति थशे ?

विडंबितं यत्स्मरघस्मरार्ति–दशावशात्स्वंविषयांधलेन ॥
प्रकाशितं तद्भवतो ह्रियैव, सर्वज्ञ सर्वं स्वयमेव वेत्सि ११

शब्दार्थ–हे सर्वज्ञ कामदेवना पापनी पीडाना वशपणां वि षयवडे आंधला थयेला में म्हारुं पोतानुं जे कुकृत्य हतुं ते सर्व

आपनो आगल लज्यायी कह्युं छे. वधारे शुं कहुं ? कारण आ
पज सर्व जाणो छो. ॥ ११ ॥

ध्वस्तोऽन्यमंत्रैःपरमेष्ठिमंत्रं, कुशास्त्रवाक्यैर्निहितागमोक्ति
कर्तुंवृथाकर्मकुदेवसंगात्, अवांछिह्निनायमतिभ्रमोमे ॥१

शब्दार्थ–में मारणादि बीजा मंत्रोथी परमेष्टि मंत्रनो नाश
कर्यो, कुशास्त्र वचनोथी आगम वचननो नाश कर्यो अने कु
देवना संगथी वृथा कर्म करवानो इच्छा करी. हे नाथ ! आ सर्व
मने मतिभ्रम थयो छे. ॥ १२ ॥

विमुच्यदृक्लक्ष्यगतंभवंतं, ध्यातामयामूढधियाहृदंतः ॥
कटाक्षवक्षोजगभीरनाभी, कटीतटीयःसुदृशांविलासाः॥

शब्दार्थ–हे प्रभो ! नेत्रनी सन्मुख रहेला तमने त्यजी द
मूढ बुद्धिवाला में स्त्रीयोनां कटाक्ष, स्तन, गंभीर नाभी, केडन
नाग अने विलासोनुं हृदयमां ध्यान कर्युं छे. ॥ १३ ॥

लोलेक्षणावक्त्रनिरीक्षणेन, योमानसेरागलवोविलग्नः ॥
नशुद्धसिद्धांतपयोधिमध्ये, धौतोप्यगात्तारककारणंकिं ॥

शब्दार्थ–हे तारक ! स्त्रीयोना मुखने जोवाथी जे म्हार
मनने विषे थोडो रंग लाग्यो छे, ते रंगने में शुद्ध सिद्धांत समु
मां धोइ नांख्यो तो पण गयो नहि, तेनुं शुं कारण ? ॥ १४ ॥

अंगंनचंगंनगणोगुणानां, ननिर्मलःकोपिकलाविलासः।
स्फुरत्प्रभानप्रभुताचकापि,तथाप्यहंकारकदर्थितोहम ॥

शब्दार्थ–म्हारे अंग सारुं नथी, म्हारामां कोइ गुणसमू
नथी, कोइ निर्मल कलाविलास नथी, तेम देदीप्यमान कांति
तथा कोइ पण प्रभुता नथी, तो पण हुं अहंकारथी क
र्थना पाम्यो छुं. ॥ १५ ॥

आयुर्गलत्याशुनपापबुद्धिः, गतंवयोनोविषयाभिलाषः ॥
यत्नश्चभैषज्यविधौनधर्मे, स्वामिन्महामोहविडंबनामे १६

शब्दार्थ–हे स्वामिन्! हमेशां आयुष्य गलतुं जाय छे, पण पाप बुद्धि गली जती नथी; बाल्यादि अवस्था गइ, पण विषयनो अभिलाष गयो नहि; वली औषधविधिमां यत्न कर्यो, पण धर्ममां यत्न कर्यो नहि. खरेखर आ मने म्होटी मोह विटंबना लागी छे. १६

नात्मानपुण्यंनभवोनपापं, मयाविटानांकटुगीरपीयं ॥
आधारिकर्णेत्वयिकेवलार्के, परिस्फुटेसत्यपिदेवधिग्मां॥

शब्दार्थ–हे देव! केवल ज्ञाने करीने सूर्यरूप आप प्रगट छता में, " आत्मा नथी, पुण्य नथी, भव नथी, पाप नथी. " आवी नास्तिकोनी कडवी वाणीने पान करी तथा कानमां धारण करी, तेथी मने धिक्कार छे. ॥ १७ ॥

न देवपूजा न च पात्रपूजा, न श्राद्धधर्मश्च न साधुधर्मः॥
लब्ध्वापिमानुष्यमिदंसमस्तं,कृतं मयारण्यविलापतुल्यं॥

शब्दार्थ–में मनुष्य जन्म पामीने देव पूजा न करी, पात्र पूजा न करी, श्रावक धर्म न पाल्यो तेमज साधुधर्म पण न पाल्यो; तेथी में ए सघलो मनुष्य जन्म अरण्यमां विलाप करवा तुल्य कर्यो छे. अर्थात् फोगट गुमावी नाख्यो छे. ॥१८॥

चक्रेमयासत्स्वपिकामधेनुः, कल्पद्रुचिंतामणिषुस्पृहार्त्तिः॥
नजैनधर्मेस्फुटशर्मदेपि, जिनेशमेपश्यविमूढभावं ॥१९॥

शब्दार्थ–हे जिनेश्वर! में असत्य एवी कामधेनु, कल्प वृक्ष अने चिंतामणि रत्न विगेरे वस्तुमां स्पृहा करी; परंतु प्रगट सुख आपनारा जिन धर्मने विषे स्पृहा करी नहि. ए म्हारा विशेष मूढ भावने जूओ. ॥ १९ ॥

सद्भोगलीलानचरोगकीला, धनागमोनोनिधनागम
दारानकारानरकस्यचित्ते. विचिंतिनित्यंमयकाधमेन

शब्दार्थ–में अधम चित्तमां नित्य शब्दादि सारा
भोगलीलानो विचार कर्यो पण तेथी थता रोगरूप खीलनो
कर्यो नहि; धन मेळववानो विचार कर्यो, पण मरणनो
कर्यो नहि; स्त्रीओनो विचार कर्यो, पण नरकनी बेडी
चार कर्यो नहि. ॥ २० ॥

स्थितंनसाधोर्हृदिसाधुवृत्तात्. परोपकारान्नयशोऽ
कृतंनतीर्थोद्धरणादिकृत्यं, मयामुधाहारितमेवजन्म

शब्दार्थ–म्हारा हृदयमां उत्तम साधुवृत्ति रही नहि
में परोपकार करीने यश पण मेळव्यो नहि. वळी तीर्थ उ
कार्य पण कर्युं नहि, तेथी में नकामो म्हारो जन्म फो
हारी नाख्यो. ॥ २१ ॥

वैराग्यरंगो न गुरूदितेषु, न दुर्जनानां वचनेषु शांति
नाध्यात्मलेशोममकोऽपिदेव, तार्यःकथंकारमयंभव

शब्दार्थ–मने गुरुए कहेलां वचनमां वैराग्यनो रं
दुर्जनोनां वचनमां शांति पण न थई. वळी मने कोई
अध्यात्म लेश पण आव्यो नहि; तेथी हे देव ! म्हाराथी आ
समुद्र शी रीते तराय ॥ २२ ॥

पूर्वेभवेऽकारिमयानपुण्यं, आगामिजन्मन्यपिनोक
यदीदृशोऽहंममतेननष्टा, भूतोद्भवद्भाविभवत्रयीशः

शब्दार्थ–में पूर्वभवमां पुण्य कर्युं नहीं, आवता ज
पण करीश नहि के, जो हुं आवा प्रकारनो छउं, माटे हे
[illegible]

किंवामुधाहंबहुधासुधाभुक्, पूज्यत्वदग्रेचरितंस्वकीयं ॥
जल्पामियस्मात्त्रिजगत्स्वरूप-निरूपकस्त्वंकियदेतदत्र॥

शब्दार्थ-हे अमृतभोजी ! हुं तमारी आगल फोगट म्हा
चरित्र वधारे शुं कहुं ? कारण के, हे पूज्य ! तमे त्रण जगत्
नां स्वरुपने निरुपण करानारा छो, तो पछी आ म्हारुं कहेवुं
केटलुं मात्र छे ॥ २४ ॥

दीनोद्धारधुरंधरस्त्वदपरो नास्ते मदन्यः कृपा-
पात्रं नात्र जने जिनेश्वर तथाप्येतां न याचे श्रीयम् ॥
किंत्वर्हन्निदमेव केवलमहो सद्बोधिरत्नं शिवः,
श्रीरत्नाकरमंगलैकनिलयश्रेयस्करं प्रार्थये ॥२५॥

शब्दार्थ-हे जिनेश्वर तमारा विना बीजो कोइ दीन मा
णसोनो उद्धार करवाने समर्थ नथी तेमज लोकमां म्हारा वि
ना बीजो कोइ दया करवा योग्य पात्र नथी, तो पण हुं ते ल
क्ष्मीने मागतो नथी; परंतु हे अरिहंत ! हे मोक्षलक्ष्मीना समु
द्र ! हे मंगलना एक स्थान हुं फक्त कल्याणकारी एवां अने मो
क्षनुं हेतु एवां उत्तम बोधीबीजरूप रत्ननी याचना करुं छुं. २५

॥ इति रत्नाकर पच्चीशी ॥

सद्भोगलीलानचरोगकीला, धनागमोनोनिधनागमश्च ॥
दारानकारानरकस्यचित्ते, विचिंतितिनित्यंमयकाधमेन २०

शब्दार्थ–में अधम चित्तमां नित्य शब्दादि सारा भोगनी लीलानो विचार कर्यो पण तेथी थता रोगरूप खीलनो विचार कर्यो नहि; धन मेलववानो विचार कर्यो, पण मरणनो विचार कर्यो नहि; स्त्रीयोनो विचार कर्यो, पण नरकनी वेडीनो विचार कर्यो नहि. ॥ २० ॥

स्थितंनसाधोर्हृदिसाधुवृत्तात्, परोपकारान्नयशोर्जितंच॥
कृतंनतीर्थोद्धरणादिकृत्यं, मयामुधाहारितमेवजन्म २१

शब्दार्थ–म्हारा हृदयमां उत्तम साधुवृत्ति रही नहि तेम में परोपकार माटे यश पण मेलव्यो नहि. वली तीर्थ उद्धारादि कार्य पण कर्युं नहि, तेथी में खरेखर म्हारो जन्म फोगट गु मावी नाख्यो. ॥ २१ ॥

वैराग्यरंगो न गुरूदितेषु, न दुर्जनानां वचनेषु शांतिः ॥
नाध्यात्मलेशोममकोपिदेव, तार्यःकथंकारमयंभवाब्धि

शब्दार्थ–मने गुरुए कहेलां वचनमां वैराग्यरंग न थयो दुर्जनोनां वचनमां शांति पण न थइ. वली मने कोइ पण अ ध्यात्म लेश प्रगट्यो नहि; तेथी हे देव! म्हाराथी आ संसा समुद्र शी रीते तराय ॥ २२ ॥

पूर्वेभवेकारिमयानपुण्यं, आगामिजन्मन्यपिनोकरिष्ये
यदीदृशोहंममतेननष्टा, भूतोद्भवद्भाविभवत्रयीशः ॥२३

शब्दार्थ–में पूर्वभवमां पुण्य कर्युं नथी, आवता भवने वि पण करीश नहि के, जेथी हुं आवो दुःखी थयोछुं;माटे हे प्रभु म्हा भूत, भविष्य अने वर्तमान कालना त्रणे जन्म वृथा नाश पाम्

किंवामुधाहंवहुधासुधाभुक्, पूज्यत्वदग्रेचरितंस्वकीयं ॥
जल्पामियस्मात्त्रिजगत्स्वरूप–निरूपकस्त्वंकियदेतदत्र॥

शब्दार्थ–हे अमृतभोजी ! हुं तमारी आगल फोगट म्हारुं चरित्र वधारे शुं कहुं ? कारण के, हे पूज्य ! तमे त्रण जगत् नां स्वरूपने निरुपण करानारा छो, तो पछी आ म्हारुं कहेवुं कोण मात्र छे ॥ २४ ॥

दीनोद्धारधुरंधरस्त्वदपरो नास्ते मदन्यः कृपा–
पात्रं नात्र जने जिनेश्वर तथाप्येतां न याचे श्रीयम् ॥
किंत्वर्हन्निदमेव केवलमहो सद्बोधिरत्नं शिवः,
श्रीरत्नाकरमंगलैकनिलयश्रेयस्करं प्रार्थये ॥२५॥

शब्दार्थ–हे जिनेश्वर तमारा विना बीजो कोइ दीन माणसोनो उद्धार करवाने समर्थ नथी तेमज लोकमां म्हारा विना बीजो कोइ दया करवा योग्य पात्र नथी, तो पण हुं ते लक्ष्मीने मागतो नथी; परंतु हे अरिहंत ! हे मोक्षलक्ष्मीना समुद्र ! हे मंगलना एक स्थान हुं फक्त कल्याणकारी एवां मने मोक्षनुं हेतु एवां उत्तम बोधीबीजरूप रत्ननी याचना करुं छुं. २५

॥ इति रत्नाकर पचीशी ॥

सन्नोगलीलानचरोगकीला, धनागमोनोनिधनागमश्च ॥
दारानकारानरकस्यचित्ते, विचिंतितिनित्यंमयकाधमेन २०

शब्दार्थ—में अधम चित्तमां नित्य शब्दादि सारा भोगनी लीलानो विचार कर्यो पण तेथी थता रोगरूप खीलनो विचार कर्यो नहि; धन मेलववानो विचार कर्यो, पण मरणनो विचार कर्यो नहि; स्त्रीयोनो विचार कर्यो, पण नरकनी बेडीनो विचार कर्यो नहि. ॥ २० ॥

स्थितंनसाधोर्हृदिसाधुवृत्तात्, परोपकारान्नयशोर्जितंच॥
कृतंनतीर्थोद्धरणादिकृत्यं, मयामुधाहारितमेवजन्म २१

शब्दार्थ—म्हारा हृदयमां उत्तम साधुवृत्ति रही नहि तेम में परोपकार माटे यश पण मेलव्यो नहि. वली तीर्थ उद्धारादि कार्य पण कर्युं नहि, तेथी में खरेखर म्हारो जन्म फोगट गुमावी नाख्यो. ॥ २१ ॥

वैराग्यरंगो न गुरूदितेषु, न दुर्जनानां वचनेषु शांतिः ॥
नाध्यात्मलेशोममकोपिदेव, तार्यःकथंकारमयंभवाब्धिः॥

शब्दार्थ—मने गुरुए कहेलां वचनमां वैराग्यरंग न थयो, दुर्जनोनां वचनमां शांति पण न थइ. वली मने कोइ पण अध्यात्म लेश प्रगट्यो नहि; तेथी हे देव! म्हाराथी आ संसार समुद्र शी रीते तराय ॥ २२ ॥

पूर्वेभवेकारिमयानपुण्यं, आगामिजन्मन्यपिनोकरिष्ये॥
यदीदृशोहंममतेननष्टा, भूतोद्भवद्भाविभवत्रयीशः ॥२३॥

शब्दार्थ—में पूर्वभवमां पुण्य कर्युं नथी, आवता जन्ममां पण करीश नहि के, तेथी हुं आवो दुःखी थयो छुं, माटे हे ईश म्हारा भूत, भविष्य अने वर्तमान काळना त्रणे जन्म वृथा नाश पाम्या.

किंवामुधाहंवहुधासुधाभुक्, पूज्यत्वदग्रेचरितंस्वकीयं ॥
जल्पामियस्मात्त्रिजगत्स्वरूप–निरूपकस्त्वंकियदेतदत्र॥

शब्दार्थ–हे अमृतभोजी ! हुं तमारी आगल फोगट म्हारुं चरित्र वधारे शुं कहुं ? कारण के, हे पूज्य ! तमे त्रण जगत् नां स्वरूपने निरूपण करानारा छो, तो पछी आ म्हारुं कहेवुं कोण मात्र छे ॥ २४ ॥

दीनोद्धारधुरंधरस्त्वदपरो नास्ते मदन्यः कृपा–
पात्रं नात्र जने जिनेश्वर तथाप्येतां न याचे श्रीयम् ॥
किंत्वर्हन्निदमेव केवलमहो सद्बोधिरत्नं शिवः,
श्रीरत्नाकरमंगलैकनिलयश्रेयस्करं प्रार्थये ॥२५॥

शब्दार्थ–हे जिनेश्वर तमारा विना बीजो कोइ दीन माणसोनो उद्धार करवाने समर्थ नथी तेमज लोकमां म्हारा विना बीजो कोइ दया करवा योग्य पात्र नथी, तो पण हुं ते लक्ष्मीने मागतो नथी; परंतु हे अरिहंत ! हे मोक्षलक्ष्मीना समुद्र ! हे मंगलना एक स्थान हुं फक्त कल्याणकारी एवां अने मोक्षनुं हेतु एवां उत्तम बोधीबीजरूप रत्ननी याचना करुं छुं. २५

॥ इति रत्नाकर पच्चीशी ॥

[illegible]नभोगओलानचरोगकोला. धनागमोनो निधनागमभ[illegible]
[illegible]नकागनरकस्यचिते. विचिंतिनिस्यंमयकाधमेन [illegible]

अन्वयार्थ–[illegible] अधम चित्तमां नित्य शब्दादि [illegible]
[illegible]नो विचार करशो पण तेथी थता रोगरूप [illegible]
[illegible] नहि; धन [illegible]नो विचार करशो, पण मरणनो [illegible]
[illegible] नहि; [illegible] विचार करशो, पण नरकनी [illegible]
[illegible] नहि. ॥ २० ॥

[illegible]
[illegible]

[illegible] ॥ २१ ॥

[illegible]
[illegible]

[illegible] ॥ २२ ॥

[illegible]
[illegible]

[illegible]

किंवामुधाह्नंबहुधासुधासुक्, पूज्यत्वदग्रेचरितंस्वकीयं ॥
जल्पामियस्मात्त्रिजगत्स्वरूप–निरूपकस्त्वंकियदेतदत्र॥

शब्दार्थ–हे अमृतभोजी ! हुं तमारी आगल फोगट म्हारुं चरित्र वधारे शुं कहुं ? कारण के, हे पूज्य ! तमे त्रण जगत्नां स्वरूपने निरुपण करानारा छो, तो पछी आ म्हारुं कहेवुं कोण मात्र छे ॥ २४ ॥

दीनोद्धारधुरंधरस्त्वदपरो नास्ते मदन्यः कृपा–
पात्रं नात्र जने जिनेश्वर तथाप्येतां न याचे श्रीयम् ॥
किंत्वर्हन्निदमेव केवलमहो सद्बोधिरत्नं शिवः,
श्रीरत्नाकरमंगलैकनिलयश्रेयस्करं प्रार्थये ॥२५॥

शब्दार्थ–हे जिनेश्वर तमारा विना बीजो कोइ दीन माणसोनो उद्धार करवाने समर्थ नथी तेमज लोकमां म्हारा विना बीजो कोइ दया करवा योग्य पात्र नथी, तो पण हुं ते लक्ष्मीने मागतो नथी; परंतु हे अरिहंत ! हे मोक्षलक्ष्मीना प्रभु ! हे मंगलना एक स्थान हुं फक्त कल्याणकारी एवां मने मोक्षनुं हेतु एवां उत्तम बोधीबीजरुप रत्ननी याचना करुं छुं. २५

॥ इति रत्नाकर पचीशी ॥

सद्भोगलीलानचरोगकीला, धनागमोनोनिधनागमश्च ॥
दारानकारानरकस्यचित्ते, विचिंतितिनित्यंमयकाधमेन २०

शब्दार्थ—में अधम चित्तमां नित्य शब्दादि सारा भोगनी लीलानो विचार कर्यो पण तेथी थता रोगरूप खीलनो विचार कर्यो नहि; धन मेलववानो विचार कर्यो, पण मरणनो विचार कर्यो नहि; स्त्रीयोनो विचार कर्यो, पण नरकनी बेडीनो विचार कर्यो नहि. ॥ २० ॥

स्थितंनसाधोरहृदिसाधुवृत्तात्, परोपकारान्नयशोर्जितंच॥
कृतंनतीर्थोद्धरणादिकृत्यं, मयामुधाहारितमेवजन्म २१

शब्दार्थ—म्हारा हृदयमां उत्तम साधुवृत्ति रही नहि तेम में परोपकार माटे यश पण मेलव्यो नहि. वली तीर्थ उद्धारादि कार्य पण कर्युं नहि, तेथी में खेरेखर म्हारो जन्म फोगट गुमावी नाख्यो. ॥ २१ ॥

वैराग्यरंगो न गुरूदितेषु, न दुर्जनानां वचनेषु शांतिः ॥
नाध्यात्मलेशोममकोपिदेव, तार्यःकथंकारमयंभवाब्धिः॥

शब्दार्थ—मने गुरुए कहेलां वचनमां वैराग्यरंग न थयो, दुर्जनोनां वचनमां शांति पण न थइ. वली मने कोइ पण अध्यात्म लेश प्रगट्यो नहि; तेथी हे देव ! म्हाराथी आ संसार समुद्र शी रीते तराय ॥ २२ ॥

पूर्वेभवेकारिमयानपुण्यं, आगामिजन्मन्यपिनोकरिष्ये॥
यदीदृशोहंममतेननष्टा, भूतोद्भवद्भाविभवत्रयीश: ॥२३॥

शब्दार्थ—में पूर्वभवमां पुण्य कर्युं नथी, आवता भवने विषे पण करीश नहि के, जेथी हुं आवो दुःखी थयोछुं;माटे हे इश म्हारा भूत, भविष्य अने वर्तमान कालना त्रणे जन्म वृथा नाश पाम्या.

किंवामुधाहंबहुधासुधाभुक्, पूज्यत्वदग्रेचरितंस्वकीयं ॥
जल्पामियस्मात्त्रिजगत्स्वरूप–निरूपकस्त्वंकियदेतदत्र॥

शब्दार्थ–हे अमृतभोजी ! हुं तमारी आगल फोगट म्हा रूं चरित्र वधारे शुं कहुं ? कारण के, हे पूज्य ! तमे त्रण जगत् नां स्वरूपने निरूपण करानारा छो, तो पछी आ म्हारुं कहेवुं कोण मात्र छे ॥ २४ ॥

दीनोद्धारधुरंधरस्त्वदपरो नास्ते मदन्यः कृपा–
पात्रं नात्र जने जिनेश्वर तथाप्येतां न याचे श्रीयम् ॥
किंत्वर्हन्निदमेव केवलमहो सद्बोधिरत्नं शिवः,
श्रीरत्नाकरमंगलैकनिलयश्रेयस्करं प्रार्थये ॥२५॥

शब्दार्थ–हे जिनेश्वर तमारा विना बीजो कोइ दीन मा णसोनो उद्धार करवाने समर्थ नथी तेमज लोकमां म्हारा वि ना बीजो कोइ दया करवा योग्य पात्र नथी, तो पण हुं ते ल क्ष्मीने मागतो नथी; परंतु हे अरिहंत ! हे मोक्षलक्ष्मीना समु द्र ! हे मंगलना एक स्थान हुं फक्त कल्याणकारी एवां अने मो क्षनुं हेतु एवां उत्तम बोधीबीजरूप रत्ननी याचना करूं छुं. २५

॥ इति रत्नाकर पच्चीशी ॥

सद्भोगलीलानचरोगकीला, धनागमोनोनिधनागमश्च ।
दारानकारानरकस्यचित्ते. विचिंतिनित्यंमयकाधमेन ॥

शब्दार्थ–में अधम चित्तमां नित्य शब्दादि सारा भोगनी लीलानो विचार करयो पण तेथी थता रोगरूप खीलनो विचार करयो नहि; धन मेलववानो विचार करयो, पण मरणनो विचार करयो नहि; स्त्रीयोनो विचार करयो, पण नरकनी बेडीनो विचार करयो नहि. ॥ २० ॥

स्थितंनसाधोर्हृदिसाधुवृत्तात्. परोपकारान्नयशोऽर्जितंच ।
कृतंनतीर्थोद्धरणादिकृत्यं, मयामुधाहारितमेवजन्म ॥

शब्दार्थ–म्हारा हृदयमां उत्तम साधुवृत्ति रही नहि तेम में परोपकार करीने यश पण मेलव्यो नहि. वली तीर्थ उद्धारादि कार्य पण कर्युं नहि, तेथी में फोगट म्हारो जन्म फोगट गु[illegible] हारी नाख्यो. ॥ २१ ॥

वैराग्यरंगो न गुरूदितेषु, न दुर्जनानां वचनेषु शांतिः ॥
नाध्यात्मलेशोममकोपिदेव, तार्यःकथंकारमयंभवाब्धि ॥

शब्दार्थ–मने गुरुए कहेला वचनमां वैराग्यरंग न थयो, दुर्जनना वचनमां शांति पण न थइ. वली मने कोइ पण अध्यात्मनो लेश प्रकट्यो नहि; तेथी हे देव ! म्हाराथी आ संसार समुद्र शी रीते तराय ॥ २२ ॥

पूर्वेभवेऽकारिमयानपुण्य, मागामिजन्मन्यपिनोकरिष्ये ।
यदीदृशोऽहंममतेननष्टा, भूतोद्भवद्भाविभवत्रयीशः ॥२३॥

शब्दार्थ–में पूर्वभवमां पुण्य कर्युं नथी, आवता आवता [illegible]
[illegible]
[illegible]

किंवामुधाहंवहुधासुधाभुक्. पूज्यत्वदग्रेचरितंस्वकीयं ॥
जल्पामियस्मात्त्रिजगत्स्वरूप–निरूपकस्त्वंकियदेतदत्र॥

शब्दार्थ–हे अमृतभोजी ! हुं तमारी आगल फोगट म्हा रं चरित्र वधारे शुं कहुं ? कारण के, हे पूज्य ! तमे त्रण जगत् नां स्वरूपने निरूपण करानारा छो, तो पछी आ म्हारुं कहेवुं कोण मात्र छे ॥ २४ ॥

दीनोद्धारधुरंधरस्त्वदपरो नास्ते मदन्यः कृपा–
पात्रं नात्र जने जिनेश्वर तथाप्येतां न याचे श्रीयम् ॥
किंत्वर्हन्निदमेव केवलमहो सद्बोधिरत्नं शिवः,
श्रीरत्नाकरमंगलैकनिलयश्रेयस्करं प्रार्थये ॥२५॥

शब्दार्थ–हे जिनेश्वर तमारा विना बीजो कोइ दीन मा णसोनो उद्धार करवाने समर्थ नथी तेमज लोकमां म्हारा वि ना बीजो कोइ दया करवा योग्य पात्र नथी, तो पण हुं ते ल क्ष्मीने मागतो नथी; परंतु हे अरिहंत ! हे मोक्षलक्ष्मीना समु द्र ! हे मंगलना एक स्थान हुं फक्त कल्याणकारी एवां अने मो क्षनुं हेतु एवां उत्तम बोधीबीजरूप रत्ननी याचना करुं छुं. २५

॥ इति रत्नाकर पचीशी ॥

॥ अथ समाधि शतक ॥

येनात्माबुध्यतात्मैव, परत्वेनैव चापरम् ॥
अक्षयानंतबोधाय, तस्मै सिद्धात्मने नमः ॥१॥

शब्दार्थ—जेमणे आत्माने आत्मारूपे जाण्यो छे अने आत्माना भेद पणाए करीने शरीरने जाण्युं छे ते अक्षय अने अनंत बोधवाला सिद्ध भगवानने नमस्कार थाओ. ॥ १ ॥

जयंति यस्यावदतोऽपि भारती–
विभूतयस्तीर्थकृतोऽप्यनीहितुः ॥
शिवाय धात्रे सुगताय विष्णवे,
जिनाय तस्मै सकलात्मने नमः ॥ २ ॥

शब्दार्थ—तीर्थंकर छता पण वांच्छा रहित अने ताल्वादिकथी अक्षरोने नहि उच्चारता एवाय पण जे प्रभुनी वाणीनी संपत्तियो (अथवा वाणी अने छत्र चामरादि संपत्तियो) जयवंती वर्ते छे. ते मोक्ष पामेला, ऋध्यादिद्वारा लोकोनो उद्धार करनारा, उत्तम ज्ञानवाला, केवल ज्ञानथी सर्व लोकना व्यापक एवा, अनेक प्रकारना भवदुःखने आपनारां कर्मने जीतनारा, तेमज आत्मरूपे रहेला ते प्रभुने नमस्कार थाओ ॥ २ ॥

श्रुतेन लिंगेन यथात्मशक्ति,
समाहितांतःकरणेन सम्यक्
समीक्ष्य कैवल्यसुखस्पृहाणां,
विविक्तमात्मानमथाभिधास्ये ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—हुं म्हारी शक्ति प्रमाणे शास्त्रथी, हेतुथी अने निर्मल एवा अंतःकरणथी उत्तमरीते अनुभव कराने पछी सर्व क

मेना रहित पणाने विषे (मोक्षने विषे) सुखनी इच्छा करनारा तेनुं कर्ममलरहित जीवस्वरूप कहीश ॥ ३ ॥

बहिरंतःपरश्चेति, त्रिधात्मा सर्वदेहिषु ॥
उपेयात्तत्र परमं, मध्योपायाद्बहिस्त्यजेत् ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—सर्व प्राणीयोमां बहिरात्मा, अंतरात्मा अने परमात्मा एम त्रण प्रकारना आत्मा छे. तेमां मध्य अंतरात्माना उपायथी परमात्माने पामवुं तथा बहिरात्माने त्यजी देवो ॥४॥

बहिरात्मा शरीरादौ, जातात्मभ्रांतिरांतरः ॥
चित्तदोषात्मविभ्रांतिः परमात्मातिनिर्मलः ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—शरीर, वाणी, मन इत्यादिकने विषे आत्मा एवी जेनी भ्रांति थाय ते बहिरात्मा जाणवो. चित्त, दोष अने आत्मा तेमने विषे जेनी भ्रांति नाश पामे अर्थात् चित्तने चित्तपणाथी, दोषो ने दोषपणाथी अने आत्माने आत्मापणाथी जाणे ते अंतरात्मा जाणवो अने जेना सर्व कर्ममल क्षय थइ गया होय ते परमात्मा जाणवो. ॥ ५ ॥

निर्म्मलः केवलः शुद्धो, विविक्तः प्रभुरव्ययः ॥
परमेष्टी परात्मेति, परमात्मेश्वरो जिनः ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—कर्मना मलरहित, शरीरादि संबंध रहित, द्रव्य भाव कर्मना अभावथी अत्यंत शुद्ध, शरीर अने कर्मथी न स्पर्श पामेलो, इंद्रादिकनो स्वामी, नहि चवे तेवो, इंद्रादि देवोने वांदवा योग्य पदने विषे रहेलो, संसारी जीवोथी उत्कृष्ट. निरंतर उत्तम ऐश्वर्ययुक्त अने सर्व कर्मने उखेडी नाखनारो जे होय ते परमात्मा जाणवो ॥ ६ ॥

बहिरात्मेन्द्रियद्वारै–रात्मज्ञानपराङ्मुखः ॥
स्फुरितस्वात्मनो देहमात्मत्वेनाध्यवस्यति ॥७॥

शब्दार्थ-इंद्रिय द्वारे करीने व्हारना अर्थने ग्रहण करतो बहिरात्मा आत्मज्ञानथी अवलो मुखवालो होय छे; तेथी ते बहिरात्मा प्रगट पोताना देहने आत्मारूपज जाणे छे. ॥ ७ ॥

नरदेहस्थमात्मानमविद्वान्मन्यते नरम् ॥
तिर्यंचं तिर्यगङ्गस्थं, सुराङ्गस्थं सुरं तथा ॥८॥

शब्दार्थ-बहिरात्मा मनुष्य देहमां रहेला आत्माने मनुष्य, तिर्यंचना शरीरमां रहेला आत्माने तिर्यंच, तेमज देवतानां शरीरमां रहेला आत्माने देवता माने छे. ॥ ८ ॥

नारकं नारकांगस्थं, न स्वयं तत्वतस्तथा ॥
अनंतानंतधीशक्तिः, स्वसंवेद्योऽचलस्थितिः ॥९॥

शब्दार्थ-वली नारकीना शरीरमां रहेला आत्माने नारकी माने छे, परंतु तत्वथी तेवी रीते पोताने जाणतो नथी. परमात्मा पोते तो अनंत अनंत बुद्धि अने शक्तिवालो, पोतानेज जाणवा योग्य अने अचल स्थितिवालो छे. ॥ ९ ॥

स्वदेहसदृशं दृष्ट्वा, परदेहमचेतनम् ॥
परात्माधिष्ठितं मूढः, परत्वेनाध्यवस्यति ॥१०॥

शब्दार्थ-परमात्माए कर्मना वशथी अंगीकार करेला अने अचेतन एवा परदेहने पोताना देह सरखा जोइ मूढ एवो बहिरात्मा ते परदेहने परमात्मपणाए अंगीकार करे छे ॥ १० ॥

स्वपराध्यवसायेन, देहेष्वविदितात्मनाम् ॥
वर्त्तते विभ्रमः पुंसां, पुत्रनार्यादिगोचरः ॥ ११ ॥

शब्दार्थ-आत्मस्वरूप न जाणनारा पुरुषोने देहने विषे पोताना अने परना अध्यवसायथी पुत्र स्त्री विगेरेने गोचर एवो विभ्रम थाय छे. अर्थात् अनात्मारूप अने अपकार करनारा

एवाय पण स्त्री पुत्रादिकने अने धन धान्यादिकने पोतानो उप कार करनारा जाणे छे वली तेमना लाजने विषे संतोष अने अलाजने विषे परिताप तथा आत्मवध पण करे छे. ॥ ११ ॥

अविद्यासंज्ञितस्तस्मात्संस्कारो जायते दृढः ॥
येन लोकोऽङ्गमेव स्वं, पुनरप्यजिमन्यते ॥ १२ ॥

शब्दार्थ–ते विभ्रम थकी अविद्या नामवालो अविचल संस्कार थाय छे के, जे संस्कार करीने अविवेकी लोक जन्मांतर ने विषे पण पोतानां शरीरनेज आत्मा माने छे. ॥ १२ ॥

देहे स्वबुद्धिरात्मानं, युनक्त्येतेन निश्चयात् ॥
स्वात्मन्येवात्मधीस्तस्माद्वियोजयति देहिनम् ॥१३॥

शब्दार्थ–शरीरने विषे आत्मबुद्धि करनारो बहिरात्मा परमार्थथी ए देहे करीने आत्माने जोम्यो देछे. अर्थात् दीर्घ संसारी करेछे अने पोताना आत्माने विषे आत्मबुद्धि करनारो अंतरात्मा ते शरीरादिथी आत्माने वियोग करावे छे. अर्थात् मुक्ति पमामे छे.

देहेष्वात्मधिया जाताः, पुत्रजार्यादिकल्पनाः ॥
संपत्तिमात्मनस्ताभिर्मन्यते हा हतं जगत् ॥ १४ ॥

शब्दार्थ–देहने विषे आत्मबुद्धि करवाथी पुत्र जार्यादि कल्पना थइ छे अने ते अनात्मिय कल्पनाथी पुत्र जार्यादिने आत्मानी संपत्ति माने छे. हाय हाय! एज कारणे पोतानां स्वरूपना ज्ञानथी भ्रष्ट थयेलुं जगत् नाश पाम्युं छे. अर्थात् बहिरात्मा रूप बन्युं छे. ॥ १४ ॥

मूलं संसारदुःखस्य, देह एवात्मधीस्ततः ॥
त्यक्त्वैनां प्रविशेदंतर्बहिरव्यावृत्तेन्द्रियः ॥ १५ ॥

शब्दार्थ–शरीर एज आत्मा एवी जे बुद्धि तेज संसारना

शब्दार्थ–आत्मस्वरूपवडे करीने विषयथी निवृत्ति पामीने आत्मस्वरूपने विषे रहेला म्हारा ज्ञानस्वरूप अने उत्तम आनंदथी सुखी एवा आत्माने हुं प्राप्त थयेलो छुं. ॥ ३२ ॥

यो न वेत्ति परं देहा–देवमात्मानमव्ययम् ॥
लज्जते न स निर्वाणं, तप्त्वापि परमं तपः ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ–जे पुरुष, प्राप्त थयेला देहथी पर अने अव्यय एवा आत्माने कहेली रीते नथी जाणतो, ते उत्कृष्ट एवां तपने करतो छतो मोक्षपद पामतो नथी. ॥ ३३ ॥

आत्मदेहांतरज्ञान–जनिताह्लादनिर्वृतः॥
तपसा दुष्कृतं घोरं, जुंजानोऽपि न खिद्यते ॥३४॥

शब्दार्थ–आत्मा अने देहना भेदज्ञानथी उत्पन्न थयेला हर्षे करीने सुखी थयो छतो बार प्रकारनां तपथी घोर पापने भोगवतो एवो पण माणस खेद पामतो नथी. ॥ ३४ ॥

रागद्वेषादिकल्लोलैरलोलं यन्मनोजलम् ॥
स पश्यात्यात्मनस्तत्त्वं, स तत्त्वं नेतरो जनः ॥३५॥

शब्दार्थ–रागद्वेषादि कल्लोलथी जेनुं मन रूप जल डोलाइ गयुं नथी, ते आत्मतत्त्वने जूए छे. वली ते जोनारो पोतेज परमात्मरूप छे. बीजो परमात्म रूप नथी. ॥ ३५ ॥

अविक्षिप्तं मनस्तत्त्वं, विक्षिप्तं भ्रांतिरात्मनः॥
धारयेतदविक्षिप्तं, विक्षिप्तं नाश्रयेत्ततः ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ–रागादिकथी अपरिणामित एवुं आत्मानुं वास्तविक स्वरूप छे अने तेनाथी जे उलटुं ते आत्मानो भ्रांति आत्मरूप रहित छे. ते कारण माटे रागादिकथी अपरिणामित एवा मनने धारण करवुं, परंतु रागादिकना विकारवाला मननो आश्रय करवो नहि. ॥ ३६ ॥

अविद्याभ्याससंस्कारैरवशं क्षिप्यते मनः ॥
तदेव ज्ञानसंस्कारैः, स्वतस्तत्त्वेऽवतिष्ठते ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ–शरीरने विरज पवित्र अने स्थिर एवुं आत्मा तथा आत्मिय विगेरे जे ज्ञान ते अविद्या. ते अविद्याना अभ्यासथी उत्पन्न थयेली वासनाये करीने अवश (विषयने अने इंद्रियोने आधिन तथा आत्माने आधिन नहि) एवुं मन थाय छे. तेज मन ज्ञानसंस्कारे करीने आत्मस्वरूपने विषे रहे छे. ॥ ३७ ॥

अपमानादयस्तस्य. विक्षेपो यस्य चेतसः ॥
नापमानादयस्तस्य. न क्षेपो यस्य चेतसः ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ–जेना चित्तने रागादि परिणाम छे तेने अपमाना दि होय छे अने जेना चित्तने रागादि परिणाम नथी तेने अपमा नादि पण नथी. ॥ ३८ ॥

यदा मोहात्प्रजायेते, रागद्वेषौ तपस्विनः ॥
तदैव भावयेत् स्वस्थमात्मानं शाम्यतः क्षणात् ३९

शब्दार्थ–ज्यारे तपस्विने मोहनीय कर्मना उदयथी रागद्वेष उत्पन्न थायछे त्यारे तेज क्षणमात्रमां रागद्वेषने शांति पमाडना बना पोतानां स्वरूपमां रहेला आत्माने जाये छे. ॥३९॥

यत्र काये मुनेः प्रेम, ततः प्रच्याव्य देहिनम् ॥
बुद्धया तदुत्तमे काये. योजयेत्प्रेम नश्यति ॥ ४० ॥

शब्दार्थ–मुनिने जे पोताना अथवा परना शरीरने विषे स्नेह थाय छे ते शरीरथी बुद्धिए आत्माने पाछो फेरवीने तदुत्तम उत्तम एवा चिदानंदमय आत्म स्वरूपने विषे जोडे छे, जेथी त्यारा उपर स्नेह थतो नथी. ॥४०॥

आत्मविभ्रमजं दुःखमात्मज्ञानात्प्रशाम्यति ॥
नायतात्मत्र निर्वांति. कृत्वापि परमं तपः ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ—शरीरादिकमां आत्मा एवा विभ्रमथी थयेलुं दुःख आत्मज्ञानथी नाश पामे छे. वली आत्मस्वरूपमां असावधान एवा पुरुषो उत्कृष्ट एवुं तप करीने पण मोक्ष पामता नथी. ४१

शुभ्रं शरीरं दिव्यांश्च, विषयानभिवांछति ॥
उत्पन्नात्ममतिर्देहे, तत्त्वज्ञानी ततश्च्युतिम् ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ—शरीरने विषे उत्पन्न थयेली आत्म बुद्धिवालो अर्थात् बहिरात्मा पुरुष शुभ्र एवा शरीरने अने दिव्य एवा विषयोने इच्छे छे. तथा तत्त्वज्ञानी पुरुष शरीरनी निवृत्तिने इच्छे छे.

परत्राहंमतिः स्वस्माच्च्युतो बध्नात्यसंशयम् ॥
स्वस्मिन्नहंमतिश्च्युत्वा, परस्मान्मुच्यते बुधः ॥४३॥

शब्दार्थ—शरीरने विषे आत्मबुद्धिवालो बहिरात्मा आत्मस्वरूपथी भ्रष्ट थइने खरेखर बंधन पामे छे अने आत्मस्वरूपने विषे आत्मबुद्धिवालो अंतरात्मा शरीरादिकथी जूदो थइने मुक्ति पामे छे. ॥ ४३ ॥

दृश्यमानमिदं मूढस्त्रिलिंगमवबुध्यते ॥
इदमित्यवबुद्धस्तु, निष्पन्नं शब्दवर्जितम् ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ—बहिरात्मा आ देखाता पुरुष, स्त्री अने नपुंसक रूप त्रण लिंगने त्रिलिंगरूप माने छे अने अंतरात्मा अनादिसिद्ध अने विकल्पादिके वर्जित एवा आत्मतत्त्वनेज माने छे. ॥४४॥

जानन्नप्यात्मनस्तत्त्वं, विविक्तं भावयन्नपि ॥
पूर्वविभ्रमसंस्काराद्भ्रांतिं भूयोऽपि गच्छति ॥ ४५ ॥

शब्दार्थ—अंतरात्मा आत्मतत्त्वने जाणतो छतो तथा शरीरादिकथी जूदुं मानतो छतो पण पूर्व विभ्रमना संस्कारथी फरीने पण भ्रांति पामे छे. ॥४५॥

अचेतनमिदं दृश्य–मदृश्यं चेतनं ततः ॥
क रुष्यामि क तुष्यामि, मध्यस्थोऽहं नवाम्यतः ४६.

शब्दार्थ–आ देखातुं एवुं शरीरादि जड छे अने न देखातुं एवुं आत्मस्वरूप चैतन्यरूप छे, माटे हुं कोना उपर क्रोध अने कोना उपर संतोष करुं. तेथी हवे हुं मध्यस्थरूप थाउं छुं. ४६

त्यागादाने बहिर्मूढः, करोत्यध्यात्ममात्मवित् ॥
नांतर्बहिरुपादानं. न त्यागो निष्ठितात्मनः ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ–बहिरात्मा बाह्यवस्तुने विषे त्याग अने अभिलाष करे छे. अंतरात्मा आत्मस्वरूपने विषे त्याग अने अभिलाष करे छे, परंतु कृत कृत्य एवा परमात्माने तो अंतरात्माने विषे अभिलाष अने बहिवस्तुने विषे त्याग एमानुं कांइ नथी. ॥ ४७ ॥

युंजीत मनसात्मानं, वाक्कायाभ्यां वियोजयेत् ॥
मनसा व्यवहारं तु. त्यजेद्वाक्काययोजितम् ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ–मानसिक ज्ञानथी आत्मानुं ध्यान करवुं, पण वाणी अने कायाथी आत्माने जूदो करवो. वली मननी साथे वाणी अने कायाथी जोडाएला व्यवहारने मने करीने त्यजी देवो.

जगद्देहात्मदृष्टीनां, विश्वास्यं रम्यमेव च ॥
स्वात्मन्येवात्मदृष्टीनां, क विश्वासः क वा रतिः ४९

शब्दार्थ–शरीरने विषे आत्मदृष्टिवाला अर्थात् बहिरात्माने जगत विश्वास करवा योग्य अने मनोहर लागे छे, परंतु आत्माने विषे आत्मदृष्टिवाला अर्थात् अंतरात्माने क्यां विश्वास अने क्यां रति होय छे? अर्थात् तेने पुत्रादिकने विषे विश्वास अथवा प्रीति होती नथी. ॥४९॥

आत्मज्ञानात्परं कार्यं, न बुद्धौ धारयेच्चिरम् ॥
कुर्यादर्थवशात्किंचिद्वाक्कायाभ्यामतत्परः ॥ ५० ॥

शब्दार्थ—आत्मज्ञान विना बीजुं कार्य बहु वखत मनमां धारवुं नहि अने तेवुं जोजन व्याख्यानादिक कार्य करवुं पडे तो ते आसक्ति रहित थइने फक्त पोताना अने परना उपकारना वशथीज करवुं. ॥ ५० ॥

यत्पश्यामोन्द्रियैस्तन्मे, नास्ति यन्नियतेन्द्रियः ॥
अंतः पश्यामि सानंदं, तदस्य ज्योतिरुत्तमम् ॥५१॥

शब्दार्थ—हुं इंडियोवमे जे शरीरादिक जोउं छुं, ते म्हारुं रूप नथी, परंतु इंडियोने स्वाधिन करीने हुं म्हारी अंदर उत्तम सुखरूप अने इंडियोने अगोचर एवुं जे ज्ञान जोउं छुं, ते म्हारुं स्वरूप छे. ॥५१॥

सुखमारब्धयोगस्य, बहिर्दुःखमयात्मनि ॥
बहिरेवासुखं सौख्य–मध्यात्मं जावितात्मनः ॥५२॥

शब्दार्थ—आत्मस्वरूप जाणवामां उद्यमवंत थयेलाने बाह्य विषयमां सुख थाय छे तथा आत्मविषयमां दुःख थाय छे अने यथार्थ आत्मस्वरूप जाणेलाने बाह्यविषयमां दुःख तथा आत्मविषयमां सुख थाय छे. ॥५२॥

तद्ब्रूयात्तत्परान्पृछे–त्तदिछेत्तत्परो जवेत् ॥
येनाविद्यामयं रूपं, त्यक्त्वा विद्यामयं व्रजेत् ॥५३॥

शब्दार्थ—ते आत्मस्वरूप पोते कहेवुं, बीजाने पूछवुं, ते आत्मस्वरूपनेज इछवुं अने तेमां तत्पर थवुं के, जेथी बहिरात्मरूप त्यजी दइ आत्मस्वरूपने पमाय. ॥५३॥

शरीरे वाचि चात्मानं, संधत्ते वाक्शरीरयोः ॥
जांतोऽजांतः पुनस्तत्त्वं, पृथगेषां निबुध्यते ॥५४॥

शब्दार्थ—वाणी अने शरीरने विषे भ्रांति पामेलो बहिरा

त्मा पोताने शरीरमां अने वाणीमां आरोपण करे छे. वली यथार्थ ते स्वरूपने जाणनारो अंतरात्मा वाणीनां, शरीरनां अने आत्मानां स्वरूपने जूदा जूदा जाणे छे. ॥ ५४ ॥

न तदस्तींद्रियार्थेषु, यत्क्षेमंकरमात्मनः ॥
तथापि रमते बाल-स्तत्रैवाज्ञानभावनात् ॥५५॥

शब्दार्थ–इंद्रियार्थने विषे तेवुं कांइ नथी के, जे आत्मानुं कुशल करनार थाय. तो पण अज्ञानी बहिरात्मा ते इंद्रियोना अर्थने विषे मिथ्यात्वना संस्कारथी रमे छे. ॥ ५५ ॥

चिरं प्रसुप्तास्तमसि, मूढात्मानः कुयोनिषु ॥
अनात्मीयात्मभूतेषु, ममाहमिति जाग्रति ॥५६॥

शब्दार्थ–अनादि मिथ्यात्व संस्कार होवाने लीधे चोराशी लाख कुयोनिमां दीर्घकालथी सूतेला बहिरात्मा परमार्थथी पोताना संबंधी नहि एवा पुत्र स्त्री विगेरेने विषे ' हुं अने म्हारुं ' एम कहेता छता जागे छे. ॥ ५६ ॥

पश्येन्निरंतरं देहमात्मनोऽनात्मचेतसा ॥
अपरात्मधियाऽन्येषामात्मतत्वे व्यवस्थितः ॥५७॥

शब्दार्थ–आत्मतत्वने विषे रहेलो अंतरात्मा पोतानां शरीरने अनात्मबुद्धिथी (आ आत्मा नथी एवा विचारथी) निरंतर जूए छे तेमज बीजाओने आ परमात्मा नथी ए एवी बुद्धिथी जूए छे.

अज्ञापितं न जानंति, यथा मां ज्ञापितं तथा ॥
मूढात्मानस्ततस्तेषां, वृथा मे ज्ञापनाश्रमः ॥ ५८ ॥

शब्दार्थ–मूढात्मा जेम आत्मस्वरूप न समजाव्या छता नथी जाणतो तेमज समजाव्या छता पण नथी जाणतो, तेथी ते मूढात्माने म्हारे समजाववानो श्रमज फोगट छे. ॥५८॥

यद्बोधयितुमिच्छामि, तन्नाहं यदहं पुनः ॥
ग्राह्यं तदपि नान्यस्य, तत्किमन्यस्य बोधये ॥५९॥

शब्दार्थ–जे विकल्पमां व्याप्त थइ रहेला आत्मस्वरूपने अथवा देहादिकने समजाववानी इच्छा करुं छुं, ते हुं पोते परमार्थथी आत्मस्वरूप नथी अने वली जे हुं चिदात्मरूप छुं ते बीजाने ग्राह्यमां आवुं तेम नथी. तो पछी हुं बीजाने शा माटे आत्म तत्त्वनो बोध करुं? ॥ ५९ ॥

बहिस्तुष्यति मूढात्मा, पिहितज्योतिरंतरे ॥
तुष्यत्यन्तः प्रबुद्धात्मा, बहिर्व्यावृत्तकौतुकः ॥६०॥

शब्दार्थ–अंतरना तत्त्व विषयने विषे मोहथी ढंकाइ गयेला ज्ञानवालो बहिरात्मा शरीरादि बाह्य अर्थने विषे प्रसन्न थाय छे अने शरीरादिकने विषे प्रीति रहित एवो अंतरात्मा पोताना स्वरूपने विषे प्रसन्न थाय छे. ॥६०॥

न जानन्ति शरीराणि, सुखदुःखान्यबुद्धयः ॥
निग्रहानुग्रहधियं, तथाप्यत्रैव कुर्वते ॥ ६१ ॥

शब्दार्थ–शरीरो सुख दुःखने जाणतां नथी, तो पण बहिरात्मा एज शरीरादिकने विषे उपवासादि करवाथी निग्रह करवानी अने कुंडल कडां विगेरेथी शणगारवावडे अनुग्रह करवानी बुद्धि करे छे. ॥ ६१ ॥

स्वबुद्ध्या यावद्गृह्णीयात्, कायवाक्चेतसां त्रयम् ॥
संसारस्तावदेतेषां, भेदाभ्यासे तु निर्वृतिः ॥ ६२ ॥

शब्दार्थ–ज्यांसुधी शरीर, वाणी अने चित्त ए त्रणने आत्म बुद्धिथी ग्रहण करे त्यांसुधी संसार थाय छे अने ते त्रणना भेदनो अभ्यास करवाथी मुक्ति थाय छे. ॥६२॥

घने वस्त्रे यथात्मानं, न घनं मन्यते तथा ॥
घने स्वदेहेप्यात्मानं न घनं मन्यते बुधः ॥ ६३ ॥

शब्दार्थ–ज्ञानी पुरुष जेम मजबुत वस्त्र पहेरवाथी पोताने मजबुत मानतो नथी तेम शरीर पण मजबुत होय तोपण आत्माने मजबुत मानतो नथी. ॥६३॥

जीर्णे वस्त्रे यथात्मानं, न जीर्णं मन्यते तथा ॥
जीर्णे स्वदेहेप्यात्मानं, न जीर्णं मन्यते बुधः ॥६४॥

शब्दार्थ–ज्ञानीपुरुष जेम जीर्ण वस्त्र पहेरवाथी पोताने जीर्ण मानतो नथी तेम जीर्ण शरीर छतां आत्माने जीर्ण मानतो नथी.

नष्टे वस्त्रे यथात्मानं, न नष्टं मन्यते तथा ॥
नष्टे स्वदेहेऽप्यात्मानं, न नष्टं मन्यते बुधः ॥६५॥

शब्दार्थ–ज्ञानीपुरुष जेम वस्त्र फाटी जवाथी पोताने नाश पामेलो जाणतो नथी तेम देह नाश पाम्या छतां आत्माने नाश पामेलो मानतो नथी. ॥ ६५ ॥

रक्ते वस्त्रे यथात्मानं, न रक्तं मन्यते तथा ॥
रक्ते स्वदेहेऽप्यात्मानं, न रक्तं मन्यते बुधः ॥६६॥

शब्दार्थ–ज्ञानी पुरुष जेम वस्त्र रक्त छतां पोताने रक्त मानतो नथी तेम पोतानो देह रक्त छतां आत्माने रक्त मानतो नथी. ॥ ६६ ॥

यस्य सस्पंदमाभाति, निस्पंदेन समं जगत् ॥
अप्रज्ञमक्रियाभोगं, स कामं याति नेतरः ॥६७॥

शब्दार्थ–जेने चंचल एवुं आ जगत् जड, तेमज पदार्थनुं ज्ञान अने सुखादिकनो अनुभव न होवाने लीधे काष्ट अने पाषाण तुल्य जणाय छे, ते शांतिने पामे छे. बीजो पामतो नथी.

शरीरकंचुकेनात्मा, संवृतज्ञानविग्रहः ॥
नात्मानं बुध्यते तस्माद्भ्रमत्यतिचिरं भवे ॥ ६८ ॥

शब्दार्थ–शरीर रूप कंचवाथी ढंकाइ गयो छे ज्ञानरूपी देह जेनो एवो बहिरात्मा पोताने जाणी शकतो नथी, तेथी ते संसारमां बहु काळथी भटके छे. ॥ ६८ ॥

प्रविशद्गलतां व्यूहे, देहेऽणूनां समाकृतौ ॥
स्थितिभ्रान्त्या प्रपद्यते, तमात्मानमबुद्धयः ॥६९॥

शब्दार्थ–पेसतां अने निकळतां एवा परमाणुनां समूहरूप अने समानाकृतिवाळा देहने विषे स्थितिनी भ्रांतिथी बहिरात्मा ते देहने आत्मा माने छे. ॥ ६९ ॥

गौरः स्थूलः कृशो वाऽहमित्यङ्गेनाविशेषयन् ॥
आत्मानं धारयेन्नित्यं, केवलज्ञप्तिविग्रहम् ॥७०॥

शब्दार्थ–हुं गोरो छुं जाडो छुं अथवा पातळो छुं, एम अंग [illegible] न करतो थको फक्त ज्ञानस्वरूप शरीरवाळा आत्माने निरंतर धारण करे छे. ॥ ७० ॥

मुक्तिरेकान्तिकी तस्य, चित्ते यस्याचला धृतिः ॥
तस्य नैकान्तिकी मुक्तिर्यस्य नास्त्यचला धृतिः॥७१॥

शब्दार्थ–जेना चित्तमां अविचल आत्मस्वरूपनुं धारण छे तेने अवश्य मुक्ति प्राप्त थाय छे अने जेना चित्तमां अविचल आत्मस्वरूपनुं धारण करवा पणुं नथी तेने अवश्य मुक्ति प्राप्त थती नथी ॥ ७१ ॥

जनेभ्यो वाक् ततः स्पन्दो, मनसश्चित्तविभ्रमाः ॥
भवन्ति तस्मात्संसर्गं, जनैर्योगी ततस्त्यजेत् ॥७२॥

शब्दार्थ–मनुष्योना समागमथी वचन प्रवृत्ति थाय छे, ते

चन प्रवृत्तियो मननी व्यग्रता थाय छे अने तेथी नाना प्रकारना विकल्पो थाय छे. माटे योगी पुरुषोये माणसोनो साथे समागम त्यजी देवो. ॥ ७२ ॥

ग्रामोऽरण्यमिति द्वेधा, निवासोऽनात्मदर्शिनाम् ॥
दृष्टात्मनां निवासस्तु, विविक्तात्मैव निश्चलः ॥ ७३ ॥

शब्दार्थ–आत्मस्वरूपने न पामेलाने गाम अने अरण्य एम बे प्रकारे निवास स्थान छे. तथा आत्मस्वरूपने पामेलाने व्याकुलता रहित एवो शुद्ध आत्माज निवास स्थान छे. ॥७३॥

देहांतरगतेर्बीजं, देहेऽस्मिन्नात्मभावना ॥
बीजं विदेहनिष्पतेरात्मन्येवात्मभावना ॥७४॥

शब्दार्थ–आ देहने विषे आत्मभावना करवी एज बीजा भवनी प्राप्तिनुं कारण छे अने आत्माने विषे आत्मभावना करवी एज मोक्ष प्राप्तिनुं बीज छे. ॥७४॥

नयत्यात्मानमात्मैव, जन्म निर्वाणमेववा ॥
गुरुरात्मात्मनस्तस्मान्नान्योऽस्ति परमार्थतः ॥७५॥

शब्दार्थ–आत्मा आ देहादिकने विषे आत्मभावना वडयथी पोताने संसारमां भटकावे छे अने आत्माने विषे आत्मभावनाना वडयथी पोताने मोक्ष प्रत्ये पमाडे छे, माटे परमार्थथी आत्मानो गुरु तो आत्माज छे. बीजो कोइ नथी. ॥७५॥

दृढात्मबुद्धिर्देहादावुत्पश्यन्नाशमात्मनः ॥
मित्रादिभिर्वियोगं च, बिभेति मरणाद्भृशम् ॥७६॥

शब्दार्थ–देहादिकने विषे दृढ एवी आत्मबुद्धिवालो बहिरात्मा पोताना मरणने जोतो छतो अने मित्रादिकना वियोगने जाणतो छतो मृत्युथी बहु भय पामे छे ॥७६॥

आत्मन्येवात्मधीरंन्या, शरीरगतिमात्मनः ॥
मन्यते निर्जयं त्यक्त्वा, वस्त्रं वस्त्रांतरग्रहम् ॥७७॥

शब्दार्थ–एक वस्त्रने त्यजी दइ बीजा वस्त्रने ग्रहण करवा नी पेठे आत्माने विषे आत्मबुद्धिवालो अंतरात्मा जय रहितपणे शरीरनी परिणतिने (वाल्यादि अवस्थाने) पोताथी जूदी माने छे. अर्थात् शरीरनी उत्पत्ति अने नाशना अवसरे पोतानी उत्पत्ति अने नाश नथी मानतो. ॥७७॥

व्यवहारे सुषुप्तो यः, स जागर्त्यात्मगोचरे ॥
जागर्ति व्यवहारेऽस्मिन्सुषुप्तश्चात्मगोचरे ॥ ७८ ॥

शब्दार्थ–प्रवृत्ति निवृत्तिरूप व्यवहारमां जे सूतेलो (अतत्पर) छे ते आत्मविषयमां जागतो (तत्पर) छे अने जे प्रवृत्ति निवृत्तिरूप व्यवहारमां जागतो (तत्पर) छे ते आत्मविषयमां सूतेलो (अतत्पर) छे. ॥ ७८ ॥

आत्मानमंतरे दृष्ट्वा, दृष्ट्वा देहादिकं बहिः ॥
तयोरंतरविज्ञानादन्यासादच्युतो जवेत् ॥ ७९ ॥

शब्दार्थ–आत्माने अंदर जोइ अने शरीरादिकने बहार जोइने ते बन्नेना जेद ज्ञाननी जावनाथी मुक्त थवाय छे. ॥७९॥

पूर्वं दृष्टात्मतत्त्वस्य, विजात्युन्मत्तवज्जगत् ॥
स्वन्यस्तात्मधियः पश्चात्काष्ठपाषाणरूपवत् ॥८०॥

शब्दार्थ–प्रथम आत्मतत्त्वने जोनारा अर्थात् योगारंजी पुरुषने आ जगत् उन्मत्त समान देखाय छे अने पछी आत्मतत्त्वनो सारी रीते अन्यास करनाराने काष्ठ अने पाषाण सरखुं देखाय छे.

शृण्वन्नप्यन्यतः कामं, वदन्नपि कलेवरात् ॥
आत्मानं जावयन्निन्नं, पावनायन्न मोक्षजाक् ॥८१॥

शब्दार्थ—बीजा पासेथी अत्यंत सांभळतो अने पोते बीजा ने केहेतो छतो पण ज्यांसुधी शरीरथी आत्माने जूदो जावतो नथी त्यांसुधी मोक्षनुं पात्र थतो नथी. ॥८१॥

तथैव जावयेद्देहाद्–व्यावृत्त्यात्मानमात्मनि ॥
यथा न पुनरात्मानं, देहे स्वप्नेऽपि योजयेत् ॥८२॥

शब्दार्थ—देहथी जूदो करीने आत्माने आत्माने विषे तेवी रीते जाववो के, जेथी ते फरीथी स्वप्नामां देहने आत्मरूप न माने.

अपुण्यमव्रतैः पुण्यं, व्रतैर्मोक्षस्तयोर्व्ययः ॥
अव्रतानीव मोक्षार्थी, व्रतान्यपि ततस्त्यजेत् ८३

शब्दार्थ—हिंसादिक विकल्पोथी पाप अने अहिंसादिक विकल्पोथी पुण्य थाय छे, तथा ते बन्नेनो त्याग करवाथी मोक्ष थाय छे, तो मोक्षना अर्थीए हिंसादिकनी पेठे पुण्यादिकने त्यजी देवा.

अव्रतानि परित्यज्य, व्रतेषु परिनिष्ठितः ॥
त्यजेत्तान्यपि संप्राप्य, परमं पदमात्मनः ॥८४॥

शब्दार्थ—प्रथम हिंसादि अव्रतोने त्यजी दइ पुण्यादि व्रतने विषे सावधान थाय अने पछी आत्माना परम पदने पामीने अर्थात् वीतरागपणुं पामीने ते पुण्यादि व्रतने पण त्यजी दे. ८४

यदन्तरजल्पसंपृक्तमुत्प्रेक्षाजालमात्मनः ॥
मूलं दुःखस्य तन्नाशे, शिष्टमिष्टं परं पदम् ॥८५॥

शब्दार्थ—जे अंतर वचनना व्यापारे सहित एवी चिंतारूप जाल तेज आत्माने दुःखनुं मूल छे. माटे ते जालनो नाश थये इष्ट एवुं परमपद प्राप्त थाय छे. ॥

अव्रती व्रतमादाय, व्रती ज्ञानपरायणः ॥
परात्मज्ञानसंपन्नः, स्वयमेव परो जवेत् ॥ ८६ ॥

शब्दार्थ–हिंसादि करवावालो अव्रती हिंसा न करवारूप व्रत लइ अने पछी ते व्रत लेनारो व्रती ज्ञानमां तत्पर एवो थाय ठे. पछी ते उत्कृष्ट एवा आत्मज्ञानमां लीन थइने पोतेज परमात्मा रूप थाय ठे. ॥८६॥

लिंगं देहाश्रितं दृष्टं, देह एवात्मनो जवः ॥
न मुच्यंते जवात्तस्मात्ते ये लिंगकृताग्रहाः ॥८७॥

शब्दार्थ–जटाधारण अथवा नग्नपणुं ए विगेरे लिंग, देहने आश्रिने देखाय ठे अने देह एज आत्माने संसाररूप ठे, माटे जेन लिंगने विषे आग्रह करनारा ठे तेन ते संसारथी मूकाता नथी.

जातिर्देहाश्रिता दृष्टा, देह एवात्मनो जवः ॥
न मुच्यंते जवात्तस्मात्ते ये जातिकृताग्रहाः ॥८८॥

शब्दार्थ–जाति ए पण देहने आश्रिने देखाय ठे अने देह ठे ते आत्माने संसार ठे, माटे जेन जातिमां आग्रह करनारा ठे तेन ते संसारथी मूकाता नथी. ॥८८॥

जातिलिंगविकल्पेन, येषां च समयाग्रहः ॥
तेऽपि न प्राप्नुवंत्येव, परमं पदमात्मनः ॥ ८९ ॥

शब्दार्थ–जाति अने लिंगना जेदे करीने जेनने आगम उपर आग्रह ठे तेन पण आत्माना परम पदने पामता नथीज.

यत्त्यागाय निवर्तन्ते, जोगेन्यो यदवाप्तये ॥
प्रीतिं तत्रैव कुर्वंति, द्वेषमन्यत्र मोहिनः ॥ ९० ॥

शब्दार्थ–जे शरीरना निर्ममत्वने अर्थे पुष्पनी माला अथवा स्त्री विगेरेथी निवृत्ति पामे ठे अथवा उत्तम एवा वीतरागपणानी प्राप्तिने अर्थे निवृत्ति पामे ठे वळी ते शरीरने विषे प्रीति [illegible] वीतरागपणामां द्वेष करे ठे. तेहने मोहवाळा जाणवा.

अनंतरज्ञः संधत्ते, दृष्टिं पंगोर्यथांधके ॥
संयोगाद्दृष्टिमंगेऽपि, संधत्ते तद्वदात्मनः ॥९१॥

शब्दार्थ–जेम पांगलानी दृष्टि आंधलाने विषे धारण कराय छे तेम शरीर अने आत्माने विषे अभेदनो आग्रह करनारो पुरुष देह अने आत्माना संयोगथी आत्मानो आशय देहने विषे पण धारण करे छे. ॥ ॥ ९१ ॥

दृष्टभेदो यथा दृष्टिं, पंगोरंधे न योजयेत् ॥
तथा न योजयेद्देहे, दृष्टात्मा दृष्टिमात्मनः ॥ ९२ ॥

शब्दार्थ–पांगलानो अने आंधलानो भेद जाणनारो पुरुष जेम पांगलानी दृष्टि आंधलाने विषे न धारण करे तेम देह अने आत्मानो भेद जाणनारो अंतरात्मा पुरुष आत्मानी दृष्टि देहने विषे न धारण करे. ॥ ९२ ॥

सुप्तोन्मत्ताद्यवस्थैव, विभ्रमोऽनात्मदर्शिनाम् ॥
विभ्रमोऽक्षीणदोषस्य, सर्वावस्थात्मदर्शिनः ॥९३॥

शब्दार्थ–बहिरात्माने सुप्तावस्थानी पेठे अने उन्मत्तादि अवस्थानी पेठे विभ्रम छे. तथा बालकुमारादि लक्षणवाली सर्व अवस्थाने आत्मा एम जोनारा बहिरात्माने विभ्रमज दोष छे.

विदिताशेषशास्त्रोऽपि, न जाग्रदपि मुच्यते ॥
देहात्मदृष्टिर्ज्ञातात्मा, सुप्तोन्मत्तोऽपि मुच्यते ॥९४॥

शब्दार्थ–बहिरात्मा सर्व शास्त्रने जाणवाने लीधे जागतो छतो पण मूकातो नथी अने अंतरात्मा सुप्त [illegible] छतो पण मूकाय छे. ॥ ९४ ॥

यत्रैवाहितधीः पुंसः, श्रद्धा त[illegible] ॥
यत्रैव [illegible] श्रद्धा, चित्तं त[illegible] ॥ ९५ ॥

तान्यात्मनि समारोप्य, साक्षाएयास्ते सुखं जमः ॥
त्यक्त्वारोपं पुनर्विद्वान्, प्राप्नोति परमं पदम् ॥१०४॥

शब्दार्थ–जम एवो वहिरात्मा इंद्रियो सहित ते शरीररूप यंत्रोने आत्माने विषे आरोपण करी "हुं गोरछुं, हुं सारां नेत्र वालो छुं." एम मानीने न सुख छतां सुख माने छे अने अंतरात्मा ते आरोपने त्यजी दइ मोक्षपदने पामे छे. ॥ १०४ ॥

मुक्त्वा परत्र परबुद्धिमहंधियं च,
संसारदुःखजननीं जननाद्विमुक्तः ॥
ज्योतिर्मयं सुखमुपैति परात्मनिष्ठ–
स्तन्मार्गमेतदधिगम्य समाधितंत्रम् ॥१०५॥

शब्दार्थ–संसारथी मुक्त अने परमात्म स्वरुपनो जाण एवो पुरुष परमात्स्वरूपना जाणपणाना एकाग्रताने प्रतिपादन करनारा मोक्षमार्गना उपायरूप आ शास्त्रने पामीने शरीरादिक पदार्थमां परमात्म बुद्धिने अने संसारना दुःखने उत्पन्न करनारी अहंबुद्धिने त्यजी दइ ज्ञानमय एवां सुखने पामे छे. ॥१०५॥

॥ इति समाधि शतकं संपूर्णम् ॥



॥ अथ सज्जनचित्तवल्लभ ॥

नत्वा वीरजिनं जगत्त्रयगुरुं मुक्तिश्रियो वल्लभं,
पुष्पेषुक्षयनीतबाणनिवहं संसारदुःखापहम् ॥
वक्ष्ये भव्यजनप्रबोधजननं ग्रंथं समासादहं,
नाम्ना सज्जनचित्तवल्लभमिमं शृण्वंतु संतो जनाः १

शब्दार्थ—त्रण जगत्‌ना गुरु, मुक्तिरुप लक्ष्मीना पति, कामना बाण समूहने क्षय करनारा अने संसारनां दुःखने नाश करनारा श्री वीर प्रभुने नमस्कार करीने भव्य माणसोने ज्ञान प्रगट करनारा आ सज्जनचित्तवल्लभ नामना ग्रंथने संक्षेपथी कहुं छुं, तेने संत पुरुषो सांभलो ॥ १ ॥

रात्रिश्चंद्रमसा विनाब्जनिवहैर्नो भाति पद्माकरो,
यद्वत्पंक्तिलोकवर्जितसभा दंतीव दंतं विना ॥
पुष्पं गंधविवर्जितं मृतपतिः स्त्री चेह तद्वन्मुनिः,
चारित्रेण विना न भाति सततं यद्यप्यसौ शास्त्रवान् २

शब्दार्थ—जेम रात्री चंद्र विना, तलाव कमलोना समूह विना, सभा पंडितलोक विना, हाथी दांत विना, पुष्प गंध विना अने स्त्री पति विना नथी शोभती तेम जोके शास्त्रनो जाण एवो पण मुनि चारित्र विना शोभतो नथी ॥ २ ॥

किं वस्त्रत्यजनेन भो मुनिरसावेतावता जायते,
क्ष्वेडेन च्युतपन्नगो गतविषः किं जातवान् भूतले ॥
मूलं किं तपसः क्षमेंद्रियजयः सत्यं सदाचारता—
रागादींश्च बिभर्ति चेन्न स यतिर्लिंगी भवेत्केवलम् ३

शब्दार्थ—अरे ! वस्त्रने त्यजवाथी शुं ? आ पुरुष ए वस्त्रने त्यजी देवाथी शुं मुनि थाय ? अर्थात् न थाय. विष खरी पडेलो

अर्थात् विष रहित एवो सर्प शुं पृथ्वीने विषे थाय खरो? अर्थात् न थाय. तपनुं मूळ क्षमा, इंद्रियजय, सत्य अने सदाचारपणुं छे छता जो यति रागादिकने धारण करेछे तो ते यति नहि, परंतु लिंगधारी कहेवाय ॥ ३ ॥

किं दीक्षाग्रहणेन ते यदि धनाकांक्षा भवेच्चेतसि,
किं गार्हस्थ्यमनेन वेषधरणेनासुंदरं मन्यसे ॥
द्रव्योपार्जनचित्तमेव कथयत्यभ्यंतरस्यांगजं,
नो चेदर्थपरिग्रहग्रहमतिर्भिक्षोर्न संपद्यते ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—हे यति! जो धननी इच्छा थाय तो दीक्षा लेवाथी शुं? कारणके, ए यतिवेषने धारण करवाथी ग्रहस्थपणाने तुं शुं खोटो माने छे? द्रव्य मेलववानुं चित्तज अंतरना कामने देखाडी आपे छे अने जो अंतरनो कामविकार न होय तो साधुने धनने अने स्त्रीने ग्रहण करवानी इच्छा थतीज नथी. ॥४॥

योषापंडकगोविवर्जितपदे संतिष्ठ भिक्षो सदा,
भुंक्ष्वाहारमकारितं परगृहे लब्धं यथासंभवम् ॥
षड्आवश्यकसत्क्रियासु निरतो धर्मानुरागं वहन्,
सार्द्धं योगिभिरात्मभावनपरो रत्नत्रयालंकृतः ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—हे साधो! स्त्री, जीव तथा पशु विनाना स्थानकने विषे निरंतर रहे अने पारके घेर नहि करावेला तेमज अवसर प्रमाणे मळेला आहारने भोजन कर. वळी आत्मायी पवित्र तेमज ज्ञान, दर्शन अने चारित्ररूप त्रण रत्नोथी सुशोभित एवा योगी पुरुषोनी साथे धर्मादि राग करतो छतो छ प्रकारनी आवश्यक क्रियाने विषे तत्पर था. ॥५॥

दुर्गंधं वदनं वपुर्मलगृहं भिक्षाटनाद्भोजनम् ,
शय्या स्थंडिलभूमिषु प्रतिदिनं कट्यां न ते कर्पटम् ॥
मुंडं मुंडितमर्धदग्धशववत्त्वं दृश्यसे भो जनैः,
साधोऽद्याप्यबलाजनस्य भवतो गोष्टी कथं रोचते ६

शब्दार्थ–मुख दुर्गंधवालुं, शरीर मलनुं घर, भिक्षा माग वाथी भोजन, प्रति दिवस पृथ्वीने विषे शयन, केड उपर वस्त्र पण नहि एवुं, अर्धा शबनी पेठे माथुं मुंडेलुं. आ प्रमाणे आकृतीवाला तने हमेशां माणसो जूवे छे छता हे साधो! तने आज सुधी स्त्रीयोनी साथे वातो करवी केम रुचे छे? ॥६॥

अंगं शोणितशुक्रसंभवमिदं मेदोस्थिमज्जाकुलं.
बाह्ये माक्षिकपत्रसन्निभमहो चर्मावृतं सर्वतः ॥
नो चेत्काकवृकादिभिर्वपुरहो जायेत भक्ष्यं ध्रुवम् ॥
दृष्ट्वाद्यापि शरीरसद्मनि कथं निर्वेदना नास्ति ते ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–आ शरीर रुधिर अने वीर्यथी उत्पन्न थयुं छे. ते मज ने चरबी, हाडका अने स्नायुथी भरपुर छे. वली बहारना भागमां माखीओनी पांखोना सरखी चामडीथी चारे तरफ ढंका यलुं छे. जो आ वर्णन कर्या प्रमाणे शरीर न होय तो ते शरीर कागडा अने नार विगेरे जीवोथी आश्चर्यकारी रीते भक्षण कराय छे. तेवा शरीरने जोइने पण तने ते शरीर उपर वैराग्य केम नथी थतो.

स्त्रीणां भावविलासविभ्रमगतिं दृष्ट्वानुरागं मनाक्,
मागास्त्वं विषवृक्षपक्कफलवत्सुस्वादवंत्यस्तदा ॥
ईपत्सेवनमात्रतोऽपि मरणं पुंसां प्रयच्छंति भो.
तस्मात् दृष्टिविषाहिवत्परिहर त्वं दूरतोऽमृत्यवे

शब्दार्थ–स्त्रीयोना दि विलासनो वि

ने जोइ तुं जरा पण राग न कर. कारणके, ते फक्त जोवाने अव सरे विषवृक्षनां पाकेलां फलनी पेठे उत्तम स्वादवालो देखाय छे. परंतु हे मुनि! ते स्त्री जरापण सेवन करवाथी माणसोने मृत्यु आपे छे, माटे ते स्त्रीयोने तुं त्हारा पोतानां जीवितने माटे दृष्टि विष सर्पनी पेठे दूरथी त्यजी दे. ॥८॥

यद्यद्वांछसि तत्तदेव वपुषे दत्तं सुपुष्टं त्वया,
सार्द्धं नैति तथापि ते जडमते मित्रादयो यांति किम् ॥
पुण्यं पापमिति द्वयं च भवतः पृष्टेऽनुयायिष्यते,
तस्मात्त्वं न कृथा मनागपि महामोहं शरीरादिषु ॥९॥

शब्दार्थ–तुं जे जे वस्तुनी इच्छा करे छे ते ते वस्तु तें शरीरने आपीने तेने पुष्ट बनावी दीधुं, तोपण हे जडबुद्धि! ते शरीर त्हारी साथे आववानुं नथी. वली शुं मित्रादि आववाना छे? अर्थात् तेओ पण आववाना नथी. परंतु पुण्य अने पाप ए बन्ने त्हारी पाछल आववाना छे, माटे तुं शरीरादिकने विषे फोगट एवा महा मोह न कर. ॥ ९ ॥

अष्टाविंशतिभेदमात्मनि पुरा संरोप्य साधो वृत्तं,
साक्षीकृत्य जिनान् गुरूनपि कियत्कालं त्वया पालितम्
भंक्तुं वांछसि शीतवातविहतो भूत्वाधुना तद्वृतं,
दारिद्र्योपहतः स्ववांतमसनं भुंक्ते क्षुधार्तोऽपि किम् १०

शब्दार्थ–हे साधु! तें श्री जिनेश्वरने तथा गुरुने साक्षी करी अठाविश भेदवाला साधु व्रतने अंगीकार करीने केटलोक काल पाल्युं छे. वली हवणां ते तुं विषयरूप वायुथी हणायो छतो पछे तेने भांगवानी इच्छा करे छे. परंतु दारिद्र्यथी हणायेलो एवो पण भुख्यो माणस शुं पोताना वमन करेला पदार्थने खाय ख शे? अर्थात् न खाय. ॥१०॥

सौख्यं वाञ्छसि किं त्वया गतभवे दानं तपो वा कृतं,
नो चेत्त्वं किमिहैवमेव लभसे लब्धं तदत्रागतम् ॥
धान्यं किं लभते विनापि वपनं लोके कुटुंबीजनो–
देहे कीटकभक्षितेक्षुसदृशे मोहं वृथा मा कृथाः ॥११॥

शब्दार्थ–हे साधु! तुं देह सुखनी इच्छा करे छे? तो शुं तें पुर्वभवे दान अथवा तप कर्युं छे? जो तें दान अथवा तप नथी कर्युं तो तुं आ भवमां शुं पामवानो छे? अने सुख प्राप्त करवानी इच्छाओ जे शुभाशुभ कर्म कर्युं छे ते आ भवमां तेनी मेळेज प्राप्त थयेलुं छे. दृष्टांत कहे छे के, लोकमां कणबी लोक शुं वाव्या विना क्यारे पण धान्य पामे खरा? माटे कीडाथी भक्षण करायेला शेरडीना सरखा देहने विषे वृथा मोह न कर. ॥११॥

यत्काले लघुभांडमंडितकरो भूत्वा परेषां गृहे,
भिक्षार्थं भ्रमसे तदापि भवतो मानापमानो नहि ॥
भिक्षो तापसवृत्तितः कदशनात्किं तप्यसेऽहर्निशं,
श्रेयोर्थं किल सह्यते मुनिवरैर्बाधा क्षुधाद्युद्भवा ॥ १२ ॥

शब्दार्थ–जे अवसरे न्हानां पात्रोथी सुशोभित हाथवाळो पर लोकोनां घरने विषे भिक्षाने माटे भमे छे त्यारे पण तने मान अपमान थतुं नथी, हे साधु! तो पछी तापस वृत्तिने लीधे कुत्सित आहारथी रातदिवस शा माटे खेद करे छे? कारण उत्तम मुनिओ कल्याणने माटे क्षुधा आदिथी उत्पन्न थयेली बहु पीडाओने निश्चे सहन करे छे.

एकाकी विरतत्पनःस्थितवलिर्वृद्धो यथा स्वेच्छया,
योषामध्यगतस्त्वमेवमपि नोत्पन्नवान्मस्पृहं यत ॥
तस्मिंश्चेदभिलापता न भवतः किं श्राम्यसि सम्पदम्,
मध्ये साधुजनस्य तिष्ठसि न किं कृत्वा सदाचारताम् १३

शब्दार्थ—हे मुनि ! जेम गाडीमां जोडायेलो एक बळद पोतानी मरजी मुजब क्रीडा करे छे तेम तुं पण पोताना समूहने (मुनि समूहने) त्यजी दइ स्त्रीयोना मध्यमां आसक्त थयो थतो क्रीडा करे छे. जो कदापि त्हारे ते स्त्रीयोनी इच्छा न होय तो तुं ते हेना मध्ये निरंतर शा माटे फरे छे अने सदाचार पाळीने साधु होना समूहने विषे केम नथी रहेतो ? ॥१३॥

क्रीतान्नं नवतो नवेत्कदशने रोषस्तदा श्लाध्यते,
निक्षायां यदवाप्यते यतिजनैस्तद्भुज्यते सादरात् ॥
निक्षो जाटकसद्मसन्निजतनोः पुष्टिं वृथा मा कृथाः,
पूर्णे किं दिवसावधौ क्षणमपि स्थातुं यमो दास्यति १४

शब्दार्थ—जो त्हारे खराब जोजनमां पण वेचाथी अन्न ला यलुं पम्नतुं होय तो रोष करवो योग्य छे, परंतु मुनिजनोए निक्षामां जे अन्न मेळवाय तेज आदरथी जोजन कराय छे, माटे हे निक्षु ! नाडाना घर सरखा आ शरीरने तुं वृथा पोषण न कर. कारणके, ते शरीरनी अवधि पूर्ण थइ रहेशे त्यारे तेने यम क्षण मात्र पण तेमां रहेवा देशे नहि. ॥१४॥

लब्धान्नं यदि धर्मदानं विषये दातुं न यैः शक्यते,
दारिद्र्योपहतास्तथापि विषयासक्तिं न मुंचंति ये ॥
धृत्वा ये चरणं जिनेंद्रगदितं तस्मिन् सदा नादरा-
स्तेषां जन्म निरर्थकं गतमजाकंठे स्तनाकारवत् १५

शब्दार्थ—जो के जे गृहस्थो पोताने मळेलुं अन्न धर्मदान करवामां आपी शकता नथी, जेत्त दरिद्रथी हणाया छता पण विषयासक्तिने मूकता नथी अने जेत्त जिनराजे कहेला चारित्रने धारण करी तेने विषे आदर करता नथी. ते सर्वनो जन्म बकरीना

ना कंठे रहेला स्तननो पेठे निष्फल गयो छे. ॥१५॥

दुर्गंधं नवभिर्वपुः प्रवहति द्वारैरिमैं संततं,
संदृष्ट्वापि हि यस्य चेतसि पुनर्निर्वेदता नास्ति चेत् ॥
तस्मायद्भुवि वस्तु किदृशमहो तत्कारणं कथ्यते,
श्रीखंडादिभिरंगसंस्कृतिरियं व्याख्याति दुर्गंधतां १६

शब्दार्थ—आ शरीर नवद्वारोथी हमेशां दुर्गंधनेज वहन करे छे; ते शरीरने जोइने जे पुरुषना चित्तमां जो वैराग्य नथी थयो तो पछी आश्चर्य छे के, तेने पृथ्वी उपर बीजी कइ वस्तु वैराग्यनुं कारण कहेवाय? आ प्रत्यक्ष श्रीखंडचंदन विगेरेथी करेली अंगनी संस्कृती पण दुर्गंधनेज प्रगट करे छे. ॥१६॥

शोचंति न मृतं कदापि वनिता यद्यस्ति गेहे धनं,
तच्चेन्नास्ति रुदंति जीवनधिया स्मृत्वा पुनः प्रत्यहम् ॥
कृत्वा तद्दहनक्रियां निजनिजव्यापारचिंताकुला—
स्तन्नामापि च विस्मरंति कतिभिः संवत्सरैर्योपितः १७

शब्दार्थ—स्त्री जो घरने विषे धन होय तो मृत्यु पामेला पतिनो शोक करती नथी अने जो धन नथी होतुं तो आजीविकानी बुद्धिथी तेने दररोज वारंवार संभारीने रुदन करे छे. वली ते स्त्रीयो पतिनी उर्ध्वदेहिक क्रीया करीने पछी पोत पोतानां कामनां आकुल व्याकुल थइ छती केटलाक वर्षे तेनुं नाम पण विसरी जाय छे. ॥ १७ ॥

अन्येषां मरणं भवानगणयनस्वस्यामरत्वं सदा,
दहिन् चिंतयसींद्रियद्विपवशो भूत्वा [illegible] र ॥
अद्य श्वःपुनरागमिष्यति यमो न [illegible]
तस्मादात्महितं कुरुष्वमचिराद्धर्म [illegible] म् १८

शब्दार्थ—हे देहधारी ! तुं बीजाओनां मरणने नहि गणकार तो छतो हमेशां पोतानां अमरपणानो विचार करे छे अने तेथीज तुं इंद्रियरूप शत्रुओने वश थइ भटके छे; परंतु मृत्यु आजे आवशे अथवा काले आवशे ते तलथी जाणी शकातुं नथी, माटे तुं तरत पोताना हितकारक एवा जिनेश्वरे कहेला धर्मने आचरण कर. ॥ १८ ॥

देहे निर्ममता गुरौ विनयता नित्यं श्रुताभ्यासता,
चारित्रोज्वलता महोपशमता संसारनिर्वेदता ॥
अन्तर्बाह्यपरिग्रहत्यजनता धर्मज्ञता साधुता,
साधो साधुजनस्य लक्षणमिदं संसारविच्छेदनम् ॥१९॥

शब्दार्थ—हे साधु! शरीरने विषे निर्ममपणुं, गुरुने विषे विनयपणुं, निरंतर शास्त्रने विषे अभ्यासपणुं, चारित्रनुं उज्वलपणुं, मोटुं उपशमपणुं, संसारमां वैराग्यपणुं, अंतरना अने बाहेरना परिग्रहने त्यजवापणुं, धर्मज्ञपणुं अने साधुपणुं, आ उपर कहेलुं साधुजननुं लक्षण संसारनो नाश करनारुं छे. ॥१९॥

लब्ध्वा मानुषजातिमुत्तमकुलं रूपं च नीरोगतां,
बुद्धिं धीधनसेवनं सुचरितं श्रीमज्जिनेन्द्रोदितम् ॥
लीनार्थं वपुराद्यनर्थकमिदं स्तोकाय सौख्याय भो,
देहिन् देहसुपोतकं गुणभृतं भंक्तुं किमिच्छसि रे २०

शब्दार्थ—हे देहधारी! मनुष्यजातिने, उत्तमकुलने, रूपने, नीरोगपणाने, बुद्धिने, बुद्धिवंतनी सेवाने अने श्री जिनराजे कहेला चारित्रने पामीने, पोताने अर्थ धनने तथा शरीरादिक अनर्थ छे, ते थोडा सुखने माटे गुणथी पूर्ण एवा आ देहरूप उत्तम वहाणने भांगवाने केम इच्छा करे छे? ॥२०॥

वेतालाकृतिमर्धदग्धमृतकं दृष्ट्वा जवंतं यते,
यासां नास्ति जयं त्वया सममहो जल्पंति प्रत्युत्तरम् ॥
राक्षस्यो भुवि नो भवंति वनिता मामागता भक्षितुं,
मत्वेवं प्रपलायतां मृतिभयात् त्वं तत्र मा स्थाःक्षणम् ॥

शब्दार्थ–हे यति! वेतालना सरखी आकृतीवाला अने अर्ध दग्ध थयेला शव सरखा तने जोइ जे स्त्रीयोने भय थतो नथी, तेज स्त्रीओ तमने उत्तर आपे छे. शुं ते स्त्रीयो पृथ्वीने विषे राक्षसीयो न कहेवाय? अर्थात् कहेवाय.' ते स्त्रीओ मने भक्षण करवा आवी छे.' एम मानी तुं मृत्युना भयथी नासी जा पण त्यां क्षणमात्र रहिश नहि. ॥२१॥

मागास्त्वं युवतीगृहेषु सततं विश्वासतां संशयो–
विश्वासे जनवाच्यता भवति ते न स्यात्पुमर्थं ततः ॥
स्वाध्यानुरतो गुरूक्तवचनं चित्ते समारोपयन्,
तिष्ठ त्वं विकृतिं पुनर्व्रजसि चेद्यासि त्वमेव क्षयम् ॥२२॥

शब्दार्थ–तुं स्त्रीयोना घरने विषे निरंतर विश्वासपणुं न कर. कारणके, विश्वास करवाथी संशय अने लोकमां निंदा थाय छे अने तेथी त्हारो कांइ पुरुषार्थ थवानो नथी. माटे तुं गुरुनां कहेलां वचनने चित्तमां धारण करी भणवा भणाववामां आसक्त थतो रहे. वली जो तुं विकार पाम्यो तो निश्चे नाश पामीश.

किं संस्कारशतेन विट् जगति भो कास्मीरजं जायते,
किं देहःशुचितां व्रजेदनुदिनं प्रक्षालनादंजसा ॥
संस्कारो नखदंतवक्त्रवपुषां साधो त्वया युज्यते,
नाकामी किल मंडनप्रिय इति त्वं सार्थकं मा कृथाः ॥

शब्दार्थ–हे मुनि! जगत्‌मां सेंकडों उपायोथी पण शुं वि

था होय ते कंकु थाय खरुं? अथवा हमेशां डांकडोवाग प्रयत्नव
धोवाथी शरीर शुं पवित्रपणाने पामे? माटे त्हारे नख उतारव
दांत साफ करवा, मुख साफ राखवुं अथवा शरीर धोवुं विगे
संस्कार करवा योग्य नथी? तो 'तुं शुं अकामी नथी? अथव
मंमनप्रिय छे?' ए वचनने तुं सार्थक न कर. ॥२३॥

आयुष्यं तव निद्रयार्द्धमपरं चायुस्त्रिभेदादहो,
बालत्वे जरया किपद्व्यसनतो यातीति देहिन् वृथा।
निश्चित्यात्मनि मोहपासमधुना संछिद्य बोधासिना,
मुक्तिश्रीवनितावशीकरणसच्चारित्रमाराधय ॥ २४ ।

शब्दार्थ—हे देहिन्! त्हारुं अर्धुं आयुष्य निद्रामां चाल्
जाय छे अने बाकीनुं अर्धुं त्रण भेदथी चाल्युं जाय छे ते त्र
भेदमां केटलुंक बाल्यावस्थामां, केटलुंक वृद्धावस्थामां अने के
लुंक विषयादिव्यसनमां फोगट जाय छे. आ प्रमाणे तुं आत्मां
विषे निश्चय करी हवणां बोधरूप खड्गथी मोह पासने कापी न
खी मुक्ति श्री रमणीने वशी करण एवा उत्तम चारित्रने आराध.

वृत्तैर्विंशतिभिश्चतुर्भिरधिकैः सल्लक्षणेनान्वितः,
ग्रंथं सज्जनचित्तवल्लभमिमं श्रीमल्लिषेणोदितम् ॥
श्रुत्वात्मेंद्रियकुंजरान्समटतो रुंधंतु ते दुर्जयान्,
विद्वांसो विषयाटवीषु सततं संसारविच्छित्तये ॥ २५ ॥

शब्दार्थ—श्री मल्लिषेण गुरुए उत्तम लक्षणवाला चोवीश
काव्योवडे कहेला आ सज्जनचित्तवल्लभ नामना ग्रंथने सांभळी
ने ते पूर्वे कहेला संत पुरुषो संसारनो छेद करवा माटे विषयरूप
अरण्यमां भटकता एवा दुर्जय इंद्रियरूप गजोने वश करो. २५

॥ इति सज्जनचित्तवल्लभ संपूर्ण ॥

॥ अथ श्री वीरजिन स्तवन ॥

जइज्जा समणे भयवं, महावीरे जिणुत्तमे ॥
लोगनाहे सयंबुद्धे, लोगंतिय विबोहिए ॥ १ ॥
बच्छरं दिन्नदाणोहे, संपूरियजणासए ॥
नाणत्तयसमाउत्ते, पुत्ते सिद्धत्थराइणो ॥ २ ॥
चिच्चा रज्जं च रट्ठं च, पुरं अंतेउरं तहा ॥
निक्खमित्ता आगाराओ, पव्वइए अणगारियं ॥ ३ ॥
परीसहाणं नो भीए, भेरवाणं खमाखमे ॥
पंचहा समिए गुत्ते, बंभयारी अकिंचणे ॥ ४ ॥
निम्ममे निरहंकारे, अकोहे माणवज्जिए ॥
अमाए लोभविमुक्के, पसंते छिन्नबंधणे ॥ ५ ॥
पुक्खरंवा अलेवेय, संखोइव निरंजणे ॥
जीवेवा अप्पडिग्घाए, गयणंव निरासए ॥ ६ ॥
वाउव्व अप्पडिबद्धे, कुम्मोवा गुत्तइंदिए ॥
विप्पमुक्के विहंगव्व, खग्गिसिंगंव एगगे ॥ ७ ॥
भारुंडेवा पमत्तेय, वसहेवा जाय थामए ॥
कुंजरोव्व सोंडीरे, सीहोवा दुद्धरिसए ॥ ८ ॥
सायरोव्व गंभीरे, चंद इव सोमलेसए ॥
सूरोवा दित्त तेयस्स, हेमंवा जाय रूवए ॥ ९ ॥
सव्वं सहे धरित्तिव्व, सायरंवुव्व सउहे ॥
सुहुहुय हुयासुव्व, जलमाणेय तेयसा ॥ १० ॥
वासी चंदण कप्पेय, समाणे लोट्ठु कंचणे ॥
समे पूया वमाणसु, समे मोक्खे भवे तहा ॥
नाणेणं दंसणेणं च, चरित्तेण मणुत्तरे ।
अ... ...रेण, महव्वए

लाघवेणं च खंतीए, गुत्ती मुत्ती अणुत्तरे ॥
संजमेण तवेणंच, संवरेणं मणुत्तरे ॥ १३ ॥
अणेग गुण सपाइन्ने, धम्म सुक्काण झायए ॥
धाइक्कएण संजाए, अणंतवर केवली ॥ १४ ॥
वीयराएय निग्गंथे, सव्वन्नु सव्वदंसणे ॥
देविंद दाणविंदेहिं निव्वत्तिय महामहे ॥ १५ ॥
सव्व भासाणुगाएय, भासाए सव्व संसए ॥
जुगवं सव्वजीवाणं, छिंदित्तु जिणगोयरे ॥ १६ ॥
हिए सुहेय निस्सेय, कारए सव्व पाणिणं ॥
महल्लपाणि पंचेव, पन्नविता सज्जावणे ॥ १७ ॥
संसारसायरे बुड्ड, जंतुसंताण तारए ॥
नाणुन्न देसियं तित्थ, संपत्ते पंचमं गई ॥ १८ ॥
से जिणे अपत्ते निव्व, अरूवे अयरामरे ॥
सम्मत्तदंसणनाणसुहे, नाणवीरे जगज्जिणे ॥ १९ ॥
से जिणे वद्धमाणेय, महावीरे महायसे ॥
अणंतसुहसिद्धाणं, अम्हाणं देउ निव्वुइ ॥ २० ॥
इय परम समाणा संथुओ वीरनाहो,
परमसममहाणा देउ तुम्हत्तणं मे ॥
समसमसुहकंदेसु मग्गणिज्जो जणेसु,
कणय हयवंदेसु मनु मिलंमुयाति ॥ २१ ॥

॥ इति श्रीवीरजिन स्तवन ॥

॥ अथ श्रीमंधरस्वामीनुं स्तवन ॥

केवलनाण सणाहं, विदेहवासंमि संठियं धीरं ॥
सुरमणुअनमियचलणं, सीमंधरसामियं वंदे ॥१॥
जय सीमंधर सामिय, भवियमहाकुमुयबोहणमयंक ॥
समरामि ते महायस, इह चित्त भारहे वासे ॥ २ ॥
सीमंधरदेव तुमं, गामागरपट्टणेसु विहरंतो ॥
धम्मं कहेसि जेसिं, सहलं चिय जीवियं तेसिं ॥ ३ ॥
किं नयवं मह कम्मं, समठियं तारिसेहिं पावेहिं ॥
जं नहजात्त जम्मो. तुह पयमूले मया कालं ॥ ४ ॥
चिंतामणि सारिच्छो, अहवा कप्प मच्च सुहफलउ ॥
अप्पुव्व कामधेणू, नहु नहु ताणंपि अहीयरं ॥ ५ ॥
वज्जइ तुह सामिन्नं, तिहूयण मझंमि नवण अमस्स ॥
जम्हा एरिस रिद्धी, न हु दीसइ सेसपुरिसस्स ॥ ६ ॥
कइया हं सामि तुमं, सिंहासणसंठियं सपरिवारं ॥
धम्मं वागरमाणं, पिच्छस्सं नियनयणेहिं ॥ ७ ॥
पुज्जंतु ते मणोरह. निश्चं जे हिययसंठिया मज्झ ॥
पावइ रंकोवि फलं, संपन्ने कप्परुखंमि ॥ ८ ॥
निश्चं झाएमि अहं, तुह पयकमलेसु निम्मले धीर ॥
तह कुरु देव पसायं, जह दरिसायं ममं देसि ॥ ९ ॥
ते धन्ना कयपुन्ना, देवा देवीय माणवा सव्वे ॥
जे संसय बुच्छेयं, करंति तुहपायमूलंमि ॥ १० ॥
अहयं पुन्नविहूणो, ठाणे ठाणंमि संसया वस्मित्त ॥
इठामि विसूरंतो, जनमझो नाणपरिहीणो ॥ ११ ॥
गुणसु पसायं गुरुयं, बहुनीसंसयाण जह होइ
जम्हा महापु... ...भाव वच्छला ...

लाघवेणं च खंतीए, गुत्ती मुत्ती अणुत्तरे ॥
संजमेण तवेणंच, संवरेणं मणुत्तरे ॥ १३ ॥
अणेग गुण सयाइन्ने, धम्म सुक्काण झायए ॥
घाइक्कएण संजाए, अणंतवर केवली ॥ १४ ॥
वीयराएय निग्गंथे, सव्वन्नु सव्वदंसणे ॥
देविंद दाणविंदेहिं; निव्वत्तिय महामहे ॥ १५ ॥
सव्व भासाणुगाएय, भासाए सव्व संसए ॥
जुगवं सव्वजीवाणं, छिंदित्त जिन्नगोयरे ॥ १६ ॥
हिए सुहेय निस्सेय, कारए सव्व पाणिणं ॥
महव्वयाणि पंचेव, पन्नविता सन्नावणे ॥ १७ ॥
संसारसायरं घुह, जंतुसंताण तारए ॥
जाणुव्व देसियं तिथ्थं, संपत्ते पंचमं गइं ॥ १८ ॥
से सिवे अयले निश्चे, अरुंवे अयरामरे ॥
कम्मप्पपंचनम्मुके, जगवीरे जणजिणे ॥ १९ ॥
से जिणे वद्धमाणेय, महावीरे महायसे ॥
असंखदुक्खखिन्नाणं, अम्हाणं देव निव्वुइ ॥ २० ॥
इय परम पमोया संथुन्ने वीरनाहो,
परमसमसणा देव तुल्लनणं मे ॥
असमसुहदुहेसु सम्गसिद्धी भवेसु,
कणयकयवरेसु सत्तु मित्तेसुयावि ॥ २१ ॥

॥ इति श्रीवीरजिन स्तवन ॥

॥ अथ श्रीमंधरस्वामीनुं स्तवन ॥

केवलनाण सणाहं, विदेहवासंमि संठियं धीरं ॥
सुरमणुअनमियचलणं, सीमंधरसामियं वंदे ॥१॥
जय सीमंधर सामिय, भवियमहाकुमुयबोहणमयंक ॥
समरामि तं महायस, इह ठिउ भारहे वासे ॥ २ ॥
सीमंधरदेव तुमं, गामागरपट्टणेसु विहरंतो ॥
धम्मं कहेसि जेसिं, सहलं चिय जीवियं तेसिं ॥ ३ ॥
किं जययं मह कम्मं, समवियं तारिसेहिं पावेहिं ॥
जं नहजाउ जम्मो. तुह पयमूले मया काले ॥ ४ ॥
चिंतामणि सारिच्छो, अहवा कप्प मच्च गुहफलउ ॥
अप्पुव्व कामधेणू, नहु नहु ताणंपि अहीयरं ॥ ५ ॥
दुल्लहं तुह सामित्तं, तिहूयण मज्झंमि नवण अम्हस्स ॥
जम्हा एरिस रिद्धी, न हु दीसइ सेसपुरिसस्स ॥ ६ ॥
कइया हं सामि तुमं, सिंहासणसंठियं सपरिवारं ॥
धम्मं वागरमाणं, पिच्छस्सं नियनयणेहिं ॥ ७ ॥
पुज्जंतु ते मणोरह, निच्चं जे हियमसंठिया मज्झ ॥
पावइ कोवि फलं, संपन्ने कप्परुक्खंमि ॥ ८ ॥
निच्चं झाएमि अहं, तुह पयकमलेसु निम्मले धीर ॥
तह कुरु देव पसायं, जह दरिसायं ममं देसि ॥ ९ ॥
ते धन्ना कयपुन्ना, देवा देवीय माणवा सव्वे ॥
जे संसय वुच्छेयं, करंति तुहपायमूलंमि ॥ १० ॥
अहयं पुन्नविहूणो, ठाणे ठाणंमि संसया वच्छिउ ॥
इच्छामि विसूरंतो, बहुमन्नो नाणपरिहीणो ॥ ११ ॥
कुणसु पसायं गुरुयं, वच्छनीसंगयाण जह होइ ॥
जम्हा महाणुभावा, सरणागय वच्छला हुंति ॥ १२ ॥

लाघवेणं च खंतीए, गुत्ती मुत्ती अणुत्तरे ॥
संजमेण तवेणंच, संवरेणं मणुत्तरे ॥ १३ ॥
अणेग गुण सयाइन्ने, धम्म सुक्काण झायए ॥
घाइक्कएण संजाए, अणंतवर केवली ॥ १४ ॥
वीयराएय निग्गंथे, सव्वन्नु सव्वदंसणे ॥
देविंद दाणविंदेहिं; निव्वत्तिय महामहे ॥ १५ ॥
सव्व भासाणुगाएय, भासाए सव्व संसए ॥
जुगवं सव्वजीवाणं, छिंदित्ति जिणगोयरे ॥ १६ ॥
हिए सुहेय निस्सेय, कारए सव्व पाणिणं ॥
महव्वयाणि पंचेव, पन्नवित्ता सन्नायणे ॥ १७ ॥
संसारसायरं बुह, जंतुसंताण तारए ॥
आणुक्व देसियं तिथ्थ, संपत्ते पंचमं गइं ॥ १८ ॥
से सिवं अयले निरुए, अरुवे अयरामरे ॥
कम्मपवंचवम्मुक्के, तणवीरे जएजिणे ॥ १९ ॥
से जिणे वद्धमाणेय, महावीरे महायसे ॥
असंखदुक्खखिन्नाणं, अम्हाणं देउ निव्वुइं ॥ २० ॥
इय परम पमोया संथुओ वीरनाहो,
परमसमसहाणा देउ तुम्हणं मे ॥
असमसुहसमिद्धो सग्गसिद्धी जवेणु,
कणयकणयवंसु मनु सिद्धिगुवाणि ॥ २१ ॥

॥ इति श्रीवीरजिन स्तवन ॥

—

॥ अथ श्रीमंधरस्वामीनुं स्तवन ॥

केवलनाण सणाहं, विदेहवासंमि संठियं धीरं ॥
सुरमणुअनमियचलणं, सीमंधरसामियं वंदे ॥१॥
जय सीमंधर सामिय, भवियमहाकुमुयबोहणमयंक ॥
ममरामि ते महायस, इह ठिओ भारहे वासे ॥ २ ॥
सीमंधरदेव तुमं, गामागरपट्टणेसु विहरंतो ॥
धम्मं कहेसि जेसिं, सहलं चिय जीवियं तेसिं ॥ ३ ॥
किं जणवं मह कम्मं, समठियं तारिसेहिं पावेहिं ॥
जं नहजाओ जम्मो, तुह पयमूले मया कालं ॥ ४ ॥
चिंतामणि सारिच्छो, अहवा कप्प मव्व सुहफलओ ॥
अप्पुव्व कामधेणू, नहु नहु ताणंपि अहीयरो ॥ ५ ॥
वज्जइ तुह सामित्तं, तिहूयण मज्झंमि नत्थि अमरस्स ॥
जम्हा एरिस रिद्धी, न हु दीसइ सेसपुरिसस्स ॥ ६ ॥
कइया हं सामि तुमं, सिंहासणसंठियं सपरियारं ॥
धम्मं वागरमाणं, पिच्छस्सं नियनयणेहिं ॥ ७ ॥
पुज्जंतु ते मणोरह, निच्चं जे हिययसंठिया मज्झ ॥
पावइ रंकोवि फलं, संपत्ते कप्परुक्खंमि ॥ ८ ॥
निच्चं झाएमि अहं, तुह पयकमलेसु निम्मलं धीर ॥
तह कुरु देव पसायं, जह दरिसावं ममं देसि ॥ ९ ॥
ते धन्ना कयपुन्ना, देवा देवीय माणवा मव्वे ॥
जे संसय पुच्छयं, करंति तुहपायमूलंमि ॥ १० ॥
अहयं पुन्नविहूणो, ठाणे ठाणंमि संसया बहिओ ॥
इच्छामि विहरंतो, बहुमन्नो नाणपरिहीणो ॥ ११ ॥
कुणसु पसायं गुरुयं, बहुलोतंसयाण जह होइ ॥
जम्हा महाणुभावा, सरणागय वच्छला हुंति ॥ १२ ॥

कम्मवसेणय ग्रहयं, भारहवासंमि जइवि चिठामि ॥
तहवि तुमं महियए, रयणायर चंदणाएण ॥ १३ ॥
तं पहु तं मम्न गुरु, तं देवो बंधवो तुमं चेव ॥
गुरु संसारगयाणं, जीवाणं हुज्ज तं सरणं ॥ १४ ॥
संसारजलदिमझे, निबुड्डमाणेहिं नव्व सत्तेहिं ॥
पइदिवसं समरिज्जइ, सीमंधर सामि पयकमलं ॥ १५ ॥
जइ इच्छह परमपयं, निव्वंन्ना तह्य जम्ममरणाणं ॥
ता समरह जिणनाहं, विदेहवासंमि विहरंतं ॥ १६ ॥
जो निच्चं नव्वाणं, विदेहवासंमि सामि विहरंतो ॥
स धम्मदेसणाए, मिछत्त पणासणं कुणइ ॥ १७ ॥
पच्चूसे मझण्हे, संझा समयंमि सव्वकालंमि ॥
सीमं धर तिछयरं, वंदेहं परम नत्तोए ॥ १८ ॥
पंच घणुस्सय माणो, चउरासी पुव्वलख वरिसाऊ ॥
सो सीमंधरनाहो, अणंतनाणी सया जयन्नु ॥ १९ ॥
मुणिसुव्वय नमि तिछयर, अंतरे रज्जलच्छि विछइं ॥
छंम्मिय पव्वन्नदिरकं, सीमंधर सामियंवंदे ॥ २० ॥
इय सीमंधरनाहो, थुन्न मए नत्तिरायकलिएणं ॥
सासय सुहक जणगं, जयनाहो होउ नवियाणं ॥ २१ ॥

॥ इति श्रीमंधरजिन स्तवनं ॥

॥ अथ श्रीगुरु पदक्षणा ॥

गोअम सुहम्म जंबू, पत्नवो सिज्जंभवाइ आयरिआ ॥
अन्नेवि जुगप्पहाणा, पइं दिठे सुगुरु ते दिठा ॥ १ ॥
अज्ज कयत्थो जम्मो, अज्ज कयत्थं च जीवियं मझ ॥
जेण तुह दंसणामय–रसेण सत्ताइं नयणाइं ॥ २ ॥
सो देसो तं नगरं, तं गामो सोअ आसमो धन्नो ॥
जब पहु तुम्हपाया, विहरंति सयावि सुपसन्ना ॥ ३ ॥
हत्था ते सुकयत्था, जे किइकम्मं कुणंति तुह चलणे ॥
वाणी बहुगुण खाणी, सुगुरु गुणा वन्निआ जीए ॥ ४ ॥
अवयरिया सुरधेणू, संजाया महगिहे कणवुठ्ठी ॥
दारिदं अज्जगयं, दिठे तुह सुगुरु मुहकमले ॥ ५ ॥
चिंतामणि सारिच्छं, सम्मत्तं पावियं मए अज्ज ॥
संसारो दूक्खिउ, दिठे तुह सुगुरुमुहकमले ॥ ६ ॥
जा रिद्धी अमरगणा, भुंजंता पियतमाई संजुत्ता ॥
साघुण किन्नियमित्ता, दिठे तुह सुगुरु मुहकमले ॥ ७ ॥
मणवयकाएहिं मए, जं पावं अज्जियं सया नयवं ॥
तं सव्वं अज्ज गयं, दिठे तुह सुगुरुमुहकमले ॥ ८ ॥
दुलहो जिणिंदधम्मो, दुलहो जीवाण माणुसो जम्मो ॥
लद्धेपि मणुअजम्मे, अइ दुलहा सुगुरु सामग्गी ॥ ९ ॥
जब न दीसंति गुरु, पच्चसे उठिएहिं सुपसन्ना ॥
तब कहं जाणिज्जइ, जिणवयणं अमिअसारिच्छं ॥ १० ॥
जह पाउसंमि मोरा, दिणयर उदयंमि कमलवणसंडा ॥
विहसंति तेमतच्चिय, तह अम्हे दंसणे तुम्ह ॥ ११ ॥
जइ सरइ सुरहि वच्छो, वसंतमासं च कोईला सरई ॥
वंझ सरई गइंदो, तह अम्ह मणं तुमं सरई ॥ १२ ॥

[illegible], [illegible] ॥
[illegible], [illegible] ॥ १३ ॥
अहो ते निज्जिओ कोहो, अहो माणो पराजिओ ॥
अहो ते निरक्किया माया, अहो लोहो वसीकओ ॥ १४ ॥
अहो ते अज्जवं साहु, अहो ते साहु मद्दवं ॥
अहो ते उत्तमा खंती, अहो ते मुत्ति उत्तमा ॥ १५ ॥
इहंसि उत्तमो भंते, पच्छाहोहिसि उत्तमो ॥
लोगुत्तमुत्तमं ठाणं, सिद्धिं गच्छसि नीरओ ॥ १६ ॥
आयरिय नमुक्कारो, जीवं मोएइ भवसहस्साओ ॥
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो बोहिलाभाए ॥ १७ ॥
आयरियनमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो ॥
मंगलाणं च सव्वेसिं, तइयं हवइ मंगलं ॥ १८ ॥

॥ इति श्री गुरु प्रदक्षणा समाप्त ॥

॥ अथ जीवानुशास्ति कुलक ॥

रे जीव किं न बुज्झसि, चउगइसंसारसायरे घोरे ॥
भमीओ अणंतकाले, अरहट्ट घडिव्व जलमज्झे ॥ १ ॥
रे जीव चिंतसि तुमं, निमित्तमित्तं परो हवइ तुज्झ ॥
असुहपरिणामजणियं, फलमेयं पुव्वकम्माणं ॥ २ ॥
रे जीव कम्मभरिअं, अवएसं कुणसि मुढ विवरिअं ॥
दुग्गयगमणमणाणं, एसच्चिय हियइ परिणामो ॥ ३ ॥
रे जीव तुमं सोसु, सवणा आऊण सुणसु महवयणं ॥
जं सुक्खं नइ पाविसि, ता धम्मविवज्जिअ नूणं ॥ ४ ॥
रे जीव मा विसायं, जाहितुमं पिच्छिऊण पररिद्धी ॥
धम्मरहियाण कुओ, संपज्जइ विवहसंपत्ती ॥ ५ ॥

रेजीव किं न पिच्छसि, झिज्जंतं जुव्वणं धणं जीअं ॥
तहविहु निग्घं न कुणसि, अप्पहियं पवरजिणधम्मं ॥ ६ ॥
रेजीव माणवज्जिअ, साहस परिहीण दीण गयलज्ज ॥
अज्जवि किं वीसत्थो, नहु धम्मे आयरं कुणसि ॥ ७ ॥
रेजीव मणुयजम्मं, अकयत्थं जुव्वणं च वोलीणं ॥
नय चिन्नं उग्गतवं, नय लच्छी माणिआ पवरा ॥ ८ ॥
रेजीव किं न कालो, तुज्झ गओ परमुहं नीयंतस्स ॥
जं इच्छिअं न पत्तं. तं असिधारावयं चरसु ॥ ९ ॥
इयमामुह सुमणोणं. तुज्झ गिरी जा परस्स आइन्ना ॥
ता अत्थरेण गिन्हसु. संवेगाय विहिपयत्तेण ॥ १० ॥
जीवं मरणेसमं. वाड्ढइ जुव्वण सह जराए ॥
रिद्धी विणास सहिया, हरिस विसाओ न य कायव्वो ॥ ११ ॥

॥ इति जीवानुशास्ति कुलक समाप्त ॥



॥ श्री प्रकरणमाला समाप्त. ॥

शुद्धिपत्र.

पृष्ठ.	लीटी.	अशुद्ध.	शुद्ध.
८	५	गप्रायां	गप्रया
१४	६	य	
१६	४	अनुष्टुम	अनुष्टुप्
२८	१४	मागणा	मार्गणा
४९	२३	अमत्रीस	अडतालीस
५३	१	पाच	पाच
७७	२१	बने ने	बनो
१४५	१३	इच्या	इच्छा
१४०	१	थयेला	थयेलानी
१४९	२२	धन	घना
१६४	३	दम्को	देम्को
१७३	१६	श्रेसी	श्रेसी
१८३	७	सील	शील
१८३	८	निड्ना	निड्ाना
१८७	११	कियद्बुवे	कियद्बुवे
१९०	८	रहृदि	हृदि
१९०	८	वलि	वली
१९१	८	श्रीयम्	श्रीयम्
१९२	१९	समाहितातः	समाहितांतः
१९९	८	यतोन्नीत	यतोऽन्नीत
१९७	१२	न्नय	अन्नय
२११	२	कद्देलो	कद्देतो
२२०	१८	तद्वृतं	तद्व्रतं

आ पुस्तक मळवाना ठेकाणां.

शा. भोगीलाल ताराचंद ठे० हाजापटेलनी पोलमां लांबेसर.

शा. वालाभाइ त्रीकमलाल ठे० गांधीरोड उपर पुस्तकोनी दुकाने

पा. झवेरभाइ उमेदभाइ ठे० रीचीरोड उपर पुस्तकोनी दुकाने

शा. जेशंगलाल दलसुखभाइ ठे० देवशाने पाडे.

अमदावाद.

आ पुस्तक मळवाना ठेकाणां.

शा. भोगीलाल ताराचंद ठे० हाजापटेलनी पोळमां लांबेसर.

शा. बालाभाइ छीकमलाल ठे० रीचीरोड उपर पुस्तकोनी दुकाने

पा. झवेरभाइ उमेदभाइ ठे० रीचीरोड उपर पुस्तकोनी दुकाने

शा. जेठालाल दलसुखभाइ ठे० देवशाने पाडे.

अमदावाद.

आ पुस्तक मळवाना ठेकाणां.

शा. भोगीलाल ताराचंद ठे० हाजापटेलनी पोळमां लांबेसर.

शा. बालाभाइ त्रीकमलाल ठे० रीचीरोड उपर पुस्तकोनी दुकाने

पा. झवेरभाइ उमेदभाइ ठे० रीचीरोड उपर पुस्तकोनी दुकाने

शा. जेगलाल दलसुखभाइ ठे० देवशाने पाडे.

अमदावाद.

आ पुस्तक मळवाना ठेकाणां.

शा. भोगीलाल ताराचंद ठे० हाजापटेलनी पोळमां सांकेसर.

शा. बालाभाइ त्रीकमलाल ठे० रीचीरोड उपर पुस्तकोनी दुकाने

पा. झवेरभाइ उमेदभाइ ठे० रीचीरोड उपर पुस्तकोनी दुकाने

शा. जेशंगलाल दलसुखभाइ ठे० देवशाने पाडे.

अमदावाद.

आ पुस्तक मळवाना ठेकाणां.

शा. भोगीलाल ताराचंद ठे० डाजापटेलनी पोळमां लांबेसर.

शा. बालाभाइ भीकमलाल ठे० रीचीरोड उपर पुस्तकोनी दुकाने

पा. झवेरभाइ उमेदभाइ ठे० रीचीरोड उपर पुस्तकोनी दुकाने

शा. जेगलाल दलसुखभाइ ठे० देवशाने पाडे.

अमदावाद.

आ पुस्तक मलवाना ठेकाणां.

शा. भोगीलाल ताराचंद ठे० दाजापटेलनी पोलमां लांबेसर.

शा. बालाभाइ त्रीकमलाल ठे० रीचीरोड उपर पुस्तकोनी दुकाने

पा. झवेरभाइ उमेदभाइ ठे० रीचीरोड उपर पुस्तकोनी दुकाने

शा. जेगलाल दलसुखभाइ ठे० देवशाने पाडे.

अमदावाद.